पृथ्वीराज रासो की भाषा

नामवर सिंह

सरस्वती प्रेस, बनारस

प्रकाशक
सरस्वती प्रेस, बनारस
प्रथम सस्करण, १९५६

मूल्य ६)

मुद्रक
राधाकान्त खण्डेलवाल
खडेलवाल प्रेस, भेलू पुर बनारस

निवेदन

इस निबंध में पृथ्वीराज रासो की भाषा पर यथासंभव सांगोपांग अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। अभी तक इस विषय पर प्रायः फुटकल विचार ही व्यक्त किए गए है, व्यवस्थित विवेचन नहीं हुआ है। प्रस्तुत निबंध में रासो की भाषा के ध्वनिविचार, रूपविचार, वाक्यविन्यास, शब्द-समूह आदि सभी पक्षों पर विचार किया गया है।इस प्रकार इस महत्त्वपूर्ण ग्रंथ की भाषा पर पहली बार व्यवस्थित विचार किया जा रहा है।

वर्तमान स्थिति में जब कि रासो के सुलभ संस्करण संतोषप्रद नहीं हैं और वैज्ञानिक संस्करण अभी भी होने को है, भाषावैज्ञानिक अध्ययन के लिए सर्वोत्तम मार्ग यही है कि प्राचीनतम पांडुलिपियों में से किसी एक को आधार बना लिया जाय। इस निबंध में धारणोज की लघुतम रूपान्तर वाली प्रति को आधार माना गया है क्योंकि एक तो इसका प्रतिलिपि काल (सं० १६६७ वि०) अब तक की प्राप्त प्रतियों में प्राचीनतम है और दूसरे, इसमें भाषा के रूप भी अपेक्षाकृत प्राचीनतर है। इसके साथ ही मैने नागरी प्रचारिणी सभा में सुरक्षित वृहत् रूपान्तर की उस प्रति से भी सहायता ली है जिसका प्रतिलिपि-काल संपादकों के अनुसार सं० १६४० या' ४२ है। सभा द्वारा प्रकाशित संस्करण के रहते हुए भी इस पांडुलिपि की सहायता लेना आवश्यक जान पड़ा। ऐसा लगता है कि संपादित संस्करण में इसका यथोचित उपयोग नहीं हुआ है। इन दोनों पांडुलिपियों के आधार पर मैंने अपने अध्ययन के लिए रासो के मुख्य तथा केन्द्रीय भाग 'कनवज्ज समय' का पाठ तैयार किया है। इस प्रकार प्रस्तुत अध्ययन कुल मिलाकर साढ़े तीन हजार शब्द-रूपों पर आधारित है। किसी रचना की भाषा के

वास्तविक रूप का पता देने के लिए इतने शब्द अपर्याप्त नहीं होने चाहिए। गहराई से विवेचन करने के लिए ही पाठ की सीमा निर्धारित की गई है। प्रस्तुत निबंध में भाषावैज्ञानिक विवेचन के साथ 'कनवज्ज समय' का सम्पादित पाठ और उसके सपूर्ण शब्दों का सदर्भ-सहित कोश भी दे दिया गया है।

निबंध में यथास्थान शब्द-रूपों की ऐतिहासिकता तथा प्रादेशिकता की ओर संकेत किया गया है। इस प्रकार एक ओर डिंगल-पिंगल तत्व स्पष्ट होते गये है तो दूसरी ओर हिंदी की उदयकालीन तथा अपभ्रंशोत्तर अवस्था की भाषा का स्वरूप भी उद्घाटित हुआ है। साथ ही तुलना के लिए तत्कालीन अन्य रचनाओं के भी समानान्तर शब्द-रूप दिए गए हैं। आशा है, इन सबसे पश्चिमी हिंदी—विशेषतः ब्रजभाषा के प्राचीन इतिहास को आलोकित करने योग्य कुछ महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त होगी।

निबंध का मार्ग-दर्शन गुरुदेव आचार्य हजारीप्रसाद जी द्विवेदी ने किया है। सपूर्ण प्रयत्न उन्हीं की प्रेरणा और प्रोत्साहन का परिणाम है।

लघुतम रूपान्तर की प्रतिलिपि के लिए मै आदरणीय श्री अगरचंदजी नाहटा तथा प्रो० नरोत्तमदासजी स्वामी का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। नाहटा जी ने कृपापूर्वक मेरे लिए रासो की अन्य हस्तलिखित प्रतियाॅ भी सुलभ कर दी थी और स्वामी जी ने विविध रूपान्तरों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए आवश्यक सामग्रियाॅ जुटाने की कृपा की थी।

रासो की अन्य हस्तलिखित प्रतियों के लिए मैं अनूप-संस्कृत लाइब्रेरी बीकानेर तथा काशी नागरी प्रचारिणी सभा के प्रति आभारी हूँ।

लोलार्क कुण्ड, काशी
३० मार्च, १९५६

नामवर सिंह

विषय-सूची

पृष्ठ

पृथ्वीराज रासो की भाषा

भूमिका

१. पृथ्वीराज रासो हिंदी की सबसे विवाद-ग्रस्त रचना है। पिछले सौ वर्षों मे इतनी चर्चा शायद ही किसी हिंदी ग्रथ की हुई होगी। इससे उसके महत्त्व का पता चलता है। रासो की चर्चा मे इतिहास, साहित्य, भाषाविज्ञान आदि विविध क्षेत्रो के अध्येताओं ने भाग लिया है। यह रासो के महत्त्व की व्यापकता का प्रमाण है। कर्नल टाड[१], डा० बूलर[२], डा० मॉरिसन[३], प० गौरीशकर हीराचद ओझा[४], मुंशी देवी प्रसाद[५], डा० दशरथ शर्मा[६] प्रभृति प्रसिद्ध इतिहासकारो के अनुसधानपूर्ण विचारो से पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिक सामग्री पर पर्याप्त प्रकाश पडता है। वास्तविक तथ्य का निर्णय इस क्षेत्र के विशेषज्ञो के लिए सुरक्षित रखते हुए यहाँ इतना ही संकेत करना काफी होगा कि नई खोजो से रासो के अनेक तथ्य क्रमशः इतिहास के अन्य स्रोतो द्वारा समथित और पुष्ट होते जा रहे हैं। पृथ्वीराज रासो के साहित्यिक पक्ष पर अपेक्षाकृत कम काम हुआ है। फिर भी बाबू श्यामसुंदरदास[७], डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी[८], प० मोतीलाल मेनारिया[९], डा० उदयनारायण तिवारी[१०], डा० विपिन बिहारी त्रिवेदी[११] जैसे साहित्य-समीक्षको ने पृथ्वीराज रासो के काव्य सौन्दर्य का उद्घाटन

---

१. एनल्स एड एटीक्विटीज आव राजस्थान, १८२९, द वाउ ऑव सगाप्ता, एशियाटिक जर्नल (न्यू सीरीज), जिल्द २५; कनउज खड, जे० ए० एस० बी०, १८३८ ई०

२. प्रोसीडिंग्ज, जे० ए० एस० बी०, जनवरी-दिसबर १८९३ ई०

३. सम अकाउट ऑव द जीनियालाजीज इन दि पृथ्वीराज विजय, वियना ओरियटल जर्नल, भाग ७, १८९३ ई०

४. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन सस्करण, भाग १, १९२० ई०, वही, भाग ९; पृथ्वीराज रासो का निर्माणकाल, कोषोत्सव स्मारक सग्रह, १९२८ ई०

५. पृथ्वीराज रासा, ना० प्र० पत्रिका, भाग ५, १९०१ ई०

६. सयोगिता, राजस्थान भारती, भाग १, अक २-३, सम्राट पृथ्वीराज की रानी पद्मावती, मरु भारती, वर्ष १, पृथ्वीराज तृतीय का जन्मतिथि, राज० भा०, अक १, भाग २, पृथ्वीराज तृतीय और मुहम्मद बिन साम की मुद्रा, जर्नल ऑव न्यूमिस्मैटिक सोसाइटी ऑव इडिया, १९५४; दिल्ली का अतिम हिंदू सम्राट पृथ्वीराज तृतीय, इडियन कल्चर, १९४४; इत्यादि।

७. हिंदी साहित्य, १९३० ई०

८. हिंदी साहित्य का आदिकाल, १९५३ ई०

९. डिंगल में वीर रस, १९४०, राजस्थानी भाषा और साहित्य, राजस्थान का पिंगल साहित्य

१०. वीर काव्य, १९४८ ई०

११. चद वरदायी और उनका काव्य, १९५२ ई०, रेवातट, १९५३ ई०

करने मे काफी काम किया है जिसके फलस्वरूप रसज्ञ जनों को अब रासो में रस मिलने लगा है। बीम्स[1], होर्नले[2], ग्रियर्सन[3], डा० तेसितोरी[4], डा० सुनीति कुमार चटर्जी[5], डा० धीरेंद्र वर्मा[6], डा० दशरथ शर्मा[7], प्रो० नरोत्तमदास स्वामी[8] जैसे भाषावैज्ञानिकों और भाषाशास्त्रियो ने समय समय पर पृथ्वीराज रासो की भाषा का विश्लेषण किया है तथा उस पर अपनी राय प्रकट की है। पुरानी पांडुलिपियों के अन्वेषकों तथा पाठ विज्ञान के विशेषज्ञ सपादको ने भी पृथ्वीराज रासो के पुनरुद्धार की ओर ध्यान दिया है, जिनमे बीम्स[9], होर्नले[10], डा० श्याम सुन्दर दास[11], मोहनलाल विष्णुलाल पडया[11], मथुरा प्रसाद दीक्षित[12], मुनि जिनविजय[13], अगरचंद नाहटा[14], और कविराव मोहन सिह[15] के प्रयत्न विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। इस प्रकार रासो पर किए गये कार्यों का भी एक विशाल साहित्य है और मनोरजक इतिहास है। यह स्वय अपने आप मे स्वतंत्र अध्ययन का विषय हो सकता है। परंतु इस सक्षिप्त रूपरेखा से इतना तो अवश्य ही प्रमाणित होता है कि पृथ्वीराज रासो सबधी समस्याएँ बहुत जटिल हैं और इतने दीर्घ तथा व्यापक प्रयत्न के बावजूद बहुत सी समस्याएँ अभी सुलझाने को शेष रह गई हैं।

---

१. स्टडीज़ इन दि ग्रैमर ऑव चद बरदायी, जे० आर० ए० एस० बी०, जिल्द ४२, भाग १, १८७३ ई०

२. गौडियन ग्रैमर, १८८० ई०

३. मार्डर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑव हिंदुस्तान, जे० ए० एस० बी०, भाग १, १८८८ ई०

४. ग्रैमर ऑव ओल्ड वेस्टर्न राजस्थानी, इडियन एटिक्वेरी, १९१४ ई०

५. ओरिजिन एड डिवेलपमेंट ऑव बेंगाली लैंग्वेज भूमिका, १९२६ ई०

६. ब्रजभाषा, अध्याय, ३, १९३५ ई०। (हिंदी अनुवाद, १९५५) ई०

७. दि ओरिजिनल पृथ्वीराज रासो—ऐन अपभ्र श वर्क, राजस्थान भारती, भाग १, अक १, १९४६, पृथ्वीराज रासो की भाषा, वही, अक ४, १९४७ ई०

८. पृथ्वीराज रासो की भाषा, राजस्थान भारती, भाग १, अक २-३, १९४६ ई०

९. दि मैरेज विद पद्मावती, जे० ए० एस० बी०, जिल्द ३८, भाग १, १८६९; ट्रासलेशंस ऑव सेलेक्टेड पोर्शंस, वही, जिल्द ४१, १८७२ ई०

१०. बिब्लिओथेका इडिका, न्यू सीरीज़ ३०४, १८७४, वही स० ४५२, १८८१ ई०

११. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा, १९०४–१९१२ ई०

१२ असली पृथ्वीराज रासो (पहला समय) लाहौर, १९३८ ई०

१३ पुरातन प्रबंध सग्रह, भूमिका, १९३५ ई०। मुनि जी ने लघुतम रूपान्तर की एक पुरानी पांडुलिपि भी खोजी है।

१४. नाहटा जी द्वारा खोजी तथा सग्रह की गई पाडुलिपियो के विवरण लिए देखिए राजस्थान भारती मरुभारती के अक।

१५. पृथ्वीराज रासो, अब तक दो भाग प्रकाशित, उदयपुर १९५५ ई०

२. पृथ्वीराज रासो की भाषा-सबधी समस्या उन्ही जटिल समस्याओं मे से एक है। कहने के लिए इसे एक तरह से पहली और आधारभूत समस्या कहा जा सकता है क्योकि भाषा ही वह पहली दीवार है जिसे पार करके पृथ्वीराज रासो तक पहुँचा जा सकता है। भाषा की कठिनाई के कारण ही रासो का सम्यक् साहित्यिक मूल्याकन नही हो पा रहा है और अभी तक इसके वैज्ञानिक सपादन न हो सकने के पीछे प्रमुख कारणो मे से एक भाषा भी है। सभव है, ऐतिहासिक मतभेदो के पीछे भी इसका कुछ प्रभाव हो। इसीलिए डा० ग्रियर्सन ने 'एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका' मे चंद वरदायी और पृथ्वीराज रासो पर लिखते हुए कहा है कि भाषा विषयक कठिनाई के कारण ये विद्वान् (ग्राउज, बीम्स और होर्नले) अधिक प्रगति नही कर सके। जो कठिनाई किसी समय ग्राउज, बीम्स और होर्नले के सामने थी वह आज भी हिंदी विद्वानो के सामने है। इसीलिए कभी कुछ विद्वान् झुँझलाकर पृथ्वीराज रासो की भाषा को 'बिल्कुल बे-ठिकाने' कह बैठते हैं[1], तो कुछ विद्वान् डिंगल-पिंगल का अनुमान लगाया करते है। पृथ्वीराज की भाषा-सबंधी समस्या केवल डिंगल-पिंगल अथवा अपभ्रंश का निर्णय देने तक ही सीमित नहीं है। जैसा कि डा० ग्रियर्सन ने इस ग्रथ के के भाषा-सबंधी महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए कहा है—"यह चाहे कुछ भी हो परंतु यह काव्य भाषा-विज्ञान के विद्यार्थी के लिए अत्यत महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि अभी तक प्राप्त सामग्री को देखने हुए यूरोपीय अन्वेषकों के सामने अर्वाचीन प्राकृतो और प्राचीनतम गौड़ाय रचनाओ के बीच की कड़ी के रूप में केवल यही मात्र है। चद के वास्तविक पाठ न होने पर भी हमे उसकी रचना में गौड़ाय साहित्य के अति प्राचीन अभिज्ञ निदर्शन प्राप्त होते है जो शुद्ध अपभ्रंश शौरसेनी प्राकृतो से भरे पड़े है।"[2]

३. डा० ग्रियर्सन ने पृथ्वीराज रासो के भाषा-सबधी महत्त्व की यह घोषणा १८८८ ई० मे की थी। तब से अपभ्रंश और आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच की अवस्था का पता देने वाली बीसियो पुस्तके प्राप्त हो गई हैं, फिर भी पृथ्वीराज रासो जैसा विशाल और समृद्ध काव्यग्रथ अभी तक नहीं प्राप्त हुआ है। इसलिए वर्तमान पृथ्वीराज रासो 'चद का वास्तविक पाठ न होने पर भी' अपभ्रंशोत्तर तथा आधुनिक भारतीय आर्यभाषा की आरभिक अवस्था पर प्रकाश डालने योग्य पर्याप्त सामग्री प्रदान कर सकता है। इस प्रकार डा० ग्रियर्सन ने 'पृथ्वीराज रासो' मे भाषा-सबंधी उस सभावना की ओर सकेत किया है जिसका सबध भारतीय आर्य भाषा के विकास की अत्यत महत्त्वपूर्ण अवस्था से है। तात्पर्य यह कि, पृथ्वीराज रासो की भाषा का अध्य-

---

१. रामचन्द्र शुक्ल हिंदी साहित्य का इतिहास, पाचवाँ सस्करण, पृ० ४४, १९४८ ई०

२. माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑव हिंदोस्तान, १८८८ ई०

यन केवल उस रचना को समझने के लिए ही महत्त्वपूर्ण नही है, बल्कि उसका महत्त्व भारतीय आर्यभाषा के ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से भी है। डा० ग्रियर्सन के अनुसार पृथ्वीराज रासो के वर्तमान रूप का भी भाषावैज्ञानिक अध्ययन उपयोगी हो सकता है। इसलिए कुछ लोगो की जो यह धारणा है कि वैज्ञानिक सस्करण के पूर्व रासो की भाषा का अध्ययन अनावश्यक है, वह सदिच्छापूर्ण होती हुई भी उत्साहप्रद नही कही जा सकती। निःसन्देह वैज्ञानिक पद्धति से सम्पादित सस्करण सुलभ हो जाने पर रासो के भाषावैज्ञानिक अध्ययन का कार्य सरल हो जायेगा और अपेक्षाकृत पूर्ण भी होगा। किन्तु रासो के वर्तमान रूप का भाषावैज्ञानिक विश्लेषण बहुत सभव है कि उसके वैज्ञानिक सम्पादन मे भी कुछ योग दे। एक ही शब्द के प्राप्त होने वाले विविध रूपो मे स एक प्रतिमित रूप निर्धारित करने के लिए भाषावैज्ञानिक दृष्टि का भी उपयोग करना पडेगा। यही वजह है कि बगाल की रायल एशियाटिक सोसायटी की ओर से रासो का सम्पादन करते समय बीम्स और होर्नले ने उसकी भाषा पर भी विचार किया। तद्भव शब्दो मे होने वाले ध्वनि-परिवर्तनो तथा व्याकरणिक रूपो के पीछे काम करनेवाले नियमो की खोज पर आधारित होने के कारण ही एशियाटिक सोसायटी का सस्करण अपेक्षाकृत वैज्ञनिक हो सका है। इस प्रकार पृथ्वीराज रासो की भाषा पर राय देने और अनुमान लगाने की अपेक्षा उसका व्यवस्थित विश्लेषण अधिक उपयोगी कार्य हो सकता है।

४. पृथ्वीराज रासो का प्रथम व्याकरण बीम्स ने १८७३ ई० मे प्रस्तुत किया।[१] उस समय तक सम्पूर्ण पृथ्वीराज रासो का कोई सम्पादित और मुद्रित सस्करण प्रस्तुत नही हुआ था। जैसा कि बीम्स के विवरण से पता चलता है, उन्होने टाड की प्रतिलिपि को आधार बनाकर बैदला और आगरा की दो अन्य पाडुलिपियो की सहायता से सम्पादन-कार्य आरम्भ किया था। व्याकरण लिखने के समय बीम्स द्वारा सम्पादित 'प्रथम समय' प्रेस मे था और डा० होर्नले दूसरे 'समयो' पर काम कर रहे थे। बीम्स ने अपने व्याकरण की अधिकाश सामग्रियाँ 'प्रथम समय' से ली हैं। इसके अतिरिक्त उन्होने यथास्थान १६ वें, ६४ वे और ६५ वें समय से भी उदाहरण चुने है। कुछ उद्धरण उन्होने १८ वे समय से तथा दो-एक २१ वें समय से भी लिए है, जो उनके शब्दो मे, सुप्रसिद्ध 'महोबा खंड' है। बीम्स ने मुख्यतः सर्वनामों, परसर्गों और क्रियापदो पर विचार किया है। जहाँ तक तद्भव शब्दो के ध्वनि-परिवर्तन का सम्बन्ध है, उन्होंने १६-१६ शब्द चुनकर क्रमशः उनमे से प्रत्येक के स्वर और व्यंजन संबंधी विविध रूपान्तरों

---

१. स्टडीज़ ऑन द ग्रैमर ऑव चद बरदाई, जे० ए० एस० बी०, जिल्द ४२, भाग १, पृष्ठ १६५—१६१

की सूची दे दी है। इन रूपान्तरों के कारण पर विचार करते हुए बीम्स ने पहला कारण लिपि-शैली की अव्यवस्था बतलाई है। जहाँ शब्द मे मात्रा-संबधी रूप-भेद दिखाई पड़ते हैं, उन्हे बीम्स ने छन्दोऽनुरोध का परिणाम बताया है। शेष रूपो के विषय में बीम्स की यह स्थापना है कि वे भाषा के विकास की विभिन्न अवस्थाओं के परिचायक हैं। बीम्स के अनुसार इस रूप-विविधता का बहुत महत्त्व है क्योकि इसमे किसी शब्द के इतिहास की क्रमिक अवस्थाओ पर प्रकाश पडता है। इस तथ्य के आधार पर उन्होने निष्कर्ष निकाला है कि पृथ्वीराज रासो उस समय का (लिखित अथवा संकलित) काव्य है जब बोलचाल मे एक ही शब्द के अनेक रूप प्रचलित थे और कोई एक रूप प्रतिमान के रूप मे स्थिर नहीं हो सका था; जैसे *नगर* शब्द के *नगर*, *नयर* और *नेर* ये तीन रूप एक साथ प्रचलित दिखाई पडते हैं। बीम्स के अनुसार रासो मे शब्दों की रूप-विविधता का कारण तत्कालीन उच्चारण की अनिश्चितता है। फिर भी उन्होंने कुछ अन्य विद्वानो की तरह रासो की भाषा को सर्वथा अव्यवस्थित और बेठिकाने नहीं कहा। उनका निष्कर्ष यह है कि 'अनियमितताओं के बीच भी उसमे आद्योपान्त एकरूपता मिलती है।'

५. बीम्स ने जैसा कि स्वयं कहा है, यह निबध रासो के व्याकरण की कुछ विशेषताओं को लेकर ही लिखा गया है, यह व्यवस्थित और सागोपाग व्याकरण नहीं है। ध्वनि-विचार उसका सबसे कमजोर पहलू है। भाषाविज्ञान की उस आरभिक अवस्था मे यह संभव भी न था। इस तथ्य को ध्यान मे रखते हुए यह निःसदिग्ध कहा जा सकता है कि बीम्स द्वारा प्रस्तुत रासो के व्याकरण की रूपरेखा का ऐतिहासिक महत्त्व है। यह आकस्मिक बात नही है कि भारत मे आधुनिक भाषाओं के अध्ययन का प्रवर्तक विद्वान् हिंदी के तथाकथित आदि काव्य का प्रथम वैयाकरण भी है। बीम्स के व्याकरण की सीमाएँ उनके युग की सीमाएँ हैं लेकिन उनकी अनेक स्थापनाएँ युग की सीमाओं के पार भी महत्त्वपूर्ण हैं।

६. होर्नले द्वितीय भाषावैज्ञानिक हैं, जिन्होने पृथ्वीराज रासो की भाषा पर विचार किया है। बीम्स की तरह उन्होंने रासो की भाषा पर कोई स्वतंत्र निबंध तो नही लिखा लेकिन 'गौडियन ग्रैमर'[1] मे उन्होंने हिंदी कारक रूपो की व्युत्पत्ति पर विचार करते हुए स्थान-स्थान पर चद के उदाहरण दिए हैं। व्युत्पत्ति और सजातीय बोलियों के तुलनात्मक समानान्तर रूपों की दृष्टि से होर्नले का प्रयत्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण

---

१. देखिए पृष्ठ १३६, १६५, १६६, २०६, २०८, २१०, २१६, २२७, २३१, २३२, २३४, २३७, २३८, २७६, २७८, २६४, २६८, २६६।

है। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि चद की भाषा के लिए होर्नले ने बराबर 'पुरानी पश्चिमी हिदी' सज्ञा का प्रयोग किया है।

७. पिछली शताब्दी के इन आरभिक प्रयत्नो के बाद वर्षों तक रासो की भाषा पर कोई कार्य नही हुआ। इसकी प्रामाणिकता को लेकर उठने वाले विवाद ने विद्वानों का ध्यान दूसरी ओर केन्द्रित कर दिया। जब वह विवाद कुछ कम हुआ तो कुछ अध्येताओं का ध्यान एक बार फिर उस ग्रथ की ओर गया। रासो की भाषा का ऐसा ही विस्तृत विवरण डा० विपिन बिहारी त्रिवेदी की पुस्तक 'चद वरदायी और उनका काव्य' (१९५२ ई०) के पाँचवें अध्याय मे मिलता है।[१] डा० त्रिवेदी का यह प्रयत्न हिंदी मे प्रथम कहा जा सकता है। हिदी मे इतने विस्तार से रासो की भाषा का विवरण अभी तक नही दिया गया था। परतु जैसा कि डा० त्रिवेदी ने स्वयं स्वीकार किया है, उन्होने 'कतिपय विशेषताएँ' ही निरूपित की है। भाषा-सबधी विवेचन वस्तुतः उनकी सपूर्ण 'थीसिस' का एक अग है। डा० त्रिवेदी के भाषा-सबधी कार्य की विशेषता यह है कि उन्होने रासो मे प्राप्त फारसी और अरबी के शब्दो की लंबी सूची दी है। उन्होने परिश्रम के साथ इन तद्भव शब्दो के मूल रूप भी खोज निकाले हैं और सुविधा के लिए उन्हे फारसी लिपि मे प्रस्तुत किया है। खेद यही है कि यह शब्द-सूची अकारादि-क्रम से नही दी गई है और न तो उन शब्दो का पूरा सदर्भ ही दिया गया है। इसी तरह डा० त्रिवेदी ने तद्भव शब्दो मे होनेवाले ध्वनि-परिवर्तनो पर भी बीम्स से कुछ विस्तृत विवरण देने का प्रयत्न किया है, परतु उसमें भी कोई व्यवस्था या क्रम नही है। इन बातो के अतिरिक्त डा० त्रिवेदी द्वारा प्रस्तुत रासो के व्याकरण की सपूर्ण रूपरेखा बीम्स की ही है। सच पूछा जाय तो भाषावैज्ञानिक दृष्टि से डा० त्रिवेदी का यह विवेचन बीम्स के कार्य को आगे बढ़ाने की ओर से उदासीन है।

८. भाषा-सबधी ये सभी अध्ययन पृथ्वीराज रासो की एक परंपरा की प्रतियों पर आधारित हैं जिसे सामान्यतः 'वृहत् रूपान्तर' कहा जाता है। इनकी सीमाओ का यह भी एक कारण है। परतु इधर की खोजों से 'रासो' की अन्य परम्पराओ का भी पता चला है। 'रासो' की भाषा पर विचार करते समय इन परम्पराओ को ध्यान मे रखना आवश्यक है। पाठ-परंपरा की उपेक्षा करके भाषा-सबधी किसी सही निर्णय पर पहुँचना संभव नही है। विद्वानो का अनुमान है कि इन पाठ-परपराओ मे विषय वस्तु के साथ ही भाषा मे भी पर्याप्त अन्तर है। इसलिए तथ्य की छानबीन में प्रवेश करने से पूर्व सक्षेप मे 'रासो' की विविध पाठ-परपराओं का तुलनात्मक अध्ययन कर लेना प्रासंगिक होगा।

---

१. देखिये पृष्ठ २८७—३५६

९. अभी तक पृथ्वीराज रासो की चार प्राप्त परपरायें निश्चित की जा सकती हैं। इसमें से वृहत् रूपान्तर की लगभग ३३, मध्यम की ११, लघु की ५ और लघुतम की २ प्रतियाँ प्राप्त हैं। रायल एशियाटिक सोसायटी और नागरीप्रचारिणी सभा के प्रकाशित संस्करणो का संबध वृहत् रूपान्तर से है। सभा का सस्करण जिन दो मुख्य प्रतियो पर आधारित है उनमे से प्राचीनतम प्रति का लिपि-काल कुछ अस्पष्ट है। संपादको के अनुसार वह सं० १६४० अथवा १६४२ है परंतु मेरे देखने में वह १७६७ प्रतीत होता है[1]। उसकी एक फोटो कापी अन्यत्र दी जा रही है ताकि इस विषय के विशेषज्ञ उसका निर्णय स्वय कर लें। सभवतः ये सभी प्रतियाँ उदयपुर की उस प्रति पर आधारित हैं जिसका लिपिकाल सं० १७६० वि० बतलाया जाता है और जो उदयपुर के महाराणा अमर सिह द्वितीय (स० १७५५–६७ वि०) के राज्य-काल मे तैयार हुई थी। अन्य परपराओ की प्रतियाँ अभीतक हस्तलिखित रूप मे ही सुरक्षित हैं। यहाँ उदयपुर वाली हस्तलिखित प्रति को आधार मानकर विभिन्न परपराओ अथवा रूपान्तरो की तुलनात्मक तालिका प्रस्तुत की जा रही है।

---

1. इन सख्याओं के भ्रान्त अथवा विवादास्पद पाठ का एक कारण तो यह है कि उन पर सामने वाले पन्ने की स्याही की छाप पड़ गई है जिससे चार सख्याओ में से तीसरी संख्या कुछ अस्पष्ट हो गई है किन्तु दूसरा कारण उन सख्याओं की लिपि-शैली भी है। सात की सख्या प्राय. शून्य की भाँति गोलाकार लिखी गई है, अन्तर इतना ही है कि इसमें ऊपर की ओर बाईं ओर थोड़ा सा हिस्सा खुला हुआ है। प्रति मे अन्यत्र लिखित सख्याओ की लिपि-शैली को देखने से पता चलता है कि यह संख्या सात की ही है। इसी प्रकार प्रति की लिपि-शैली के द्वारा तीसरी अस्पष्ट संख्या का भी पाठ-निर्णय हो जाता है और वह छह ही है। इस प्रकार मेरे विचार से इस प्रति का लिपि-काल १७६७ वि० होना चाहिए।

१०. विविध रूपान्तरों के खंडों की तालिका[1]

(१) चारों रूपान्तरों में पाए जाने वाले खंड[2]

१. आदि पर्व	(१)[3]	६	कैमासवध	(५७)
२. दिल्ली किल्ली दान	(३)[4]	७	षट रितु वर्णन	(६१)[6]
३ अनगपाल दिल्ली दान	(१८)[4]	८	कनवज कथा	(६२)[7]
४. पग यज्ञ विध्वस	(४६)[5]	६	बडी लडाई	(६८)[7]
५ सजोगिता नेम आचरण	(५०)[5]	१०	बानबेध	(६६)[8]

१ (क) यहाँ खडो की सख्या प्राय महाराणा अमर सिंह की १७६० वाली प्रति के अनुसार है। केवल समरसी दिल्ली सहाय खड को, जो इस प्रति मे बडी लडई के अन्तर्भूत है, प्राचीन प्रतियो के अनुसार अलग दिखाया गया है जिससे सपूर्ण खड सख्या ६६ के स्थान पर ७० हो जाती है। क्रम में भी आखेटक चख श्राप खड को प्राचीन प्रतियो का अनुसरण करते हुए धीर पुडीर खड के पीछे रखा गया है।

(ख) बडे रूपान्तरो के जो खड छोटे रूपान्तरो मे आए हैं वे ज्यो के त्यो नही है किन्तु उत्तरोत्तर सक्षिप्त होते गए हैं, यहाँ तक कि कई खड तो छोटे खडो (रूपान्तरो) में दो चार अथवा एकाध पद्यो के रूप में ही आए जाते है। साथ ही बडे रूपान्तरो के अनेक खड छोटे रूपान्तरो में दूसरे खडो के अन्तर्भुक्त हो गए है। कुछ अवस्थाओ में वृहत् रूपान्तर के खड छोटे रूपान्तरो में कई खडो में विभक्त हो गए है वृहत् रूपान्तर के उक्त १० खडो के स्थान पर मध्यम रूपान्तर में २० और लघु रूपान्तर मे १४ खड है।

२ लघुतम रूपान्तर खडो मे विभक्त नही है। अत उसमे खड नही है पर वृहत् रूपान्तर के इन खडो के प्रसग उसमें किसी न किसी रूप में आए है।

३ लघु रूपान्तर मे यह दो खडो में विभक्त है। प्रथम में मगलाचरण (और दशावतार प्रसग) है तथा दूसरे में वशावली। दूसरे खड में वृहत् रूपान्तर के दिल्ली किल्ली (३), अनगपाल दिल्लीदान (१८) तथा धनकथा (२४) खडो के प्रसग भी आ गए है।

४ लघु रूपान्तर में ये प्रसग बहुत सक्षेप में वशावली वाले द्वितीय खड में आए है। लघुतम रूपान्तर में इसका कथन और भी अधिक संक्षिप्त है।

५ लघु रूपान्तर में ये दोनो प्रसग एक ही खड में आ गए है। मध्यम रूपान्तर में ये बालुका राइ वध खड में अन्तर्भुक्त हो गए है।

६ वृहत और लघुतम रूपान्तरो में यह प्रसग कनवज-कथा के पूर्व आया है पर लघु और मध्यम रूपान्तरों में धीर पुडीर प्रसग के पश्चात्। मध्यम रूपान्तर में वह स्वतत्र खड है पर लघु रूपान्तर में धीर पुडीर प्रसगवाले खड का अग है।

७ मध्यम रूपान्तर में ये प्रसग क्रमश आठ और चार खडो में विभक्त है, और लघु रूपान्तर में क्रमशः छै और पाँच खडों में।

८ मध्यम रूपान्तर की कई प्रतियो में यह प्रसग नही पाया जाता।

(२) केवल वृहत् मध्यम और लघु रूपान्तरों में पाए जानेवाले खंड

११. दशम या दसावतार वर्णन	(२)[१]	१४. धनकथा	(२४)
१२. भोरा राइ जुद्ध, सामतविजै	(१२)[२]	१५. सयोगिता विनय मगल	(४६)
१३. सलख पातिसा ग्रहण	(१३)[२]	१६ धीर पुडीर	(६४)[३]

(३) केवल वृहत् और मध्यम रूपान्तरों में पाए जाने वाले खंड

१७. नाहर राइ	(७)	२७. पीपा पातिसाह ग्रहण	(३१)
१८. मेवाती मूगल	(८)	२८. हंसावती	(३६)
१९. हुसेन कथा (पातिसाह प्रथम जुद्ध)	(९)[४]	२९. वरुण कथा	(३८)
२०. इ छनी विवाह	(१४)[५]	३०. सोमेस वध	(३९)
२१. मूगल जुद्ध	(१५)	३१. भीमंग वध	(४४)
२२. भूमि स्वप्न	(१७)[६]	३२ संजोगिता पूर्वजन्म	(४६)
२३. माधो भाट	(१९)[७]	३३. बालुकाराइ वध	(४८)[८]
२४. प्रिथा विवाह	(२१)	३४. सामंत पंग जुद्ध	(५५)
२५. ससिव्रता	(२५)	३५. समरसी पग जुद्ध	(५६)
२६. कर्णाटी पात्र कथा (निड्ढर राइ आगमन)	(३०)	३६. दुर्गा केदार कथा पातिसाह ग्रहण	(५८)

३७—सुक विलास या सुक चरित्र (६३)[९]

---

१ लघु रूपान्तर में यह प्रसग प्रथम खड में आया है।

२. लघु रूपान्तर में यह प्रसग भोराराइ जुद्ध खड के पीछे नही किन्तु पहले आया है।

३. मध्यम रूपान्तर में यह खड दो खडो में विभक्त है—एक में धीर द्वारा पातिसाह ग्रहण की कथा है और दूसरे में धीर वध की। लघु रूपान्तर में धीरवध की कथा नही है। उसमें पृथ्वीराज दिल्ली आगमन धीरपातिसाह ग्रहण तथा षटरितुवर्णन तीनो प्रसग तीन की जगह एक ही खड में आ गये है।

४. मध्यम रूपान्तर की कुछ प्रतियो में यह खड नही है। एक प्रति में अत मे अलग से दिया हुआ है।

५. इस खड का दूहा लघु रूपान्तर में भीम पराजय (भोरा राइ जुद्ध सामत विजै) खड में पाया जाता है।

६. मध्यम रूपान्तर में यह प्रसग धनकथा (खट्टू बन आखेटक रमण) खड का पूर्व-भाग है।

७. मध्यम रूपातर में यह प्रसग दिल्ली राज्याभिषेक (अनंगपाल दिल्ली दान) खड का उत्तरभाग है।

८. मध्यम रूपातर में यह प्रसग पग यज्ञ विध्वस और सयोगिता नेम आचरण खडो का पूर्व भाग है अर्थात् वृहत् रूपातर के इन तीन खडों का मध्यम रूपातर में एक ही खड है।

९. मध्यम रूपातर में यह प्रसग राजसू-जज्ञ-विध्वस पृथ्वीराज दिल्ली आगमन' खड का उत्तर भाग है।

(४) केवल वृहत् रूपान्तर मे पाए जाने वाले खंड

---

१ ये पाच खड वृहत् रूपातर की प्राचीन-तम प्रतियो में नही पाये जाते ।

२. ये दो खड मध्यम रूपातर की सबसे पिछली प्रति मे पाये जाते हैं।

३ महाराणा अमरसिंह की १७६० वाली प्रति में यह खड धीरपुडीर खड के पहले है पर प्राचीन प्रतियों में पीछे।

४. महाराणा अमर सिंह की प्रति में यह प्रसग बड़ी लडाई खंड में अन्तर्भुक्त हो गया है।

११. पृथ्वीराज रासो के रूपान्तरों के खंडों की तुलनात्मक तालिका

वृहत रूपान्तर †			मध्यम रूपान्तर *			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खं० सं०	रूपक स०	खंड का नाम	खं० सं०	रूपक सं०	खड का नाम	खं० सं०	खड का नाम	यह प्रसंग है + या नही है ×
१	३६७	आदि पर्व	१	१२५	आदि प्रबंध	१	मगलाचरण	+
					मगलाचरण		दशावतार	×
					वशावली	२	वशोत्पत्ति	+
					ढुंढा दाणव कथा		(ढुंढा दाणव कथा)	+
					वंशावली		(वशावली)	+
					राजा जन्म कथा		(राजा जन्म कथा)	+
							द्रव्य लाभ	+
							दिल्लीराज्याभिषेक	+
२	२२२	दशम	२	११३	दशावतार वर्णन	[१]	+	×
३	३७	दिल्ली किल्ली	३	२३	राजा स्वप्न, दिल्ली किल्ली	[२]	उल्लेख मात्र	उल्लेख मात्र
*४	[१८]	लोहाना आजान बाहु			×	-	×	×
५	६०	कन्ह अक्ख पट्ट बंधन			×	-	×	×
६	११०	आखेटक वीर वरदान			×	-	×	×

† वृहत् रूपान्तर के खडो सख्या की महाराणा अमरसिंह की १७६० वाली प्रति के अनुसार है पर समरसी दिल्ली सहाय खड को प्राचीन प्रति का अनुसरण करते हुए स्वतत्र रखा गया है जिससे सख्या मे एक की वृद्धि होती है। प्राचीन प्रतियो के अनुसार धीर पुंडीर खड को आखेटक चख श्राप के पूर्व रखा गया है। रूपको की सख्या ना० प्र० सभा की १७६७ वाली प्रति के अनुसार दी गई है।

* मध्यम रूपान्तर के खडो की सख्या और क्रम तथा रूपको की सख्या अबोहर की १७२३ वाली प्रति के अनुसार दी गई है।

* तारकाकित (*) खड वृहत् रूपान्तर की प्राचीन प्रतियो में नही है। स० १७६० वाली प्रति में पहले पहल मिलते है। इनकी रुपक-सख्या कोष्ठको में इसी प्रति के अनुसार दी गई है।

१. मध्यम रूपान्तर की स० १७९२ की प्रति में यह खड दो खडो में विभक्त है।

२. मध्यम रूपान्तर की स० १७९२ की प्रति में ये दोनों खड भी दिए हुए हैं।

वृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खंड सं०	रूपक सं०	खड का नाम	खंड सं०	रूपक सं०	खड का नाम	खंड सं०	खड का नाम	यह प्रसंग है + या नहीं है ×
७	१२०	नाहरराय कथा	६	४८	नाहरराज पराजय पृथ्वीराज विजय पृथ्वीराज विवाह		×	×
८	४५	मेवाती मूगल कथा	७	१५	मूगल पराजय पृथ्वीराज विजयकरण	-	×	×
९	९०	हुसेन खाँ चित्ररेखा पात्र पातसाह ग्रहण[1]	४ -	८५ -	गोरी पातिसाह पृथ्वीराज प्रथम जुद्ध वर्नन[1]		×	×
१०	३०	खट्टूवन आखेट सुरतान चूककरण	-	-	×	-	×	×
११	१८	चित्ररेखा वर्णन			×	-	×	×
१२	२२२	भोरा राइ जुद्ध सामत विजै	११	१५८	भोरा राइ भीमगदे पराजय मंत्रि कैमास विजै	५	कैमास मंत्रिणा भीम पराजय	×
१३	६६	सलख जुद्ध पातिसाह ग्रहण	१२	४५	पामार सलख हस्तेन पातिसाह ग्रहण	४	सामत सलख पावार हस्तेन गोरी साहाबुदीन निग्रह	×
१४	११७	इंछिनी विवाह वर्णन	१३	५७	इछिनी विवाह, सुक- सुकी वाक्य, दूतता, सजोगिता पातिव्रत	- -	×	×
१५	२०	मूगल जुद्ध	१५	१४	आखेटके सोलकी सारंगदे हस्तेन मूगल ग्रहण		×	×

१. मध्यम रुपान्तर की कई प्रतियां में यह खड नहीं पाया जाता। ज्ञान भडार की प्रति में वह अन्त में अलग से दिया गया है।

वृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खंड सं०	रूपक स०	खड का नाम	खंड सं०	रूपक सं०	खड का नाम	खंड सं०	खड का नाम	यह प्रसग है + या नही है ×
१६	१६	पुडीर दाहिमी विवाह	-	-		-	×	×
१७	४७	भूमि स्वप्न[1]	[५]	-	भूमि सुपन सगुन कथा	-	×	×
१८	४८	अनंगपाल दिल्ली दान[2]	६	६४	दिल्ली राज्याभिषेक	[२] -	दिल्ली राराज्याभिषेक	+
१९	१३१	माधो भाट राजा विजय पातिसाह ग्रहण[2]	६	६४	जुद्ध विजय पतिसाह पराजय चामुंड राइ हस्तेन पातिसाह ग्रहण		×	×
* २०	[४५]	पद्मावती विवाह पातिसाह ग्रहण	-		×	-	×	×
२१	६६	प्रिथा विवाह	२३ -	२७ -	समरसी प्रिथाकुवारी विवाह	•	×	×
* २२	२२	होली कथा	-	-	×	-	×	×
* २३	३५	दीपमालिका पर्व			×	-	×	×
२४	३१४	खट्टूवन मध्ये आखेटक रमण, धन सग्रहण, पातिसाह ग्रहण, [धन कथा][1]	५	१११	[भूमि सुपन, सगुन कथा] पृथ्वीराज युद्ध विजय धनागम, पातिसाह ग्रहण	[२]	द्रव्यलाभ	×
२५	५३६	ससिव्रता कथा	२२	३६	ससिव्रता विवाह जुद्ध विजय		×	×
२६	६३	देवगिरि जुद्ध	-	-	×	-	×	×
२७	८८	रेवातट पातिसाह	-	-	×	-	×	×
		ग्रहण			×		×	×

१. मध्यम रूपान्तर में वृहत् रूपान्तर के १७ वे और २४ वें खडो की कथा एक ही खड में आई है।

२. मध्यम रूपान्तर मे वृहत् रूपान्तर के १८ वे और १९ वे खडो की कथा एक ही खड मे आई है।

वृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर	
खंड सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खंड सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खंड सं०	खंड का नाम
२८	६८	अनगपाल ढिल्ली आगमन, पृथ्वीराज जग जुरन, बद्री सरन	-	-	×	-	×
२९	४५	घघ्घर नदी की लड़ाई कन्ह पातिसाह ग्रहण	-	-	×		×
३०	२३	कर्णाटी पात्र वर्णन	१९	१८	राठौर निड्ढर ढिल्लीआगमन, कर्णाटीपात्र कथा	-	×
३१	७१	पीपा पड्हिार पातिसाह ग्रहण	१९	१८	वर्णनपरिहार पीपजुद्धविजय पीपा हस्तेन गोरी ग्रहण	- -	×
३२	७०	करहडा जुद्ध रावर समरसी विजय	-	-	×	-	×
३३	६०	इन्द्रावती विवाह सामत विजय	-	-	×	-	×
३४	३७	जैतराइ पातिसाह ग्रहण	-	-	×	-	×
३५	३१	कागुरा विजय	-	-	×	-	×
३६	१५४	हसावती विवाह	२४	२७	रणथंभौर हसावती विवाह	-	×
३७	७१	पहाड़राइ पातिसाहग्रहण	-	-	×	-	×
३८	३५	वरुण कथा	१४	३३	सोमेस राजा जमुना गते वरुण दूत सामंत उभयो युद्ध वर्णन	-	×
३९	८५	भोरा भीम विजय सोम वध	२०	४८	भोरा राइ विजय युद्ध वर्णन	-	×

लघुतम रूपान्तर

यह प्रसंग है+या नही है ×

×
×
×
×
×
×
×
×
⟨
×
×
×

बृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
क्र. सं.	रूपक सं०	खंड का नाम	क्र. सं.	रूपक स०	खंड का नाम	क्र. सं.	खंड का नाम	यह प्रसंग है+या नहीं है×
४०	१४	पज्जून कछवाहा छोंगा	-	-	×	-	×	×
४१	२८	पज्जून विजय पातिसाह पराजय	-	-	×	-	×	×
४२	४८	चंद द्वारका गमन देव मिलन, परस्पर वाद जुरन	-	-	×	-	×	×
४३	७६	खट्टू वन मध्ये कैमास पातिसाह ग्रहन	-	-	×	-	×	×
४४	१४१	भोरा राइ भीमंग वध	-	-	भोराराइ भीमगदे वधन	-	×	×
४५	१४१	संजोगिता पूर्वजन्म कथा	८	३८	सजोगिता पूर्वजन्म कथा	-	×	×
४६	८३	संजोगिता को विनय मंगल	१०	५८	विजयपाल दिग्विजय करण, सजोगिता उत्पत्ति मदन वृद्ध बंभनी गृहे सकल कला पठनार्थ दुज-दुजी गंधर्वगंधर्वीसवाद	३	संयोगिता उत्पत्ति द्विज द्विजी सवाद गंधर्व गंधर्वी सवाद	×
४७	७८	सुकवर्णन	-	-	×	-	×	×
४८	११५	बालुकाराय वध[1]	२५	७२	बालुकाराय वधन	-	×	×
४९	१७	पंग यज्ञ विध्वंस[1]	,,	-	[यज्ञ विध्वस]	६	यज्ञ विध्वस	+

१. बृहत् रूपान्तर के ४८, ४९ और ५० नंबर के तीन खंडों की कथा मध्यम रूपान्तर में एक ही खंड में आयी है। लघु रूपान्तर में ४८ वें खंड की कथा नहीं है, बाकी दोनों खंडों की कथा एक ही खंड में है।

बृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खं. सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खं. सं०	रूपक स०	खंड का नाम	खं. सं०	खंड का नाम	यह प्रसग है + या नही है ×
५०	५५	सजोगिता नेम आचरण[1]	,,	-	सजोगिता दूती परस्पर वार्ता		पृथ्वीराज वरणार्थ सजोगिता नियम	+
५१	८९	हासी पुर प्रथम युद्ध पातिसाह पराजय	-	-	×	-	×	×
५२	११३	हासीपुर द्वितीय जुद्ध पातिसाह पराजय	-	-	×	-	×	×
५३	२६	पज्जून महुबा जुद्ध पातिसाह पराजय	-	-	×	-	×	×
५४	३४	पज्जून कछुवाहा पातिसाह ग्रहण	-	-	×	-	×	×
५५	१२५	सामत पग जुद्ध	१७	६२	पग सामत जुद्ध	-	×	×
५६	६०	जैचद समरसी जुद्ध	१८	४७	जैचद समर जुद्ध	-	×	×
५७	१८०	चामड वेडी भरण कन्नाटी दासी खून	२६	८७	चमुड बेडी	-	×	×
		कैमास वध			मत्रि कैमास वध	७	कैमास वध	+
५८	१६८	दुर्गा केदार	२७	५२	राजा पानी पथ मृगया, चद केदार सवाद, पाहार हस्तेन पातिसाह ग्रहण	-	×	×
५९	१७	दिल्ली वर्णन	-		×	-	×	×
६०	५७	जंगम सोफी कथा सिव पूजा	-		×	-	×	×
६१	५४	षट रितु वर्णन[1]	३८	३४	षट रितु श्रृङ्गार वर्णन[2]	[१३]	षट रितु वर्णन[2]	+

१. ना. प्र. स. के मुद्रित सस्करण मे ६१ वा खड ६२ वे खड के आरम्भ मे आया है।

२. मध्यम और लघु रूपान्तरो में षटरितु प्रसग धीर पुन्डीर कथा के पश्चात् आता है।

वृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खंड सं०	रूपक सं०	खड का नाम	खंड सं०	रूपक स०	खड का नाम	खंड सं०	खंड का नाम	यह प्रसंग है + या नही है ×
			[६०१]					
६२	११८४	कनवज्ज कथा[३]	२८	६८	कनवज वर्णन जैचद द्वार सप्रात	८	जयचद द्वार सप्रात	+
			२९	१४२	चद जैचद सवाद चद अखाडो पृथ्वीराज प्रगटन	९	जयचद सवाद	+
							सजोगिता विवाह	+
			३०	६१	प्रथम लगरी राय जुद्ध वर्णन सजोगिता विवाह	,,		
			३१	६८	अष्टमी शुक्ल प्रथम दिवस जुद्ध	१०	अष्टमी प्रथम दिवस जुद्ध	+
			३२	७१	नवमी शनिवार द्वितीय दिवस जुद्ध	११	नौमी द्वितीय दिवस जुद्ध	+
			३३	४४	पृथ्वीराज सोरो प्रास	,,		
			३४	१९	दशमी रविवार तृतीय दिवस जुद्ध	१२	दशमी तृतीय दिवस जुद्ध	+
			३५	६८	राजसू जग्य विध्वस ढिल्लीपुर आगमन सजोगिता पाणिग्रहण	१३	दिल्ली आगमन	+
६३	१०१	सुक विलास (सुकचरित्र)[४]	,,	-	राज शुक चरित्र	-	×	×
६४	३०९	धीर पुडीर पातिसाह ग्रहण	३६		धीर पुडीर हस्तेन पातिसाह ग्रहण	,,	धीरेण साहाबदीन निग्रह	+
		धीर वधन[५]	३७		धीर पुडीर वध	-	×	×

३. वृहत रूपान्तर का कनवज्ज कथा खड मध्यम रूपान्तर में आठ खडा तथा लघु रूपान्तर में ६ खडो में विभक्त है।

४. वृहत् रूपान्तर का सुक विलास खंड मध्यम रूपान्तर के दिल्ली आगमन खड मे अन्तर्मुक्त हो जाता है।

५. वृहत् रूपान्तर का ६४ वाँ खड मध्यम रूपान्तर की अधिकाश प्रतियो में दो खडों में विभक्त है।

बृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खंड सं०	रूपक सं०	खड का नाम	खंड सं०	रूपक स०	खड का नाम	खंड सं०	खंड का नाम	यह प्रसंग है + या नही है ×
[६१]		षट रितु वर्णन (ऊपर देखिए)	[३८]		षट रिति शृङ्गार वर्णन	,,	षट रितु वर्णन[६]	+
६५	११६	राजा आखेटक चख श्राप[७]	-		×	-	×	×
६६	[३]	प्रथिराज विवाह	-		×	-	×	×
६७	४६	समरसी दिल्ली सहाय[८]			×		×	×
६८	८६२	बड़ी लड़ाई	३६	१६७	राजा स्वप्न कथा	१४	चामुंड बंध मोचन	+
		राजा ग्रहण			रावल समरसी आगमन		सर्व सामंत मंत्र	+
		चद दिल्ली आगमन[९]			चामुंड राइ बंध मोचन			
					सूर सामत मत्र वर्णन			
			४०	१७३	जालंधर देवी स्थाने	१५	चंद विरोध	×
					हाहुलिराइ हम्मीरेण व्याजेन चद निरोधन			
					युद्धार्थ सेना समागम			
					गृद्ध व्यूह रचना		व्यूह रचना	+
					जालंधर देवी स्थाने	१६	युद्ध वर्णन	+
					महेश वीरभद्र यज्ञ			
					वेताल योगिनी संवाद			

६. लघु रूपान्तर में ढिल्ली आगमन, धीर पुन्डीर पातिसाह ग्रहण तथा षट रितु वर्णन प्रसग एक ही खंड में आए है।

७. स० १७६० की और पिछली कई प्रतियो में आखेटक चख श्राप खड धीर पुन्डीर खड के पहले आया है।

८. स० १७६० और पीछे की प्रतियो में बडी लडाई खड के अतर्गत।

९. वृहत् रूपान्तर का बड़ी लड़ाई खड मध्यम रूपान्तर की अधिकाश प्रतियो में ४ खंडों में, तथा लघु रूपान्तर में पाँच खण्डो में विभक्त है।

वृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खं॰ सं॰	रूपक सं॰	का नाम	खं॰ सं॰	रूपक सं॰	खंड का नाम	खं॰ सं॰	खंड का नाम	यह प्रसंग है + या नहीं है ×
			४१	४७	जुद्ध वर्णन समली गिधनी संजोगिताग्रे सूर सामत पराक्रम कथन-वीर विभाइ आगमन	१७	युद्ध वर्णन	+
			४२	६६	जुद्ध वर्णन वीर विभाइ सजोगिताग्रे सूर सामंत पराक्रम वर्णन, सजोगिता सूर्यमडल आगत, पृथ्वीराज ग्रहण, जालधर देवी स्थाने चंद वीरभद्र परस्पर वार्ता, चंद मोक्षण, चंद ढिल्ली आगमन	१८	राजा ग्रहण चद इन्द्र-प्रस्थागमन	+

[४८३]

खं॰ सं॰	रूपक सं॰	का नाम	खं॰ सं॰	रूपक सं॰	खंड का नाम	खं॰ सं॰	खंड का नाम	यह प्रसंग है + या नहीं है ×
६९	२३८	बान बेध, राजा चंद सुजस करन, पश्चात् वधन	४३	१६७	कविचंद गज्जनपुर आगत— गोरी चंद परस्पर वार्ता— पृथ्वीराज हस्तेन गोरी साहाबदीन वधन[1]	१९	पृथ्वीराज गोरी साहाबदीन मरण	+
७०	११२	रैनसी जुद्ध जैचंद गंगासरन[2]	-	-	×	-	×	×

१ मध्यम रूपान्तर की कुछ प्रतियो में यह खण्ड नही पाया जाता।

२. मुदित प्रति में इस खण्ड की सख्या ६८ वी है।

पृ० रासो की परम्पराओं का पौर्वापर्य सम्बन्ध

१२. कथा प्रसंगो और खंडो की तुलनात्मक तालिका से इन चारो रूपान्तरों के पारस्परिक सम्बन्ध का पता चलता है परन्तु वह सबध किस प्रकार का है, इसका निश्चय इस आधार पर करना सरल नही है। डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी जैसे विद्वान का अनुमान है कि अन्तिम तीनो रूपान्तर वृहत् से ही क्रमशः सक्षिप्त किए गये हैं।[१] इसके विपरीत अगरचंद नाहटा और नरोत्तमदास स्वामी की धारणा है कि वृहत् रूपान्तर लघुतम का परिवधित और प्रक्षेपपूर्ण रूप है।[२] पाठ विज्ञान के विशेषज्ञ डा० माताप्रसाद गुप्त ने 'बलाबल' की दृष्टि से वृहत् मध्यम और लघु तीन रूपान्तरो की तुलना करते हुए यह स्थापित किया है कि लघु और मध्यम वृहत् के अथवा लघु मध्यम का संक्षिप्त रूपान्तर नही है। डाक्टर गुप्त के विश्लेषण का साराश इस प्रकार है—

विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि वृहत् तथा मध्यम में ४६ स्थानो में से केवल १६ स्थानो पर बलाबल सम्बन्धी समानता है, शेष स्थानो पर विषमता है। वृहत् और लघु मे ४६ स्थानो मे से केवल ५ स्थानो पर समानता है, शेष स्थानो पर विषमता है, और मध्यम तथा लघु मे ५१ स्थानो मे से केवल २४ स्थानो पर विषमता है। यदि वृहत् से मध्यम या वृहत् से लघु या मध्यम से लघु का सक्षेप हुआ होता, तो तीन मे से किन्ही भी दो पाठो में तो इस प्रकार की विषमता न होती। होता यह कि वृहत् की तुलना मे मध्यम और लघु मे और मध्यम की तुलना में लघु मे अतिशयोक्ति की मात्रा अधिक मिलती। किन्तु बात सर्वथा भिन्न मिलती है। दो चार अपवादो को छोड़कर जो प्रतिलिपि-प्रक्रिया मे हो ही जाते है, जहॉ पर भी बलाबल सम्बन्धी अन्तर है, लघु की अपेक्षा मध्यम मे मध्यम की अपेक्षा बृहत् मे और मध्यम तथा लघु दोनों की अपेक्षा वृहत् मे ही अतिशयोक्ति की प्रबलता है। इसलिए यह

---

१ सक्षिप्त पृथ्वीराज रासो, भूमिका, १६५२ ई०।

२. राजस्थान भारती, भाग १, अप्रैल १६४६ ई०।

अनुमान निराधार है कि लघु और मध्यम वृहत् के अथवा लघु मध्यम का संक्षिप्त रूपान्तर है।"[१]

इस तुलना-क्रम में डा० गुप्त ने लघुतम रूपान्तर को नही लिया है, फिर भी इस निष्कर्ष के आधार पर यह कहा जा सकता है कि जो रूपान्तर आकार की दृष्टि से लघुतर है वे अपने से बडे रूपान्तरो के संक्षिप्त रूप नही हैं। यह नियम लघुतम रूपान्तर के विषय मे भी लागू हो सकता है।

परन्तु इससे यह तो साबित नहीं होता कि अपेक्षाकृत बडे रूपान्तर छोटे रूपान्तरों के परिवर्धित रूप हैं। इस आधार पर यह भी नहीं कहा जासकता कि बडे आकार वाले रूपान्तर परवर्ती हैं। इस तुलना से केवल इतना ही स्पष्ट होता है कि इन रूपान्तरो की परम्पराएँ भिन्न हैं। जब तक इन रूपान्तरों के पारस्परिक संबंध पर प्रकाश डालनेवाले अन्य तथ्य खोज नहीं निकाले जाते, तबतक इससे अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता। रूपान्तरो के पौर्वापर्य-सम्बन्ध काल-निर्णय के दूसरे आधार भी हो सकते हैं।

वृहत् और लघुतम में भाषा-भेद

१३. भाषा-विज्ञान के विद्यार्थी के लिए इन रूपान्तरों के भाषा-सम्बन्धी तथ्यों का तुलनात्मक अध्ययन विशेष उपयोगी है। यदि सभी रूपान्तरों से मिलते-जुलते कुछ समान छंद एक साथ लिए जायँ और फिर उनमे से समान शब्दों के सभी प्राप्त रूपो को रूपान्तर-क्रम से देखा जाय तो विकास की विभिन्न अवस्थाओं का पता चल सकता है। सुविधानुसार यहाँ वृहत् और लघुतम केवल दो रूपान्तरों के कनवज समय से दो उभयनिष्ठ छंद लिए जा रहे हैं। वृहत् रूपान्तर के उद्धरण नागरी प्रचारिणी सभा की प्रति से लिए गये हैं और लघुतम रूपान्तर के उद्धरण धारणोज की प्रति से।

ग्यारह सइ इक्कावनई चैत तीज रविवार।
कनवज पिख्खण कारणइ चालिउ संभरिवार॥

---

१. 'पृथ्वीराज रासो' के तीन पाठों का आकार-सम्बन्ध, अनुशीलन, वर्ष ७, अङ्क ४, अगस्त १९५५ ई०।

सत सुभट्ट ले समुहो पंगुराय ग्रिह साज।
कै जानइ कवि चद अरु कै जानइ प्रिथीराज॥
लघुतम, कनवज समय, १–२

ग्यारह सै एकानबै चैत तीज रविवार।
कनवज पिखन कारनैं चल्यो सु समरिवार॥
कै जानै कवि चद इ कै प्रयांन पृथीराज।
सित सामंत सुसमुहे पगुराय ग्रह काज॥
बृहत्, कनवज समय, १०२, ७८

(क) इन छन्दो मे से तुलना के लिये एक ओर *इक्कावनइ* और *दिक्खरण* तथा दूसरी ओर *एकानवै* और *पिखन* शब्द लिए जा सकते हैं। लघुतम रूपान्तर में यदि व्यंजन-द्वित्व सुरक्षित है तो बृहत् मे उसका सरलीकृत रूप मिलता है। सरलीकरण के लिये एक जगह सरलीकृत व्यजन से पूर्ववर्ती स्वर को क्षतिपूर्ति के लिये दीर्घ कर दिया गया है[1], तो दूसरी जगह पूर्ववर्ती स्वर को दीर्घ किए बिना ही व्यंजन का सरलीकरण हो गया है। इसके अतिरिक्त लघुतम के *सइ*, *इक्कावनइ*, *कारणइ*, *जानइ*, इत्यादि शब्दों मे अन्त्य सयुक्त स्वर *अइ*, सुरक्षित है तो *सै*, *एकानवै*, *कारनैं*, *जानै* मे वे सयुक्त स्वर संकुचित होकर–ऐं हो गये हैं। स्वर संकोचन (Vowel-Contraction) की यह प्रवृत्ति *चालिउ* से बने हुए *चल्यो* रूप मे भी देखी जा सकती है।

(ख) व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण और स्वर-सकोचन—ये दोनों प्रवृत्तियाँ अपभ्रंश के बाद की अवस्था के प्रमाण हैं। आधुनिक आर्यभाषाओं मे यह प्रवृत्ति क्रमशः प्रबल होती चली गई।

लघुतम की अपेक्षा बृहत् मे यह प्रवृत्ति अधिक व्यापक दिखाई पड़ती है।

१—ए, इ का वस्तुतः दीर्घ रूप नहीं है, इ का दीर्घ तो ई होता है लेकिन यहां उच्चारण की दृष्टि से इ और ए में गुण-संबंधी अंतर उतना नहीं है जितना मात्रा संबधी।

इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि वृहत् की अपेक्षा लघुतम मे भाषा के प्राचीन रूप अधिक सुरक्षित हैं।

(ग) *कारणइ* और *कारनैं* की तुलना से लघुतम और वृहत् की भाषा में एक अन्य अतर का सकेत मिलता है। वृहत् मे प्रायः *ण* को *न* कर देने की प्रवृत्ति है; जब कि लघुतम का झुकाव *ण* की ओर है। इसे राजस्थान-गुजरात का प्रादेशिक प्रभाव भी कहा जा सकता है और प्राचीनता का प्रमाण भी माना जा सकता है क्योकि प्राकृत-अपभ्रंश मे *ण* की प्रवृत्ति प्रबल थी।

(घ) इसी तरह 'ग्रिह साज' का 'ग्रह काज' रूपान्तर अर्थान्तर के साथ ही, वृहत् की एक विशेष ध्वनि-प्रवृत्ति को सूचित करता है। लघुतम जहाँ 'ऋ' के लिए 'रि' का प्रयोग किया गया है, वहाँ वृहत् मे केवल 'र' है। लघुतम यदि 'प्रिथीराज' का प्रयोग करता है तो वृहत् 'प्रथीराज'। इस अतर को लिपि-संबधी प्रभाव भी कहा जा सकता है परन्तु जैसा आधुनिक राजस्थानी की उच्चारण-प्रवृत्ति से पता चलता है, 'प्रिथीराज' के लिये 'प्रथीराज' का उच्चारण वहाँ की प्रादेशिक विशेषता है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वृहत् के उच्चारण पर कही कही आधुनिक राजस्थानी का प्रभाव लक्षित होता है किन्तु लघुतम मे भाषा के प्राचीनतर उच्चारण की रक्षा की गई है।

(ङ) उपर्युक्त छंदों के अतिरिक्त अन्यत्र पृथ्वीराज रासो के वृहत् रूपान्तर मे छन्द के अन्तर्गत मात्रा पूर्ति के लिए सयुक्त व्यजन के रूप में परवर्ती र के समावेश की प्रवृत्ति बहुत दिखाई पडती है। ऐसे सयुक्त व्यजन के बाद आने वाले व्यंजन का प्रायः द्वित्व हो जाता है, जैसे :—

कर्म>क्रम्म
गंधर्व>गंध्रब्ब
गर्व>ग्रब्ब
दर्पण>द्रप्पन
घर्म>घ्रम्म
निर्माण>न्रिम्मान
मर्यादा>म्रज्जाद
सर्प>स्रप्प
सर्व>स्रब्ब

यह प्रक्रिया सर्वत्र मात्रा-पूर्ति के लिए ही अपनाई गई नही प्रतीत होती। कहो

तो शैली को ओजपूर्ण बनाने के लिए ऐसा किया गया है और कही सभवतः स्थानीय उच्चारण का प्रभाव मालूम होता है। इस प्रवृत्ति के लिए चाहे जो संतोषप्रद व्याख्या दी जाय, किन्तु इतना निश्चित है कि लघुतम रूपान्तर की अपेक्षा वृहत् में इसकी बहुलता है। दोनो की भाषा मे यह महत्त्वपूर्ण अन्तर है।

(च) शब्द समूह के विभिन्न तत्वो के विश्लेषण से पता चलता है कि वृहत् रूपान्तर मे अरबी-फारसी शब्दो की बहुलता है। वृहत् की अपेक्षा लघुतम में अरबी-फारसी शब्द कम हैं जैसे, *साह (शाह), फवज (फौज), दरबार, तुरुक (तुर्क)* इत्यादि। फारसी शब्दो की बहुलता वृहत् रूपान्तर को परवर्ती प्रमाणित करने वाले तथ्यो में से एक कही जा सकती है।

इस प्रकार भाषा की दृष्टि से लघुतम रूपान्तर अपेक्षाकृत प्राचीन शब्द-रूपो को सुरक्षित रखने की ओर प्रवृत्त दिखाई पडता है और इसलिए भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन के लिए लघुतम रूपान्तर अधिक उपयोगी कहा जा सकता है।

रासो का केन्द्र : कनवज्ज समय

१४. पृथ्वीराज रासो की समस्त प्राप्त परम्पराओं में जिस प्रसङ्ग का सबसे अधिक विस्तार मिलता है, वह है सयोगिता-विवाह तथा जयचन्द के साथ पृथ्वीराज का युद्ध। वृहत् रूपान्तर मे इसका वर्णन **'कनवज्ज समय'** के अन्तर्गत किया गया है। लघुतम रूपान्तर समय, प्रस्ताव, पर्व अथवा खंड के आधार पर विभाजित नहीं है, फिर भी सुविधा के लिए इस प्रसङ्ग को 'कनवज्ज समय' कहा जा सकता है। अन्य रूपान्तरों की तरह लघुतम मे भी 'कनवज्ज समय' सबसे बड़ा है। सच पूछा जाय तो लघुतम रूपान्तर में मुख्यतः तीन ही कथा प्रसङ्ग है—कैमास वध, संयोगिता विवाह और पृथ्वीराज-गोरी युद्ध। इन तीनो मे से संयोगिता-विवाह की ऐतिहासिकता विवाद-ग्रस्त है। फिर भी इस कथा-प्रसङ्ग का विस्तार और काव्यात्मक सौन्दर्य देखकर विद्वानों ने अनुमान लगाया है कि 'कनवज समय' ही मूल रासो है। डा० धीरेन्द्र वर्मा लिखते हैं कि "पाठक पर पहला प्रभाव यही पड़ता है कि ६१ वॉ कनवज-समय रासो का प्रधान केन्द्रीय समय है। आश्चर्य नहीं कि पृथ्वीराज के संयोगिता के साथ विवाह के

अनुकरण में अन्य कवियों ने शेष नौ विवाहों की भी धीरे-धीरे कल्पना कर डाली हो। इसी प्रकार संयोगिता के पूर्वजन्म तथा पूर्वानुराग आदि से सम्बन्ध रखने वाले अनेक समयो की, जो ४५ से ६६ समयो के बीच पाए जाते हैं, कल्पना धीरे-धीरे हुई हो।"[1]

इस प्रकार 'कनवज्ज समय' पृथ्वीराज रासो का मूल रूप हो या नही, किन्तु उसे केन्द्र-विन्दु तो अवश्य ही कहा जा सकता है। तुलसी के रामचरितमानस में जो स्थान द्वितीय सोपान, अयोध्या कारड, का है लगभग वही स्थान पृथ्वीराज रासो मे कनवज्ज-समय का है। इसमे रासो की साहित्य और भाषा-सम्बन्धी प्रायः सभी प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व हो जाता है। इसी तथ्य को ध्यान मे रखकर प्रस्तुत अध्ययन के लिए लघुतम रूपान्तर के कनवज-समय को आधार बनाया गया है।

वृहत् और लघुतम के कनवज्ज-समय की तुलना

१५. वृहत् कनवज-समय मे षड्-ऋतु वर्णन के ७३ छन्दों को लेकर कुल २५५३ छन्द हैं जब कि लघुतम की छन्द संख्या केवल ३४६ है। इस प्रकार वृहत् कनवज-समय लघुतम का सातगुना है। इस आकार-विस्तार को दो भागो मे विभाजित किया जा सकता है—वर्णन सम्बन्धी विस्तार और नवीन प्रसगोद्भावना। जो बात लघुतम में एक छन्द मे कही गई है उसे वृहत् ने अनेक छन्दों मे विस्तार दिया है। कन्नौज की ओर पृथ्वीराज की यात्रा, गगा माहात्म्य, कन्नौज नगर की शोभा, जयचन्द की राज-सभा और सैन्य शक्ति, चन्द के साथ छद्म वेश मे पृथ्वीराज का पग दरबार में प्रवेश, पृथ्वीराज संयोगिता-मिलन तथा गन्धर्व-विवाह, जयचन्द से पृथ्वीराज का युद्ध इत्यादि मुख्य प्रसग ऐसे हैं जो दोनों रूपान्तरों मे समान हैं तथा इनसे सम्बन्धित कुछ छन्द भी प्रायः एक से हैं। वृहत् मे उन छन्दो के अतिरिक्त और भी बहुत से छन्द हैं। कही तो वर्णन-विशेष से सम्बद्ध उसी ढंग के छन्द अन्त में बढ़ाए गए दिखाई पड़ते हैं और कहीं छन्द का ढग भी बदल दिया गया है। परन्तु इस प्रकार का विस्तार बहुत कम है। वृहत् रूपान्तर मे वस्तुतः लघुतम की अपेक्षा कथा-प्रसङ्ग

---

१ पृथ्वीराज रासो, काशी विद्यापीठ रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ, १९४६ ई०, पृ० १७२.

अधिक हैं। उदाहरण के लिए पृथ्वीराज की कन्नौज-यात्रा में वृहत् के अन्तर्गत निम्न-लिखित प्रसङ्ग अधिक हैं—

१. जमुना-किनारे पडाव; २. अपशकुनों की लम्बी सूची[1]; ३. सामन्तों का नाम-परिगणन और वर्णन; ४. अलौकिक घटनाएँ; जैसे एक-एक करके देवी, शिव, हनुमान, इन्द्र सहस्रबाहु और सरस्वती अलग अलग आदमियों को आकर दर्शन देते है और भविष्यवाणी करके अभय देते हैं; एक अतिमानवीय सुन्दरी सहसा पृथ्वीराज को अजेय बाण देकर लुप्त हो जाती है; ५. नागा साधुओ की फौज; ६. सद्धधुनी साधुओ का वर्णन ;

यह विस्तार स्पष्ट रूप से अनावश्यक और अप्रासङ्गिक है। अपशकुनो की कल्पना केवल प्रमुख सामन्तो की मृत्यु को पुष्ट करने के लिए बाद मे की गई और पूर्व सूचना के रूप मे जोडी गई प्रतीत होती है। अलौकिक और अतिमानवीय घटनाओ के लिए भी ऐसी ही व्याख्या प्रस्तुत की जा सकती है।

जयचन्द के दरबार में चन्द के प्रवेश को लेकर भी इसी प्रकार चन्द की अलौकिक प्रतिभा के अनेक प्रमाण दिए गए हैं। चन्द और जयचन्द की बातचीत में भी 'वरद्द' शब्द पर श्लेष-जनित नोक-झोक एकदम नई चीज है। परन्तु इससे भी बढ़कर विचित्र बात वह है जब चन्द जयचन्द को यह बतलाता है कि जिस समय महाराज दक्षिण गए थे, शहाबुद्दीन गोरी ने कन्नौज पर आक्रमण किया था और पृथ्वीराज ने उनकी अनुपस्थिति मे कन्नौज की रक्षा की थी। इस घटना का वर्णन वृहत् में शताधिक छन्दो मे किया गया है। प्रसङ्ग को देखते हुए यह घटना सर्वथा अप्रासंगिक प्रतीत होती है। यदि यह सच भी होती, तो सम्भव नहीं प्रतीत होता कि जयचन्द इतनी महत्वपूर्ण घटना से अब तक अनभिज्ञ रहे होगे और चन्द को उसकी याद दिलाने की जरूरत पडी होगी। इसी प्रकार चन्द के सेवक रूप मे छद्मवेशी पृथ्वीराज को कुछ-कुछ पहचान लेने के बाद भी जयचन्द का शिकार के लिए तैयारी करना अविश्वसनीय प्रतीत होता है। स्वयं महाराज जयचन्द का कवि चन्द के डेरे पर जाना भी वृहत् रूपान्तर की ऐसी ही अविश्वसनीय घटनाओं में से एक है। पृथ्वीराज के

१. लघुतम में केवल शकुनो का उल्लेख है।

वास-स्थान को छोड़ते समय जिस विस्तार से जयचन्द की सेना का वर्णन किया गया है और साथ ही जयचन्द द्वारा पृथ्वीराज को पकड़ने के लिए मुसलमानी सेना को आज्ञा देने की बात कही गई है, उसे भी वृहत् की अपनी कल्पना समझनी चाहिए। आगे चलकर युद्ध वर्णन मे ऐसे बहुत से नये सामन्तो के शौर्य की चर्चा आई है जो लघुतम मे अनुल्लिखित हैं।

सक्षेप मे वृहत् रूपान्तर के कनवज्ज समय के इतने विस्तार का यही आधार है।

१६. वृहत् और लघुतम कनवज्ज समय के छन्द क्रम मे भी कहीं-कहीं परिवर्तन दिखाई पड़ता है। कथा प्रवाह और प्रासगिकता की दृष्टि से वे छन्द लघुतम मे जिस क्रम से आये है, वह ठीक प्रतीत होता है। मेरे विचार से क्रम-भग वृहत् मे ही हुआ है। कनवज समय के अन्तर्गत कुल मिलाकर ५ स्थानो पर छन्दो मे क्रम-विपर्यय हुआ है। इन स्थलो की तुलनात्मक तालिका निम्नलिखित है।

	लघुतम	वृहत्
छन्दः क्रम संख्या	१,२	१०२, ७८
	८७,८८,८६	४६८,५०४,४६७
	६१,६२	५१३,५१०
	२११,२१२,२१३	१३४६,१७०६,१३४७
	२६७—३१५	१७०४ और १७३३ के बीच सहसा २१४६ से २३१४ तक के छन्द*

वृहत् रूपान्तर मे छन्दो के इस क्रम विपर्यय से कथा-सूत्र जोडने मे बड़ी कठिनाई उपस्थित होती है। सम्भवतः प्रसंगान्तर और प्रक्षेप के कारण ही यह गड़बडी उपस्थित हुई और इससे इस स्थापना को बल मिलता है कि वृहत् परवर्ती प्रक्षिप्त रूपान्तर है तथा इसका संकलन अथवा संग्रह पीछे हुआ है।

---

* युद्ध वर्णन के मिलसिले में वृहत में बहुत बडे पैमाने पर छन्दो का यह क्रम विपर्यय हुआ है उल्लिखित तिथियो के आधार पर उसकी असगति स्पष्ट हो जाती है।

१७. लघुतम रूपान्तर के कनवज्ज समय में कुछ छन्द ऐसे भी हैं जों बृहत् की सभा वाली प्रति मे बहुत खोजने पर भी प्राप्त नही हुए। ये छन्द कुल मिलाकर २७ हैं और इनकी क्रम सख्या निम्नलिखित हैं।

२१ से २५ तक ६४, २०३ से २११ तक, २२६ और २२६

बृहत् मे इन छन्दो के मिलने की कोई युक्ति संगत व्याख्या वर्तमान स्थिति में दे सकना सम्भव नही है।

कनवज्ज समय की वार्ताएँ

१८. छन्दों के अतिरिक्त लघुतम के कनवज्ज समय में ३० गद्य वार्ताएँ भी हैं। गद्य-वार्ताएँ रासो के वृहत् रूपान्तर में भी हैं। वार्ताओं का प्रयोग प्रायः कथा-सूत्र जोडने अथवा स्पष्ट करने के लिए हुआ है। काव्य-ग्रन्थों मे बीच-बीच में गद्य-वार्ता जोड़ने की यह प्रवृत्ति कुछ अन्य काव्यों में भी दिखाई पड़ती है। 'ढोला मारू-रा दूहा' नामक पुरानी राजस्थानी रचना की भी कुछ ऐसी प्रतियां प्राप्त हुई हैं जिनमें दोहो के बीच जगह-जगह चौपाइयाँ तथा गद्य-वार्ताएँ जोड़ी गई हैं।[1] इससे कथा-त्मक काव्यों मे गद्य-वार्ता जोड़ने की परम्परा का पता चलता है। विद्वानों का अनु-मान है कि इस वार्ता परम्परा का प्रचलन सोलहवीं शताब्दी के आसपास अथवा बाद में हुआ होगा। काव्य-ग्रन्थो मे सन्निविशिष्ट वार्ताओ के अतिरिक्त आद्योपान्त केवल गद्य की स्वतन्त्र वार्ताएँ भी प्राप्त होती है जिनमे 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' अत्यन्त प्रसिद्ध है। ऐसा प्रतीत होता है कि मध्ययुग में गद्य के लिए 'वार्ता' शब्द रूढ़ हो गया था। वृहत् मे वार्ताओ के लिए कही-कहो 'वचनिका' शब्द का भी प्रयोग किया गया है, किन्तु लघुतम मे सर्वत्र 'वार्ता' शब्द ही व्यवहृत है।

१९. लघुतम कनवज्ज समय की वार्ताएँ परवर्ती संलग्न पद्य-संख्या के संदर्भ सहित निम्नलिखित हैं।

१. सावंत टारियान लागे कुण कुण। (३)

२. राजा प्रिथीराज चालंता शकुन होइत हइ। (४)

---

१. ढोला मारू-रा दूहा, नागरी प्रचारिणी सभा. काशी, १९३४ ई०, प्रस्तावना, पृष्ठ १२।

३. राजा कूँ इह उत्कठा भयी। सावतन की पाछिली आस गयी। राजा नै आइस दीन्हो जे ठाकुर पंगुराय प्रगट है ताकी आधीन हुइ के रूपो दुरावो वा-की कैसा रूप ही। साथि आवउ सामतनु मानिया निसा जुग एक रुजनी। (९)

४. राजा गंगा जाइ देखी। (२०)

५. राजा स्नान कीयो। सामंतन ने स्नान कीयो। तब राजा गंगा को समरनु करत है। (२६)

६. तब लगि अरुनोदय भयो। गगोदक भरिवे के निमित्त आनि ठाढ़ी भयी, मानो मुकति तीरथ दोऊ सकीरन भये यों जानियतु है। (३१)

७. ते किसी-एक पनिहारी है। (३३)

८ सदेह देवी वर्णन छै। (५८)

९. अवहि नगर देखत है। (६७)

१०. चांद राजा के दरबार ठाढो रह्यो। (८३)

११. राजा ने पूछ्यो—दड आडंबरी भेख धारी सुकब्वि च्यारि प्रकार भट्ट प्रवर्ततु है। देखो धौ जाइ इनमे को है। (८७)

१२. छहै भाखा नो रस चांदु कहतु है (८८)

१३. अथ चांद भाट राजा जैचंद को वर्णवतु है। (८९)

१४. देख्यो ए भविष्यत् दरिद्र को छत्रु लिये फिरै। चोहान को बोल याकै मुँहि क्यो निकसै। (१०६)

१५. राजा पूछइ ते चंद उतर देत हइ। (१०८)

१६. देखे भलो भार है। जाको लून-पानि खात है ताको पूरउ बोलत है। राजा मनि चितवत है (१०९)

१७. पुनः चांद वाक्यं। (११०)

१८. ता रनवास की दासी सुगंधादिक घनसार म्रिगमद हेम-संपुट सुरलोक वहु चलि अच्छरी समान। (११५)

१९, राजा अनेग हास्य करन लागे। अनेग राजान के मान-अपमान लगि अंबर तै दिन-यर अदरसै। (१२७)

२०. अह निसा तो राश्रो जोग वीवहि निसा पंगुरहि को जाति है। (१२८)

२१. पात्रनाम—दर्पकांगी, नेतचंगी, कुरगी, कोकाची, कोकिलाशगी, मे भागवानी, अंगाल लोल डोल एक बोल अमोल पुष्फांजली पंग सिर नाइ जयति पिय कामदेव। (१३१)

२२. राजा कइसी नींद विसारि। (१४०)

२३. रात्र गते ये राजा अर्क सो देखयतु है। (१४१)

२४. राजा आइसु ते गीज सोधा चहुवान को भट्ट आयो है, ताहि इतनो दज्यो। (१४६)

२५. राजा प्रिथीराज कनवजहि फिरि आवतु हइ। इतने सामंतन सूं पंगु राजा को कटकु सज्ज होइ लरतु है। (१५३)

२६. ए तो राजा कूं सुख प्रापत भय। सावंतन की कुण अवस्था हुइ। (१७९)

२७. तउलूं राजा आव देखइ जेसो मदमत्त हस्ती होइ। (१८२)

२८. राजा कहै—संग्राम विखै स्त्री विवर्जित है। (१८८)

२९. राजा प्रिथीराज फोज वांपत है। भुमरावली छंद इही वांचीइ (२०३)

३०. पहिली सामंत सू झूसे तिनके नाउं अरु वरखानु कहतु है। (३१५)

२०. *वार्ताओं की भाषा* स्पष्टतः परवती है। पद्य की भाषा इनसे कही अधिक प्राचीनतर है। कुछ वार्ताओ मे 'कौन' के लिए राजस्थानी *कुण* (२, १७६), गुजराती सबंध परसर्ग *नो* (८८) तथा गुजराती की अस्तिवाचक क्रिया *छै* (५८) का प्रयोग आदि विशेषताएँ ऐसी हैं जो रासो के पद्यो की भाषा मे कही नही मिलतो। इनके अतिरिक्त वार्ताओ की भाषा सबधी कुछ मुख्य विशेषताएँ ऐसी हैं जो हिंदी भाषा की आपेक्षाकृत आधुनिक अवस्था से सबद्ध हैं।

(१) भूतकाल की सकर्मक क्रिया के कर्ता के साथ कर्तृ-करण-परसर्ग ने अथवा नै का प्रयोग :—

राजा नै आइस दीन्हों (६)
राजा ने पूछ्यो (८७)
सामंतन ने स्नान कियो (२६)

(२)—*अत* वाले वर्तमानकालिक कृदंत + अस्तिवाचक सहायक क्रिया-रूप से संयुक्त काल का निर्माण :—

होइत हइ (४) *आवतु है* (१५३)
करत है (२६) *लरतु है* (१५३)
कहतु है (८८, ३१५) *देत हइ* (१०८)

(३)—*इयतु* वाले कृदन्त के द्वारा कर्मवाच्य की रचना—
यौं जानियतु है (३१), *देखियतु है* (१४१)

(४)—*अन* प्रत्ययान्त क्रियार्थक सज्ञा के सयोग से आधुनिक ढंग की सयुक्त क्रिया की रचना :—

करन लागे (१२७), *टारियान लागे* (१)

(५) लिगानुशासित भूतकृदन्त क्रिया-रूपो का अस्तित्व :—
भयी, (६, ३१) *गयी* (६) *देखी* (२०) इत्यादि ।

(६) आधुनिक ढग के पूर्वकालिक कृदन्त रूप :—
हुई कै (६) = होकर, होके

इन तथ्यो से प्रमाणित होता है कि पृथ्वीराज रासो की भाषा पर विचार करते समय वार्ताओं को अलग रखना ही युक्तिसंगत हैं ।

कनवज्ज समय के संस्कृत छन्द

२१. वृहत् की तरह लघुतम रूपान्तर मे भी कुछ संस्कृत भाषा के छन्द मिलते हैं । लघुतम मे सस्कृत छन्दो की सख्या कुल मिलाकर केवल आठ है जो विभिन्न छन्दों के अनुसार इस प्रकार है :—

काव्य—२० ६५, १४१

साटक—१४०

आर्या –१४७

श्लोक—१७६,* १८८, १६४

हिन्दी काव्यो की, सस्कृत भाषा मे रचे गए छन्दो से अलंकृत करने की परपरा काफी पुरानी है। तुलसीदास के रामचरित मानस मे भी सस्कृत के अनेक पद्य हैं। विद्वानो ने तुलसी के संस्कृत पद्यो की संस्कृत भाषा मे व्याकरण सबन्धी भूलो की ओर सकेत किया है। ऐसी स्थिति मे रासो के सस्कृत पद्यो की भाषा का त्रुटिपूर्ण होना विशेष आश्चर्य की बात नहीं है। बौद्ध ग्रन्थो की 'गाथा सस्कृत' की तरह यह संस्कृत भी काफी गडबड है। इसलिए इसे सस्कृताभास हिन्दी कह सकते हैं।

प्राकृत छन्द

२२. लघुतम कनवज समय मे प्राकृत की सात गाथाएँ भी है। इनकी छन्दः क्रम-संख्या १६७, २०१, २६७, २७३, २८०, २८१ और ३१६ है। इन गाथाओ की भाषा प्राकृताभास हिन्दी है। ये प्राकृत गाथाएँ रासो के सभी रूपान्तरो मे मिलती हैं। ये वार्ताओ की तरह प्रक्षिप्त नही हैं बल्कि रासो का अभिन्न अग प्रतीत होती हैं। इसकी पुष्टि 'षड्भाषा' परपरा से भी होती है।

रासो और षड्भाषा

२३. रासो के प्रायः सभी रूपान्तरो मे इस आशय के छन्द आते है कि इसमे षड् भाषा का प्रयोग किया गया है। लघुतम के कन्नवज समय मे भी एक छन्द मे इसका संकेत मिलता है।

अभोरुहमानद जोइ लरि सो दाडिम्म लो बीय लो।

लोयदे चलु चालु आरु कलऊ बिबाय कीयो गहो॥

---

* वस्तुत यह श्लोक है अर्थात् इसका छन्द अनुष्टुप् है। गलती से इस छन्द को रासो मे 'गाथा' कहा गया है।

के सीरी के साहि बेयन रसो विक्किसकी नागवी।
इंदो मध्य सु विद्यमान विहना ए षष्ठ भाषा छंदो ।।८८।।

'षड्भाषा' की परपरा कालान्तर मे कुछ बदलती गई; फिर भी सस्कृत, प्राकृत (महाराष्ट्री), शौरसेनी, मागधी, पैशाची और अपभ्र श को षड्भापा के अन्तर्गत स्वीकार करने की परपरा प्रधान थी। इसकी पुष्टि 'षड्भाषा-चन्द्रिका' से भी होती है। मालूम होता है, राज्य-सम्मान प्राप्त करने के लिए कवि को पिगल और अलंकार-शास्त्र की तरह 'षड्भाषा' की जानकारी का भी प्रमाण देना पडता था। इसलिए मध्ययुग के राजकवि अपनी रचनाओ मे 'भाषा' के अतिरिक्त यथास्थान षड्भाषा के भी कुछ छन्द रख दिया करते थे। षड्भाषा रासो काव्य की प्रकृति नही, बल्कि अलकरण है और अधिक-से-अधिक शैली विशेष का परिचायक है।

भाषा की मूल प्रवृत्ति

२४. सस्कृत श्लोको, प्राकृत गाथाओ और प्रक्षिप्त गद्य-वार्ताओ को छोड़कर पृथ्वीराज रासो की सामान्य भापा का एक निश्चित और नियमित ढॉचा है। लघुतम रूपान्तर के 'कनवज समय' के पाठ को आधार बनाकर तथा सभा की प्राचीनतम प्रति के पाठातरो को तुलनात्मक रूप से सामने रखकर इस रचना की भाषा के सम्बन्ध मे मैने जिन तथ्यो की खोज की है, उनका साराश निम्नलिखित है।

अ. ध्वनि-विचार

(१) छन्द के अनुरोध से प्रायः लघु अक्षर को गुरु और गुरु अक्षर को लघु बना दिया गया है। लघु को गुरु बनाने के लिए शब्दान्तर्गत (क) ह्रस्व स्वर का दीर्घीकरण, (ख) व्यजन द्वित्व, (ग) स्वर का अनुस्वार-रजन, तथा (घ) समास मे द्वितीय शब्द के प्रथम व्यजन का द्वित्व करने की प्रवृत्ति है। इसके विपरीत गुरु को लघु बनाने के लिए (क) दीर्घ स्वर का ह्रस्वीकरण, (ख) व्यंजन-द्वित्व का क्षतिपूर्ति-रहित सरलीकरण, तथा (ग) अनुस्वार के अनुनासिकीकरण की विधि प्रयोग में लाई गई है।

(२) छन्दोऽनुरोध के अतिरिक्त भी स्वर-व्यंजन में परिवर्तन हुए हैं। उत्तराधिकार में प्राप्त प्राकृत के अर्ध-तत्सम शब्दों का प्रयोग करने के साथ ही आधुनिक आर्यभाषाओं की प्रवृत्ति के अनुसार नये तद्भव रूपो की ओर भी झुकाव लक्षित होता है। अन्त्य दीर्घ स्वर के ह्रस्वीकरण की जो प्रवृत्ति प्राकृत-अपभ्रंश-काल से ही शुरू हो गई थी, वह रासो मे पर्याप्त प्रबल दिखाई पडती है; जैसे *जोध* (=*योद्धा*), *सेन* (=*सेना*) इत्यादि।

(३) शब्द के अन्तर्गत आद्य अक्षर में प्रायः स्वर की *मात्रा* में परिवर्तन हो गया है और मात्रा सम्बन्धी यह परिवर्तन प्रायः दीर्घ से ह्रस्व की ओर दिखाई पड़ता हैं; जैसे :—

अनंद (=*आनंद*), *अहार* (=*आहार*), *जियण* (=*जीवन*) इत्यादि।

(४) शब्द के अन्तर्गत अनादि अक्षर मे स्वर के *गुण* सम्बन्धी परिवर्तन की प्रवृत्ति है; जैसे—

अ > इ : *तुरङ्ग* > *तुरिय*
> उ : *अञ्जलि* > *अंजुलिय*
ई > अ : *निरीक्ष्य* > *निरखि*
उ > अ : *मुकुट* 7 *मुकट*
> इ : *कौतुक* > *कोतिग*
ऊ > ओ : *ताम्बूल* > *तंबोल*
ए > इ : *नरेन्द* > *नरिन्द* : इत्यादि।

(५) प्राकृत-अपभ्रंश में जहाँ स्वरान्तर्गत अथवा मध्यग *क, ग, च, ज, त, द प, य, व* के लोप से उद्वृत्त स्वर अवशिष्ट रह जाता था, उनके स्थान पर धीरे धीरे *य, व* श्रुति के आगम अथवा पूर्ववर्ती स्वर के साथ उन्हे सयुक्त करने की प्रवृत्ति अवहट्ट-अवस्था से प्रारम्भ हो गई थी जिसकी प्रबलता पृथ्वीराज रासो मे भी दिखाई पडती है। रासो मे उद्वृत्त स्वर की (क) स्वतन्त्र रूप से सुरक्षित, (ख) य, व श्रुति के रूप में उच्चरित, और (ग) पूर्ववर्ती स्वर के साथ सयुक्त, तीनो स्थितियाँ मिलती हैं किन्तु प्रधानता द्वितीय स्थिति की है और तृतीय स्थिति विकास की अवस्था मे दिखाई पडती है। तीनो स्थितियो के उदाहरण निम्नलिखित है—

(क) *चउसट्ठि* < *चतुष्षष्ठि*
(ख) *नयर* < *नगर*
(ग) *रावत* < *रावुत* < *रावउत* < **राअवुत*
< *राजपुत* < *राजपुत्र*

(६) उद्वृत्त स्वर को पूर्ववर्ती स्वर के साथ संयुक्त करने की प्रवृत्ति पदान्त में विशेष दिखाई पडती है जिसका व्याकरण की दृष्टि से अत्यधिक महत्व है। इस प्रवृत्ति के कारण रासो के क्रियापद अपभ्रंश से विशिष्ट हो गए हैं और संज्ञा तथा सर्वनाम पदों मे विकारी रूपो के निर्माण की अवस्था दिखाई पडती है। *है, कहै, जानिहै, आयो, भो* आदि क्रियापद तथा *हत्थैं, तैं* आदि सज्ञा-सर्वनाम के विकारी रूप इसी प्रवृत्ति के परिणाम हैं।

(७) उद्वृत्त स्वर के अतिरिक्त मूल स्वरो में भी स्वर-संकोचन की प्रवृत्ति दिखाई पडती है। *मोर* (=*मयूर*), *समै* (=*समय*), *स्रोन* (=*श्रवण*) इत्यादि शब्द इसी प्रकार के स्वर-संकोचन के परिणाम कहे जा सकते हैं।

(८) प्राचीन व्यजन ध्वनियों में से *य* और *व* रासो में अधिकांशतः केवल श्रुति के रूप में सुरक्षित प्रतीत होते हैं। इसके अतिरिक्त प्रायः *य* *ज* में तथा *व* *ब* में परिवर्तित हो गया था। प्रतिलिपिकार ने यद्यपि *ब* के लिए भी *व* का ही प्रयोग किया है, तथापि उच्चारण मे वह *ब* ही प्रतीत होता है।

(९) *श, ष, स* तीन ऊष्म ध्वनियों मे से केवल *स* का अस्तित्व प्रमाणित होता है। *श* और ष भी प्रायः *स* में परिवर्तित हो गए थे। ष के अन्य परिवर्तित रूप, *ख* और *ह* मिलते हैं। *ख* के लिए ष का प्रयोग मध्ययुगीन नागरी लिपि-शैली की सामान्य विशेषता है जिससे सभी लोग परिचित हैं।

(१०) वर्गीय अनुनासिक व्यंजनो मे से केवल *न, म* का अस्तित्व प्रमाणित होता है। क्वचित-कदाचित *ण* भी दिखाई पड जाता है किन्तु इसका प्रयोग या तो तत्सम शब्दो में परम्परा निर्वाह के लिए दिखाई पडता है या राजस्थानी प्रभाव के अन्तर्गत प्रयुक्त हुआ है।

(११) लिपि-शैली से ड़, ढ़, न्ह, ल्ह, म्ह पॉच नवीन व्यंजन-ध्वनियो के प्रचलन का प्रमाण मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन ड, ढ क्रमशः ड़, ढ़ मे परिवर्तित हो गए थे।

(१२) असयुक्त व्यंजनो मे क > ह, ज > ग, ट > र, र > ल परिवर्तन महत्वपूर्ण हैं जिनके उदाहरण निम्नलिखित है—

क > ह : *चिकुर* > *चिहुर*
ज > ग : *कनवज* > *कनवग*
ट > र : *भट* > *भर*
र > ल : *सरिता* > *सलिता*

(१३) असयुक्त महाप्राण घोष और अघोष व्यजनो का केवल महाप्राणत्व ही अवशिष्ट रह गया था। यह परिवर्तन प्राय: स्वरान्तर्गत अथवा मध्यम स्थिति मे हुआ है। कुछ उदाहरण निम्नलिखित है—

ख : *दुह, सुह*
घ : *सुहर*
थ : *पहिल, पुहवी*
ध : *कोह, विहि*
भ : *लहै, हुअ*

(१४) असयुक्त अल्पप्राण व्यजनो को आदि और अनादि दोनो ही स्थितियों मे कहीं-कही महाप्राण कर देने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है; जैसे—

कंधार > खंधार
अंकुर > अंखुली

(१५) अघोष व्यंजनों का घोषीकरण, जैसे—

अनेक > अनेग
कौतुक > कोतिग
चातक > चातग

(१६) मूर्धन्यीकरण

ग्रन्थि > गंठि; गर्त > गड्ढा, दिल्ली > ढिल्ली

(१७) सयुक्त व्यंजनो के परिवर्तन मे सबसे महत्त्वपूर्ण अन्य व्यंजन+र तथा र+अन्य व्यंजन है। ऐसे स्थलो पर रासो मे या तो सम्प्रसारण अथवा स्वर-भक्ति की प्रवृत्ति है या फिर परवर्ती व्यजन-द्वित्व की। कहीं-कहीं व्यंजन-द्वित्व के साथ ही रेफ-विपर्यय भी हो गया है। फलतः रासो मे **धर्म** के **धरम, धरम्म, ध्रम्म** तीन प्रकार के रूप मिलते हैं। इसी प्रकार **गर्व** > *गरब*, *गब्व, ग्रब्व* रूप भी।

(१८) अन्य संयुक्त-व्यंजनों मे प्राकृत-अपभ्रंश की भाँति यथास्थान पूर्व-सावर्ण्य तथा पर-सावर्ण्य की प्रवृत्ति प्रचलित दिखाई पडती है। फल-स्वरूप इस रचना मे भी प्राकृत-अपभ्रंश की तरह व्यजन-द्वित्व की बहुलता मिलती है। रासो के **मुक्क, अग्ग, नच्च, कज्ज, तुट्ट, नित्त, सद्द, अप्प, सब्ब, जम्म** जैसे शब्द इसी प्रवृत्ति के परिणाम हैं।

(१९) परंतु आधुनिक भारतीय आर्यभाषा की, व्यजन-द्वित्व को सरलीकृत करने की मुख्य प्रवृत्ति पृथ्वीराज रासो मे भी मिलती है। व्यजन-द्वित्व का सरलीकरण दो प्रकार से किया गया है—(क) क्षतिपूरक दीर्घीकरण-सहित और (ख) क्षतिपूरक दीर्घीकरण-रहित। दोनों के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

(क) *अट्ठ > आठ*
किज्जइ > कीजइ
लक्ख > लाख

(ख) *अलक्ख > अलख*
उच्छंग > उछंग
चड्ढिउ > चढिउ

दीर्घाक्षरिक शब्द में भी क्षतिपूरक दीर्घीकरण के बिना ही व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण हो जाता है; जैसे—

चैत्र > *चैत्त > चैत

(२०) सयुक्त व्यंजन तथा व्यजन द्वित्व का सरलीकरण क्षतिपूरक अनुस्वार के साथ भी होता है; जैसे—

दर्शन	>	*दंसन*
प्रजल्प्य	>	*पयंपि*
पक्षी	>	*पंखी*

आ. रूप-विचार

(१) रूप-रचना की दृष्टि से रासो की भाषा अपभ्रंशोत्तर और उदयकालीन नव्य भारतीय आर्यभाषा की विशेषताओ से युक्त दिखाई पड़ती है। इनमे से पहली विशेषता है निर्विभक्तिक सज्ञा शब्दो का सभी कारको मे प्रयोग। अपभ्रंश मे इस प्रवृत्ति का आरभ ही हुआ था और नव्य भारतीय आर्यभाषा मे प्रत्येक कारक के लिए परसर्ग का विकास होने से पूर्व बहुत दिनो तक ऐसे निर्विभक्तिक संज्ञा शब्दो के प्रयोग की बहुलता थी।

(२) उकार बहुला अपभ्रंश मे कर्ता-कर्म एक वचन मे जिस—उ विभक्ति का प्रचलन था, वह रासो की प्राचीन प्रतियों में प्रचुर मात्रा मे मिलती है। सभा के मुद्रित संस्करण मे इसका अभाव दिखाई पडता है।

(३) अपभ्रंश की—*ह* परक विभक्तियो के अवशेष रासो में काफ़ी मिलते हैं। *कनवज्जह*, *कनवजहे*, *कनवज्जहि* जैसे रूप विरल नही हैं। परवर्ती हिंदी में धीरे धीरे यह विभक्ति घिसकर विकारी रूप बन गई।

(४) करण कारक एकवचन की–*इ*,–*ए*,–*ऐं* अपभ्रंश विभक्तियाँ भी रासो मे प्रचुर मात्रा में मिलती हैं; जैसे *कारणइ*, *फवज्जइ*, *हत्थे*, *हत्थैं* इत्यादि।

(५) कर्ता-करण तथा कर्म-सम्प्रदान के बहुवचन मे–*न*,–*नि*,–*नु* विभक्ति का प्रयोग रासो की ऐसी विशेषता है जो अपभ्रंश मे नही मिलतो लेकिन 'वर्णरत्नाकर', 'कीर्तिलता' इत्यादि अवहट्ट रचनाओं से –*ह* से युक्त अर्थात् –*न्ह*,–*न्हि* रूप मिलने लगते हैं। यही–*न* आगे चलकर विकारी रूप–*ओं* तथा–*ओं* में विकसित हुआ। रासो में–*ओं*,–*ओं* वाले विकारी रूप नहीं मिलते।

(६) परसर्गों की दृष्टि से पृथ्वीराज रासो अपभ्रंश तथा अवहट्ट दोनों की अपेक्षा समृद्ध है। कर्तृ-करण परसर्ग नैं अथवा ने को छोड़कर प्रायः शेष सभी परसर्ग

किसी-न-किसी रूप मे यहाँ मिलते । कर्म-परसर्ग *कहुँ, कहु, कूं* रूप मे; करण-अपादान परसर्ग *तै, ते* तथा *सहुं, सो, सूँ*; अपादान—परसर्ग *हुंति*; संबध-परसर्ग *को, का, की, के* तथा *कउ, कै*; अधिकरण-परसर्ग *मज्झहि, मज्झे, मज्झि, मंझ, मधि, महि, मह* आदि विविध रूपो मे प्राप्त होता है किन्तु लघुतम रूपान्तर के कनवज्ज समय मे अधिकरण-परसर्ग *मै* अथवा *में* कही नही मिलता।

(७) सर्वनामो के विषय मे रासो की भाषा अपेक्षाकृत अधिक आधुनिक है। उत्तम पुरुष सर्वनाम के *मै, हूं, हम* तथा विकारी रूप *मो, मोहि* मिलते हैं। मध्यम पुरुष के *तुम, तुम्ह, तुम्हइ* तथा *तै, तुज्झ, तोहि* रूप; अन्य पुरुष के *सो* तथा *तासु* जैसे प्राचीन रूपो के अतिरिक्त दूरवर्ती निश्चयवाचक के *वह, उह* तथा *उस* रूपो का भी प्रयोग मिलता है।

(८) प्रश्नवाचक सर्वनाम के *को, कौन* तथा *किस, किन* रूप; निज वाचक *अप्पु, अप्प, अपन*; सर्वनाममूलक विशेषण *अस, इसो, तस, तेसे* आदि प्रकारवाचक और *इत्तनहि, इत्तनउ, इत्तने* तथा *कितकु* आदि परिमाणवाचक रूप रासो को अपभ्रंश अवस्था से बाद की रचना प्रमाणित करते हैं।

(६) सख्यावाचक विशेषण—१ से १० तक की संख्याएँ *एक, दुइ, तीन, चार, पॉच, छह, सात, आठ, दस* नाम से मिलती हैं। १०० के लिए *सै, सौ* दोनों रूप आते हैं। १००० के लिए *सहस* के अतिरिक्त *हज्जार* (फारसी) का भी प्रयोग है। क्रमवाचक *पहिलइ, बीय, तिअ*; अपूर्ण सख्यावाचक *अड्ढ*; आवृत्तिवाचक *दुहु, चहु* इत्यादि।

(१०) क्रिया पदो मे यदि √भू के सभी काल के रूपो पर दृष्टिपात किया जाय तो अपभ्रंश से विकसित अवस्था के स्पष्ट लक्षण मिलते हैं। वर्तमान काल मे *है*, भविष्यत् मे *होइहै* तथा भूतकाल में कृदन्त-रूप *भो, भयो, भयी, भये* तथा *हुअ, हुवो* इत्यादि।

(११) कही कही पूर्वी हिदी का *आहि* वाला क्रिया रूप भी रासो मे मिलता है, परंतु इसका प्रयोग अधिक नही है।

(१२) भविष्यत् काल मे अपभ्रंश का—*स्स*—मूलक रूप, जो पीछे राजस्थानी में विशेष प्रचलित हुआ तथा पश्चिमी और पूर्वी हिदी मे नही आया, रासो मे कहीं-कही दृष्टिगोचर होता है।

(१३) सामान्य वर्तमानकाल के लिए रासो मे अपभ्रंश के तिङन्त-तद्भव —*अइ* वाले रूप के साथ ही स्वर-सकोचन-युक्त—*ऐ* वाले रूप भी मिलते हैं और गणना करने से पता चलता है कि अनुपात की दृष्टि से दोनो का प्रयोग लगभग समान है।

(१४)—*इग* अन्त वाला भूतकालिक क्रियापद, जैसे *चलिग*, *कहिग*, *करिग* इत्यादि, रासो की अपनी विशेषता है। इस प्रकार के क्रियापद अपभ्रंश मे नही थे और पश्चिमी हिदी मे भी इस प्रकार के जो क्रिया-रूप मिलते हैं उनका प्रयोग भूत-काल मे न होकर केवल भविष्यत् काल तक ही सीमित है।

(१५)—*अत* कृदत युक्त क्रियापदो से वर्तमान काल-रचना का सूत्रपात रासो मे हो चुका था किन्तु इसके साथ अस्तिवाचक सहायक क्रिया के रूप जोड़कर आधुनिक हिदी की भाँति संयुक्त-काल रचना की प्रवृत्ति उसमे नही मिलती। यह अवस्था स्पष्टतः अपभ्रंश के पश्चात् और ब्रजभाषा के उदय के आसपास की है।

(१६) सयुक्त क्रियाएँ रासो मे अपभ्रंश से अधिक किन्तु ब्रजभाषा से बहुत कम मिलती हैं; साथ ही अर्थ की दृष्टि से भी वे काफी सरल हैं। *धरि राख्यो*, *लेहि बइठो*, *उड़ चलहि*, *हुइ जाइ* जैसी सरल संयुक्त क्रियाएँ ही रासो मे प्रयुक्त हुई हैं।

इ शब्द-समूह

१. कनवज्ज समय (लघुतम रूपान्तर) मे कुल मिलाकर लगभग साढे तीन हजार शब्द हैं और यदि रूप-विविधता को ध्यान में रखते हुए किसी शब्द के विविध-रूपों मे से केवल एक रूप की गणना की जाय तो शब्द-सख्या लगभग तीन-हजार होती है। इनमे से लगभग ५०० शब्द संस्कृत तत्सम हैं और २० शब्द फारसी के

हैं, शेष शब्द मुख्यतः तद्भव हैं। केवल थोडे से शब्द अर्ध तत्सम अर्थात् प्राकृत-अपभ्रंश के अवशेष हैं और उनसे भी कम देशी अथवा स्थानीय हैं। इस प्रकार रासो में तत्सम शब्दो का अनुपात १६% प्रतिशत से अधिक नहीं है। अपभ्रंश को देखते हुए तत्सम शब्दो का यह अनुपात बहुत अधिक कहा जायगा किन्तु नव्य आर्यभाषा की प्राचीन रचनाओ को देखते हुए रासो मे तत्सम शब्दो का यह अनुपात कम कहा जायगा। इससे साबित होता है कि भक्तिकालीन रचनाओ की अपेक्षा पृथ्वीराज रासो कुछ प्राचीन रचना है और सोलहवी शताब्दी के व्यापक सांस्कृतिक पुनर्जागरण का प्रभाव उसपर कम पडा है। इसी तरह मुसलमान बादशाहों के प्रभाव से इस रचना मे जिन फारसी शब्दो की बहुलता की बात कही जाती है, वह केवल बृहत् रूपान्तर के लिए सही हो सकती है। लघुतम रूपान्तर मे फारसी शब्द बहुत कम हैं।

भाषा-निर्णय

अ. अपभ्रंश?

२५. उपर्युक्त तथ्यो से स्पष्ट है कि पृथ्वीराज रासो के जितने रूपान्तर प्राप्त हैं उनमे से प्राचीनतम की भी भाषा अपभ्रंश से अधिक विकसित तथा नव्यतर है। फिर भी कुछ विद्वानो की धारणा है कि पृथ्वीराज रासो की भाषा मूलतः अपभ्रंश है। जब से मुनि जिनविजय द्वारा सम्पादित 'पुरातन प्रबध-सग्रह' के पृथ्वीराज और जयचद से सम्बद्ध चार अपभ्रंश छंद सामने आए हैं[1] और उनमे तीन छद रूपान्तरित रूप में पृथ्वीराज रासो में प्राप्त हुए हैं, विद्वानो को इस दिशा मे अनुमान करने के लिए आधार मिल गया है। डा० दशरथ शर्मा तथा मीनाराम रगा ने इसी आधार पर यह स्थापना की है कि मूल पृथ्वीराज रासो अपभ्रंश की रचना थी।[2] अपनी स्थापना की पुष्टि के लिए उन्होने 'यज्ञ-विध्वस' प्रसग के कुछ छदो का अपभ्रंशरूपान्तर प्रस्तुत किया है। उनका कहना है कि यदि वर्तमान रासो की भाषा को थोडा-सा बदल दिया

---

१. सिंघी जैन ग्रन्थमाला, संख्या २, १९३६ ई०, पृष्ठ ८६, ८८

२ राजस्थान भारती, बीकानेर, भाग १, अक १, अप्रैल १९४६

जाय तो वह अपभ्रंश हो जायगी। रूपान्तर की विपरीत प्रक्रिया का प्रयोग करके इन विद्वानों ने यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि इसी प्रकार वर्तमान रासो भी मूल अपभ्रंश रासो का आधुनिक रूपान्तर है। यह अनुमान और तर्क-शैली काफी मनोरंजक है। इससे इन विद्वानो की अनुवाद-शक्ति का तो परिचय मिलता है किन्तु इससे रासो के भाषा-सबधी रूपान्तर पर कोई प्रकाश नही पड़ता। इसका निर्णय पाठ-विज्ञान के आधार पर ही सभव है। अब तक रासो के जो रूपान्तर प्राप्त हैं उनकी भाषा के मूल ढॉचे मे इतना अतर नही है कि उन्हे भाषा के विकास की दो भिन्न अवस्थाओ मे रखा जा सके। सच तो यह है कि 'पुरातन प्रबध-संग्रह' के पृथ्वीराज जयचन्द सबधी छदो की भाषा भी परिनिष्ठित अपभ्रंश नही है। डा० दशरथ शर्मा तथा मीनाराम रगा के अपभ्रंश अनुवाद की भाषा 'पुरातन प्रबंध संग्रह' के पद्यो की भाषा से कही अधिक प्राचीन और ठेठ अपभ्रंश है। अंत मे इस विषय में इतना ही कहना काफी होगा कि रासो का जो रूप—तथाकथित मूल रूप—अभी तक प्राप्त नही हुआ है, उसके बारे मे अनुमान लगाने की अपेक्षा, वर्तमान रूप की भाषा पर निर्णय देना अधिक वैज्ञानिक है।

आ. डिंगल या पुरानी राजस्थानी

२६. मूल रासो को अपभ्रंश मानकर डा० दशरथ शर्मा और मीनाराम रंगा वही रुक नही जाते बल्कि उस युक्ति के आधार पर वर्तमान रासो को डिंगल अथवा पुरानी राजस्थानी की रचना बतलाते हैं।[1] प्रमाण-स्वरूप उन्होने रासो मे प्राप्त *जित्तिआ, मेलिया, वुल्यो, मोक्कल* जैसे राजस्थानी शब्दो को उपस्थित किया है। इनमें से निःसन्देह *मेलिया* और *मोक्कल* दो ऐसे अपभ्रंश शब्द हैं जो राजस्थानी-गुजराती मे आज भी सुरक्षित हैं। किन्तु डा० शर्मा और रगा जी ने इन शब्दो से आगे बढ़कर अपने उद्धृत अंश की ध्वनि-प्रवृत्ति तथा व्याकरण-सम्बन्धी विशेषताओ पर विचार नहीं किया। डा० तेस्सितोरी ने 'पुरानी-पश्चिमी राजस्थानी' की भाषा सम्बन्धी जो दस मुख्य विशेषताएँ भूमिका में गिनाई हैं[2], उनमे से कोई विशेषता रासो मे नहीं मिलती।

१. वही; राजस्थान भारती, भाग १, अक ४ जनवरी १९४७

२. पुरानी पश्चिमी राजस्थानी, इण्डियन एंटिक्वेरी, १९१४ ई०

उदाहरण के लिए पुरानी राजस्थानी का सम्बन्ध-परसर्ग *रा* अथवा *रहइँ* या *हइँ* रासो के सभी रूपान्तरो में लुप्त है। इसी प्रकार सामान्य वर्तमान काल के उत्तम पुरुष बहुवचन के लिए *आँ* का प्रयोग तथा भविष्यत् काल मे अन्य पुरुष एकवचन के लिए *इसि* पदान्त का प्रयोग, आदि पुरानी राजस्थानी की ये सामान्य विशेषताएँ भी रासो मे अप्राप्त हैं। इसके विपरीत 'ढोला–मारू–रा दूहा' में पुरानी राजस्थानी की इन विशेषताओ के अतिरिक्त (क) ण-बहुलता, (ख) ळ–ध्वनि का प्रचलन, (ग) कर्म सम्प्रदान-परसर्ग *नूं*, सम्बन्ध परसर्ग *तणा*, *तणी* आदि विशेषताएँ भी मिलती हैं। ढोला० और रासो की भाषा के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि पुरानी राजस्थानी किसे कहते हैं और रासो उससे कितना दूर है। यदि डिंगल केवल शैली-विशेष नही, बल्कि पुरानी पश्चिमी राजस्थानी भाषा का ही दूसरा नाम है तो यह निःसकोच कहा जा सकता है कि रासो की भाषा डिंगल नही है। इसका खडन राजस्थानी तथा ब्रज-भाषा के विशेषज्ञ विद्वानो ने समय समय पर किया है।[1]

द पिंगल या पुरानी ब्रजभाषा

२७. पुरानी पश्चिमी राजस्थानी से पिंगल को अलगाते हुए डा० तेसितोरी ने कहा है कि "पिंगल अपभ्रंश उस भाषा-समूह का शुद्ध प्रतिनिधि नही है जिससे प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी उत्पन्न हुई है, बल्कि उसमे ऐसे अनेक तत्व है जिनका आदि स्थान पूर्वी राजपूताना मालूम होता है और जो अब मेवाती, जयपुरी और मालवी आदि पूर्वी राजस्थानी बोलियो तथा पश्चिमी हिन्दी मे विकसित हो गए हैं। ऐसी पूर्वी विशेषताओ मे से मुख्य है सम्बन्ध-परसर्ग *कौ* का प्रयोग जो प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी के लिए सर्वथा विदेशी है और यहाँ तक कि आज भी गुजरात और पश्चिमी राजपूताना की बोलियो मे एकदम गायब है। इसके विपरीत पूर्वी राजस्थानी बोलियो तथा पश्चिमी हिन्दी मे इसका व्यापक प्रचलन है।[2]

इस परम्परा मे *प्राकृत-पैंगल* को प्राचीन ग्रन्थ मानते हुए तेसितोरी आगे कहते

---

१ नरोत्तमदास स्वामी, राजस्थान भारती, अङ्क वही।

२ पुरानी राजस्थानी, भूमिका पृ० ६, (हिन्दी अनुवाद) नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, १६५५ ई०

हैं कि प्राकृत पैंगल की भाषा की पहली संतान प्राचीन-पश्चिमी राजस्थानी नहीं, बल्कि *भाषा का वह विशिष्ट रूप है* जिसका प्रमाण चन्द की कविता मे मिलता है और जो भलीभाँति *प्राचीन पश्चिमी हिन्दी* कही जा सकती है।[१]

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, मध्ययुगीन तथा आधुनिक भारतीय आर्य भाषा के विशेषज्ञ गार्सॉ द तासी, बीम्स, होर्नले, ग्रियर्सन, तेस्सितोरी आदि यूरोपीय तथा डा० सुनीतिकुमारी चटर्जी, डा० धीरेन्द्र वर्मा, नरोत्तम दास स्वामी आदि भारतीय विद्वानो ने एक स्वर से रासो की भाषा को प्राचीन पश्चिमी हिन्दी अथवा प्राचीन व्रजभाषा कहा है।

परन्तु पृथ्वीराज रासो की भाषा को पुरानी व्रजभाषा कहने के साथ मै इतना अवश्य जोडना चाहूँगा कि व्रजभाषा के प्राचीनतम कवि सूरदास की रचनाओ से व्रजभाषा का जो स्वरूप सामने आता है, उससे पृथ्वीराज रासो की भाषा पर्याप्त भिन्न है और यह भिन्नता काल-सम्बन्धी ही नही बल्कि प्रदेश-सम्बन्धी भी है। रासो के संज्ञा, सर्वनाम और भूतकालिक कृदन्तों के उच्चारण का झुकाव व्रजमंडल के—औकारान्त की अपेक्षा—ओ कारान्त की ओर अधिक है, साथ ही सम्भवतः प्राचीनतर अवस्था की भाषा से सम्बद्ध होने के कारण अकारान्त शब्दों मे भी अन्त्य उ की स्वतन्त्र सत्ता को सुरक्षित रखने की प्रवृत्ति पाई जाती है; अर्थात्—औ और—ओ के स्थान पर—अउ की ओर झुकाव है। इसी प्रकार व्यंजन-द्वित्व आदि अन्य ध्वन्यात्मक प्रवृत्तियों मे रासो अपभ्रंशोत्तर युग की भाषा के निकट दिखाई पडता है। व्याकरण की दृष्टि से भी रासो की भाषा मे नव्य भारतीय आर्य-भाषा की उदयकालीन विश्लेषात्मक अवस्था का आरम्भ मात्र मिलता है। इन्ही कारणों से रासो की भाषा पुरानी व्रजभाषा होती हुई भी सूरसागर की भाषा से कुछ पछाँह की तथा काफी पूर्ववर्ती प्रमाणित होती है।

प्राकृत-पैंगलम् और पृथ्वीराज रासो

२८. परंपरा के अनुसार पृथ्वीराज रासो पिंगल-रचना है। फ्रेंच इतिहासकार गार्सॉ द तासी का प्रमाण है कि "रायल एशियाटिक सोसायटी वाली हस्तलिखित

१ वही।

प्रति पर एक फारसी शीर्षक दिया हुआ है 'तारीख प्रिथूराज *बजबान पिगल* तसनीफ कर्दा कवि चन्द बरदाई' जिसका आशय है प्रिथूराज का इतिहास, पिगल भाषा मे, रचना करनेवाला चद बरदाई।"[१]

आधुनिक विद्वानो मे से कुछ तो पिगल को पुरानी ब्रजभाषा मानते हैं और कुछ अवहट्ट अथवा देश्य भाषा मिश्रित परवर्ती अपभ्रंश। परन्तु इन मान्यताओ का तर्कसंगत आधार स्पष्ट नही है। पिगल का अर्थ हिन्दी मे छन्दःशास्त्र भी होता है और यह अधिक प्रचलित है। अब प्रश्न यह है कि छन्द के पिगल और भाषा के पिगल मे क्या सम्बन्ध है? पिगल का मूल अर्थ छन्द है या भाषा? पिगल शब्द का प्राचीनतम प्रयोग अभी तक जिस पुस्तक मे मिला है वह चौदहवी सदी की प्रसिद्ध रचना 'प्राकृत-पैगलम्' है[२]। 'प्राकृत-पैगलम्' छन्दःशास्त्र का ग्रन्थ है जिसमे छन्दो का लक्षण प्राकृत भाषा मे दिया गया है और उदाहरण के लिए कुछ छन्द भी प्राकृत के हैं परन्तु प्रस्तुत उदाहरणो मे से अधिकाश ऐसे है जिनकी भाषा पर तत्कालीन देशी भाषाओ का गहरा रग है। पूरी रचना मे देशी-मिश्रित प्राकृत भाषा के छन्दो की प्रधानता देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि इसके रचयिता का मुख्य उद्देश्य लोक प्रचलित देशी भाषाओ के छन्दो का सोदाहरण विवरण देना है। सभवतः इसमे देशी छन्दो की प्रधानता के कारण आगे चलकर 'पिंगल' शब्द तत्कालीन देश भाषा के लिए अथवा देश्यमिश्रित प्राकृत भाषा के लिए प्रचलित हो गया।

२६. छन्द और भाषा को पर्याय समझने की परपरा बहुत पुरानी है। वैदिक सस्कृत के लिए पाणिनि ने अष्टाध्यायी मे बराबर 'छन्दस्' सज्ञा का प्रयोग किया है। इसके बाद भी छन्द के आधार पर भाषा के नामकरण की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। गाहा (गाथा) छन्द-प्रधान प्राकृत को 'गाहा बन्ध' तथा 'दोहा' छन्द का सबसे पहले प्रयोग करने के कारण अपभ्रंश को 'दोहा बन्ध' कहने के अनेक प्रमाण मिलते है।[३]

---

१. हिन्दुई साहित्य का इतिहास (अनुवादक डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय) १९५३ पृ० ६६

२ बिब्लिओथेका इडिका, १९०२ ई०, प्राकृत पिगल सूत्राणि, निर्णयसागर प्रेस १८९४ ई०

३. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, पुरानी हिन्दी, नागरी प्रचारिणी सभा; १९४८, पृ० १४, १०६

मध्ययुग में भी रेख़ता छन्द के कारण उर्दू जबान का नाम 'रेखता' पड़ गया था। इसलिए छन्द का अर्थ देनेवाले 'पिंगल' शब्द का प्रयोग देश्य मिश्रित अपभ्रंश के लिए होने लगना कोई असभव और आकस्मिक घटना नहीं है। इस दृष्टि से 'प्राकृत-पैंगलम्' का अर्थ प्राकृत-मिश्रित पिंगल भाषा अथवा पिंगल मिश्रित प्राकृत-भाषा भी हो सकता है। परन्तु यहाँ 'प्राकृत' शब्द का प्रयोग संभवतः देश्य भाषा के लिए ही किया गया है।

३०. भाषा के लिए 'पिंगल' शब्द का प्रयोग कितना पुराना है, यह ठीक ठीक बता सकना मुश्किल है लेकिन पिंगल के आचार्य नाग देव के नाम पर तत्कालीन देशी बोली के लिए 'नागवानी' नाम सोलहवी सदी के आस-पास प्रचलित हो गया था। '*तुहफ़त उल-हिन्द*' के व्याकरण वाले खंड में मिर्जा खॉ ने 'नागवानी' और 'पातालवानी' दो शब्दों का प्रयोग किया है।[1] 'पातालवानी' इसलिए कि नाग देव पाताल लोक में ही रहते हैं। इस प्रकार उस भाषा का नाम छन्द से चलकर आचार्य तक और आचार्य से उनके पौराणिक स्थान तक पहुँच गया। १८ वी सदी के पूर्वार्ध के हिन्दी कवि और आचार्य भिखारीदास ने भी ब्रज, मागधी, अमर (सस्कृत), यवन; पारसी (फारसी ?) के साथ 'नाग-भाखा' का उल्लेख किया है जिसका अर्थ सभवतः पिगल ही है।[2] परन्तु यहाँ 'नाग भाखा' और 'ब्रज भाखा' दोनो का उल्लेख साथ-साथ करने से ऐसा प्रतीत होता है कि 'नाग भाखा' 'ब्रज भाखा' से भिन्न है। ऐसी हालत में यह युक्तिसंगत नही है कि पिंगल को पुरानी ब्रजभाषा स्वीकार किया जाय।' तात्पर्य यह कि पृथ्वीराज रासो की भाषा को जो 'पिगल' कहने की पुरानी परपरा है, उसके आधार पर उसे पुरानी ब्रजभाषा कहना प्रमाणित नही होता।

३१. अब यह देखना चाहिए कि तेसीतोरी ने जो पृथ्वीराज रासो की भाषा को 'प्राकृत-पैंगलम्' की भाषा-परंपरा मे रखते हुए उसे विकसित अवस्था की भाषा

---

१ मिर्जा खान्स ग्रैमर ऑव दि ब्रजभाखा—ज़ियाउद्दीन, विश्वभारती, १९३५ ई०

२ ब्रज मागधी मिलै अमर, नाग यवन भाखानि।
सहज पारसी हू मिलै, षट विधि कहत बखानि॥ (शुक्ल' इतिहास, पृ० ३८२ से उद्धृत)

कहा है[१], वह कहाँ तक सही है।

(क) 'प्राकृत-पैंगलम्' मे उद्वृत्त स्वर के स्वतन्त्र अस्तित्व को सुरक्षित रखने की प्रवृत्ति प्रबल दिखाई पड़ती है। स्वर-सकोचन के द्वारा उद्वृत्त स्वर को पूर्ववर्ती स्वर के साथ संयुक्त कर देने के उदाहरण प्रा० पै० मे बहुत थोड़े मिलते हैं।

उवआर	*(=उपकार),* ४७०
सहआर	*(=सहकार),* ४६१
सुअरिस-वअणा	*(=सुसदृश-वदना),* ४६६
हिअअ	*(=हृदय)* ५४१
कामराअस्स	*(=काम राजस्य)* ४४२
णाअरी	*(=नागरी)* ४४३
छाअण	*(=छादन),* २८३
जुवअण	*(=युवजन),* ३८६
पाआ	*(=पादा),* ५४५
णिलअ	*(=निलय),* २७६

उद्वृत्त स्वर को सुरक्षित रखने की यह प्रवृत्ति प्राकृत-अपभ्रंश की है और इस विषय में प्राकृत-पैंगलम् में उसका पूरा निर्वाह दिखाई पडता है। इसके विपरीत पृथ्वीराज रासो को दो ऐसे स्वरों का सह-अस्तित्व स्वीकार्य नही है। नव्य भारतीय आर्य भाषाओं की ध्वनि-प्रवृत्ति के अनुसार रासो मे ऐसे स्वरो के सकोचन की ओर विशेष झुकाव है। इस प्रकार रासो की भाषा प्राकृत-पैंगलम् के बाद की प्रमाणित होती है। स्वर-संकोचन की जो प्रवृत्ति प्रा० पैं० मे आरम्भ-भर हुई थी, वह रासो तक आते-आते पर्याप्त प्रबल हो गई।

(ख) क्षति-पूरक दीर्घीकरण के द्वारा व्यंजन-द्वित्व के सरलीकरण की प्रवृत्ति भी प्राकृत-पैंगलम् मे बहुत कम है। *णीसास* (४५३), *णीसंक* (१२८), *जासु*

१. पुरानी राजस्थानी, पृष्ठ ६, ना० प्र० सभा, १९५५ ई०

(१४१), कहीजे (४०२) करीजे (४०२) जैसे थोड़े से शब्दो को छोड़कर यहाँ प्राय: निम्नलिखित प्रकार के व्यजन-द्वित्व वाले उदाहरण ही अधिक मिलते है।

अप्पणा	(४०१)	*दुव्वरि*	(४५३)
किज्जइ	(५४५)	*पक्खर*	(२६२)
गव्वाश्रा	(४८३)	*पव्वश्र*	(३७८)
जक्खण	(३०४)	*पोम्म*	(५५०)
जक्खण	(३०४)	*बप्पुडा*	(४०१)
जज्जल	(१८०)	*भिच्च*	(४०५)
जोव्वण	(२२७)	*भित्तरि*	(५४५)
णच्चइ	(५२३)	*सरिस्सा*	(३८६)
थप्पणा	(४०१)	*हम्मीर*	(१८०)

व्यंजन-द्वित्व की प्रवृत्ति भी प्राकृत-अपभ्रंश की है और यहाँ भी प्राकृत-पैंगलम् का झुकाव उस प्रवृत्ति के निर्वाह की ओर है। इसके विपरीत पृथ्वीराज-रासो मे छंदोऽनुरोध-जनित व्यजन-द्वित्व को छोड़कर अन्यत्र यह प्रवृत्ति इतनी प्रबल नही है। यह भी रासो की भाषा की विकसित अवस्था का प्रमाण है।

(ग) प्राकृत पैंगलम् का झुकाव आदि और अनादि असयुक्त *न* को *ण* में परिवर्तित कर देने की ओर विशेष है ; जैसे—

क्रोधानल	<	*कोहाणल*	(१८०)
नभ	<	*णह*	(,,)
वदन	<	*वश्रण*	(,,)
सुलतान	<	*सुलताण*	(,,)

ऐतिहासिक दृष्टि से इस प्रवृत्ति को प्राकृत-अपभ्रंश का प्रभाव कहा जा सकता है और प्रादेशिक दृष्टि से राजस्थानी वैशिष्ट्य। *ण*-त्व विधान की प्रा० पैं० मे इतनी प्रबलता है कि प्राकृत की भाँति शब्द के आदि में भी इसे सुरक्षित रखा गया है। इसके विपरीत पृथ्वीराज-रासो मे *ण* को भी *न* बना देने की प्रवृत्ति है। प्राकृत-पैंगलम्

मे व्रजभाषा के बीज ढूढते समय इसका ध्यान रखना चाहिए। रासो मे कोई शब्द *ए* से शुरू नहीं होता।

(घ) ध्वनि-प्रवृत्ति मे अपेक्षाकृत रूढ़ और प्राचीन होते हुए भी रूप रचना में प्राकृत-पैंगलम् नव्य भारतीय आर्यभाषा के निकट दिखाई पडता है। यहाँ व्रजभाषा के *आ*कारान्त तथा *ओ*कारान्त पुल्लिग सज्ञा-विशेषण पर्याप्त मात्रा मे मिलते हैं।

बुड्ढा (५४५), *बुड्ढा* (५१२), *वमुडा* (४०१), *वंका* (५६७), *दीहरा* (३०६), *ओल्ला* (२४६), *पिअला* (४०८), *काआ* (३१८), *माआ* (३१८) इत्यादि इसके प्रमाण हैं।

वस्तुतः ये दीर्घान्त रूप उपान्त्य स्वर के साथ पदान्त के स्वार्थिक प्रत्यय-*अ* <-*क* के सयुक्त होने से बनते हैं। सज्ञा विशेषणो के पदान्त मे स्वर-सकोचन द्वारा -*आ* और -*ओ* करने की दोनों प्रवृत्तियो मे से प्राकृत-पैंगलम् -*आकारान्त* की ओर अधिक प्रवृत्त दिखाई पड़ता है। यह आकारान्त सर्वत्र छन्द मे मात्रा-पूर्ति के लिए ही नही है। सामान्यतः यह विशेषता खडी बोली की मानी जाती है। मिर्जा खॉ के अनुसार यह विशेषता उनके समय बोल-चाल की व्रजभाषा मे भी थी।[1]

यदि यह सच है तो इससे इतना प्रमाणित होता है कि व्रजभाखा का पदान्त -ओ आरम्भिक अवस्था मे -*आ* था और एक समय सम्पूर्ण पश्चिमी हिन्दी मे -आकारान्त पुल्लिंग सज्ञा-विशेषणो का प्रचलन था।

रासो से इस तथ्य की पुष्टि नही होती। रासो मे आकारान्त और ओकारान्त दोनो ही प्रकार के पुल्लिग संज्ञा-विशेषण नही मिलते। प्रधानता उकारान्त पदों की ही है; आकारान्त पद प्रायः छद मे मात्रा पूर्ति के लिए तुकान्त मे अथवा क्वचित-कदाचित तुकान्त के पूर्व भी मिलते है।

(ङ) सज्ञा-विशेषणो मे प्राकृत-पैंगलम् जहॉ इतना आगे है वहॉ भूत-कालिक कृदन्त अर्थात् क्रिया के निष्ठावाले रूपो के विषय मे प्राचीनतर रूपो का ही निर्वाह करता है। निष्ठा के *गयउ भयउ कियउ* रूप ही अधिक मिलते ह। *गयो, गयौ,*

---

१ व्रजभाखा व्याकरण, पृ० ४७,

अथवा *भयो*; *भयौ* रूप प्राकृत-पैंगलम् मे कम मिलते हैं। कर्मवाच्य के *जाणीओ* (५४७), *भणीओ* (३४८), *कहिओ* (३४३) तथा कर्तृवाच्य के *कंपिओ* (२६०), *झंपिओ* (२६०), *सम्माणीओ* (५०६), *उगो* (३७०) जैसे थोड़े से ओकारान्त कृदन्त रूप अवश्य मिलते हैं जिनमे उद्वृत्त स्वर ओ पूर्ववर्ती स्वर के साथ संयुक्त नही हो सका है, बल्कि अपनी स्वर-सत्ता बनाए हुए है। निष्ठा के ओकारान्त और औकारान्त रूप ब्रजभाषा की विशेषता बतलाए जाते हैं और प्राकृत-पैंगलम् में इनकी कमी है। यहाँ प्राकृत-पैंगलम् के विपरीत पृथ्वीराज रासो मे ओकारान्त और औकारान्त निष्ठा-रूप प्रचुर मात्रा मे मिलते हैं। *कियो, कियौ, रह्यो, रह्यौ* दोनों प्रकार के रूप यहाँ पदे-पदे मिलते हैं। निःसन्देह इन दोनों प्रकार के रूपो मे ओकारान्त रूपों की प्रधानता है। यह विशेषता जयपुरी और कन्नौजी बोलियो मे पाई जाती है जिनमे से एक ब्रजभाषा के पश्चिम की है तो दूसरी पूरब की। शायद इसीलिए वार्ड ने पृथ्वीराज रासो की भाषा को *कन्नौजी* कहा है।[1] यह भी सम्भव है कि कन्नौज-नरेश जयचन्द की पुत्री संजोगिता-सम्बन्धी कथा के वर्णन की प्रधानता तथा जयचन्द के साथ चंद के सम्बन्ध अथवा सम्पर्क के कारण ही वार्ड ने यह राय बनाई हो। परन्तु ओकारान्त निष्ठा रूपों की प्रधानता के विषय मे यह भी कहा जा सकता है कि यह ब्रजभाषा की आरम्भिक अवस्था का सूचक है। बहुत सम्भव है कि ब्रजभाषा के आधुनिक औकारान्त रूप ओकारान्त रूपों के परवर्ती विकास हों।

(च) सज्ञा विशेषणो की तरह निष्ठा के कुछ आकारान्त रूप भी प्राकृत-पैंगलम् मे मिलते हैं, जो उसे खडी बोली के बीज सुरक्षित रखने का श्रेय देते हैं ; जैसे—

टकु एक्कु जइ सेंधव पाआ।
जो हउ रङ्को सो हउ राआ॥ (२२४)
सोउ जुहुट्ठिर सकट पावा।
देवक लेक्खिअ केण मिटावा॥ (४१३)
सज्जा हूआ। (४८३)

---

१. हिस्ट्री ऑव दि लिटरेचर एंड दि माइथॉलोजी ऑव दि हिन्दूज़, जिल्द २, पृष्ठ ४८२ (गार्सां द तासी द्वारा उद्धृत, हिंदुई साहित्य का इतिहास, पृ० ७०)

रासो में इस प्रकार के आकारान्त निष्ठा-मूलक क्रियापद नहीं मिलते। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्राकृत-पैंगलम् भारतीय आर्यभाषा की उस अवस्था से संबद्ध है जिसमें विभिन्न बोलियों के मिश्रित रूप एक साथ एक दूसरे के समानान्तर विकसित हो रहे थे अथवा संग्रह-प्रकृति की रचना होने के कारण प्राकृत-पैंगलम् में पश्चिमी और पूर्वी विभिन्न बोलियों की रचनाओं का मिश्रण है[१] जब कि रासो बोली-विशेष की रचना है।

(छ) प्राकृत-पैंगलम् में प्राकृत-अपभ्रंश की अपेक्षा परसर्ग अधिक मिलते हैं और जो मिलते हैं वे भी ध्वन्यात्मक दृष्टि से विकसित अवस्था के हैं; जैसे—

करण-परसर्ग :

संमुहि सहुं (१६२)

सम्प्रदान-परसर्ग :

काहे लागी (४६३)

सबंध-परसर्ग :

ता-क जणणि (४७७)
देव-क लेक्खिल (४१२)
वित्त-क पूरल (२८३)
खुरसाण-क ओल्ला (२४६)
ता-का पिअला (४०८)
मेच्छह-के पुत्ते (५७)

अधिकरण-परसर्ग :

मुह महँ (१८०)
ढिल्लि महँ (२४६)

---

१ हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग, नवीन संस्करण, १६५४, पृ० ६२

बी० सी० मजूमदार को प्राकृत पैंगलम् के कुछ छंदों में जो बंगला भाषा का आभास हुआ है, वह वस्तुतः —अल वाले भूत-कृदन्तों के मागधी तत्व और पूर्वी सर्वनामों के कारण। संभवतः इसीलिए डा० चैटर्जी ने उनके मत का खंडन किया है (बंगाली लैंग्वेज, भूमिका, पृ० ६४)

परन्तु रासो मे प्राकृत-पैंगलम् की अपेक्षा परसगो का प्रयोग प्रचुर है। इसमे रासो की भाषा विकसित अवस्था की प्रमाणित होती है ।

यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य है कि प्राकृत-पैंगलम् के संबंध-परसर्गों में से कुछ मैथिली की भाँति *क* है किन्तु ब्रजभाषा की भाँति *को* अथवा *कौ* परसर्ग का एक भी उदाहरण नही है। इससे क्या यह समझा जाय कि 'प्राकृत-पैंगलम्' के इन रूपों मे प्राचीन मैथिली के तत्त्व हे ? या फिर यह समझा जाय कि यह *क* परसर्ग परवर्ती *का, को, कौ* का आरभिक रूप है ?

जो हो, इस विषय मे रासो की स्थिति अधिक स्पष्ट है। यहाँ सबध परसर्ग *को* के कुछ उदाहरण अवश्य मिलते है। परंतु आधुनिक ब्रज का *कौ* नही मिलता।

सबध-परसर्ग को लेकर प्राकृत पैंगलम् और पृथ्वीराज रासो की तुलना से यहाँ जो निष्कर्ष प्रासंगिक है, वह यह कि ये दोनो ही रचनाएँ उस वर्ग की हिंदी से सबद्ध हैं जिनका संबंध परसर्ग—क मूलक होता है और इस दृष्टि से ये *रा* परसर्ग वाली पश्चिमी राजस्थानी से भिन्न हैं।

(ज) इतनी दूर तक प्राकृत-पैंगलम् और पृथ्वीराज रासो की भाषा मे पौर्वापर्य सबंध प्रमाणित होता है। किन्तु इसके बाद प्राकृत-पैंगलम् में ध्वनि-सबधी एक प्रवृत्ति ऐसी मिलती है जिससे दोनो के बीच प्रादेशिक अतर की पुष्टि होती है। प्राकृत-पैंगलम् मे प्रायः *ड़* और *र* को *ल* मे परिवर्तित कर देने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है, जैसे—

धारा = *धाला* (३१८)
चमर = *चमल* (३२७)
तुर्क = *तुलक* (२६२)
परइ, पड़इ = *पलइ* (३२७)
बहुरिआ = *बहुलिया* (३१३)
गौड़ = *गोल°* (२१६, ४२३)
कलचुरि = *कलचुलि* (२६६)

कन्नडा = *कणणला* (४४६)

तुरंता = *तुलंता* (५२०)

इस *ल* के लिए प्राकृत पैंगलम् की हस्तलिखित प्रति मे कोई वशिष्ट चिह्न था या नहीं, इसका उल्लेख उसके विद्वान् संपादक श्री चन्द्रमोहन घोष महोदय ने नहीं किया है; फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि इस *ल* का उच्चारण उस समय बहुत कुछ मूर्धन्य रहा होगा।

वैसे, र > *ल* परिवर्तन मुख्यतः मागधी तथा वैकल्पिक रूप से चूलिका पैशाची प्राकृत की विशेषता रही है।[1] इनके अतिरिक्त पुरानी पश्चिमी राजस्थानी में भी र > *ल* परिवर्तन के प्रमाण मिलते हैं।[2]

यह निर्णय करना कठिन है कि प्राकृत पैंगलम् की यह र > *ल* परिवर्तन की प्रवृत्ति मागधी समझी जाय या पुरानी पश्चिमी राजस्थानी? जब कि इस पद्य-संकलन की रचनाओ मे रूप-रचना की दृष्टि से बिहारी, पूर्वी और पश्चिमी सभी बोलियो के तत्त्व मिलते हैं तो इस ध्वनि-प्रवृत्ति को राजस्थानी कह देना युक्ति-सगत प्रतीत नहीं होता। संपूर्ण रचना मे पछाही प्रवृत्ति की प्रधानता के कारण ही इस ध्वनि-प्रवृत्ति को चाहें तो राजस्थानी कह सकते हैं।

पृथ्वीराज रासो मे भी एकाध स्थान पर र > *ल* परिवर्तन के उदाहरण मिलते हैं। लघुतम के कनवज्ज समय मे एक स्थान पर *सरिता* के लिए *सलिता* (२०३.१) रूप मिलता है। *सरिता* के लिए *सलिता* का प्रयोग कबीर-ग्रंथावली में भी मिलता है—

बहती सलिता रह गई [४'६]

(झ) साराश यह है कि पृथ्वीराज रासो की भाषा परंपरा के अनुसार पिंगल होते हुए भी प्राकृत-पैंगलम् की पिंगल से अधिक विकसित है; इसमे प्राकृत अपभ्रंश के रूढ़ रूपो के अवशेष अपेक्षाकृत कम हैं और नव्य भारती आर्यभाषा के नये रूप अधिक हैं।

---

१. र-साल-शौ। (हेमचन्द्र, प्राकृत व्याकरण ८ ४. २८८), रस्य लो वा। (वही, ४ ३२६)।

२. तेस्सितोरी, पुरानी राजस्थानी § २६

भट्ट भाषा-शैली और पृथ्वीराज रासो

३२. पृथ्वीराज रासो की भाषा में ध्वनि और रूप की दृष्टि से एक ओर नवीनता मिलने के साथ ही दूसरी ओर जो प्राचीनता मिलती है, उसका कारण तब स्पष्ट होता है जब हम राजस्थान के अन्य भट्ट कवियो की रचनाएँ देखते हैं। प्राकृत-अपभ्रंश की तरह व्यंजन-द्वित्व वाले शब्दों के प्रयोग नरहरि, गंग आदि भट्ट कवियो की रचनाओं मे भी प्रचुर-मात्रा मे मिलते हैं। नरहरि और गंग अकबर के समकालीन थे और संभवतः उनके दरबारी कवि भी थे। इस प्रकार ये कवि १६ वी सदी के उत्तरार्ध में थे। पृथ्वीराज रासो के अतिम संग्रह और सकलन का समय भी लगभग यही बताया जाता है और उसकी प्राचीनतम प्रतियाँ भी इसी के आसपास की हैं। ऐसी हालत मे तत्कालीन 'भट्ट-भणत' के रूप मे भी पृथ्वीराज रासो की भाषा नरहरि तथा गग की भाषा-परपरा मे आती है।

नरहरि भट्ट के वादु[1] मे पृथ्वीराज रासो की शब्द-रचना के समान निम्नलिखित रूप मिलते हैं।

एक्क (२·१), *रिझ्झहि* (२·२), *झग्गरहि* (२·४), *अप्पु* (२·४), *बढ्ढेउ* (२·५), *बोल्लहि* (२·६), *भुल्लहि* (३·५), *अत्थि* (४·२), *मुढ्ढ* (४·५), *समत्थ* (५·२), *किज्जऔ* (६·५), *दिज्जऔ* (६·६), *भज्जेउ* (७·२), *धुपत्ति* (७·३), *हत्थहं* (७·३), *वित्थरउं* (७·५), *गोप्पि* (८·४), *सब्ब* (८·५)।

विद्वानों का अनुमान है कि 'ओजपूर्ण शैली को सुसज्जित करने के लिए' भट्ट कवियों ने इन प्राकृताभास रूपों का प्रयोग किया है।[2] किन्तु शौर्य के अतिरिक्त शृंगार के प्रसंग मे भी इस शैली का व्यवहार देखकर किसी अन्य युक्तिसगत कारण की सभावना प्रतीत होती है। भट्ट वस्तुतः पेशेवर कवि होते आए है और पेशे की परंपरा के कारण इनमे छंद-अलकार के साथ-साथ भाषा की प्राचीन परंपरा भी अधिक सुरक्षित रहती है। संभवतः इसीलिए इनकी रचनाओं में प्राकृताभास शब्दों की अधिकता मिलती है। पृथ्वीराज रासो की भाषा मे पिंगल के साथ प्राचीन प्राकृताभास शब्दों की बहुलता के लिए यह व्याख्या प्रस्तुत की जा सकती है।

---

१. डा० सरयूप्रसाद अग्रवाल—अकबरी दरबार के हिंदी कवि, १९५० ई०, परिशिष्ट।

२. डा० धीरेन्द्र वर्मा, ब्रजभाषा § ३३

प्रथम अध्याय

ध्वनि-विचार

लिपि-शैली और ध्वनि-समूह

३३. पृथ्वीराज रासो की भाषा मे सामान्यतः निम्नलिखित ध्वनियाँ प्राप्त होती हैं—

स्वर : अ आ इ ई उ ऊ (ए) ए, (ओ) ओ।
ऐ औ।

व्यंजन : क ख ग घ
च छ ज झ
ट ठ ड ड़ ढ ढ़ ण
त थ द ध न न्ह
प फ ब भ म म्ह
य र ल व
श स ह

३४. ह्रस्व ए और ह्रस्व ओ के अस्तित्व के लिए कोई ठोस प्रमाण नहीं है। अन्य प्राचीन पाडुलिपियों की तरह रासो की भी किसी प्रति मे इन स्वरो के लिए विशिष्ट लिपि-चिह्न का न मिलना स्वाभाविक है। छद-प्रवाह मे ए से सर्वत्र दीर्घ ए का ही भान होता है; जैसे सभावाली प्रति के *ग्यारह से एकानवे* (१०२), तथा *एक रवी मंडल भिदाहि* (१८३) मे *एक* और *एकानवे* दोनो शब्दो में ए के दीर्घ उच्चारण की रक्षा की गई है; यहाँ तक कि *रवि* का *रवी* कर दिया गया है किन्तु ए को ह्रस्व नही किया गया है। परंतु उसी पंक्ति मे आगे *इक करिहै आनद* पाठ है जिससे एक के इक उच्चारण का पता चलता है। इससे मालूम होता है कि ए का ह्रस्व उच्चारण भी होता है जो बहुत कुछ इ के निकट था; इसलिए लिखते समय उसे इ के द्वारा व्यक्त करते थे। एक > इक्क > इक परिवर्तन से भी इस मत की

पुष्टि होती है कि अपभ्रंश-काल से ही आदि ए का उच्चारण संभवतः स्वराघात के कारण ह्रस्व हो गया था। ह्रस्व ए के उच्चारण की पुष्टि अप० *एह* (हेम० ८.४.३३०) > *इह* (१४.१)* > *यह* (५७ २) से भी होती है। ए के ह्रस्व उच्चारण को वर्तमान काल की तिङन्त-तद्भव क्रियाओं के पदान्त-इ का पूर्ववर्ती-अ-के साथ सयुक्त होकर-ए तथा-ऐ हो जाना भी प्रमाणित करता है। इस प्रकार पृथ्वीराज रासो मे ह्रस्व ए के अस्तित्व का अनुमान लगाया जा सकता है।

३५. ह्रस्व *ओ* के लिए भी रासो मे कोई स्वतत्र चिह्न नहीं है। परंतु यहाँ भी ध्वनि-परिवर्तन की प्रवृत्ति के सहारे ह्रस्व *ओ* की सभावना मानी जा सकती है। दूरवर्ती निश्चयवाचक सर्वनाम के लिए अपभ्रंश मे *ओइ* होता था जिसे हेमचन्द्र ने सस्कृत *अदस्* का आदेश कहा है (प्राकृत व्याकरण, ८४.३६४)। इसके लिए स्वयभू के पउम-चरिउ (७.३. ५,६; १८.१.३,६) मे *उहु* रूप मिलता है। प्राकृत पैंगलम् (१३६) मे *ओ* का प्रयोग हुआ है। रासो मे *उह* (३०७.३ , ३०६.४), *वह* (३०९.६) दो रूप मिलते हैं।

ओ > उ > व परिवर्तन से स्पष्ट है कि अपभ्रंश-काल से ही ओ का उचारण ह्रस्व हो चला था। इस तथ्य की पुष्टि निष्ठा के उकारान्त तथा ओकारान्त क्रियापदों से भी होती है।

इस प्रकार ए की भाँति ओ के भी ह्रस्व उचारण का अनुमान रासो मे लगाया जा सकता है।

३६. अनुनासिक स्वर भी रासो मे मौजूद हैं। इन्हें लिपि शैली के परंपरागत अनुस्वार के द्वारा व्यक्त किया गया है। छद-प्रवाह से परिचित व्यक्ति अनुस्वार और अनुनासिक मे अंतर कर सकते हैं, यह सोचकर ही लिपिकारों ने दोनों ध्वनियों को एक ही चिह्न से व्यक्त किया है। किन्तु जैसे कि डा० चैटर्जी ने *उक्ति*

---

* यहाँ और आगे भी जहाँ ग्रंथ-नाम न हो और सदर्भ-सकेत के लिए केवल सख्याएँ हो तो पृथ्वीराज रासो (कनवज्ज समय, लघुतम रूपान्तर) समझा जाय। सख्याओ में से पहली पद्य सख्या है और दूसरी पक्ति-सख्या।

व्यक्ति-प्रकरण की प्राचीन कोसली मे 'सकामक अनुनासिकता' लक्षित की है[1], रासो मे भी इसी प्रकार की सानुनासिकता मिलती है। सभा की प्रति में *सगुंन, भांन, प्रमांन, प्रयांन* (४१२|१)* से यह सानुनासिकता प्रमाणित होती है। यहाँ परवर्ती दन्त्य अनुनासिक ध्वनि के प्रभाव से पूर्ववर्ती ध्वनि भी अनुनासिक हो गई है। ऐसी अनुनासिकता के प्रमाण कबीर ग्रथावली के *बांन, रांम, कांम* आदि शब्दों मे भी दिखाई पडती है।

इसके अतिरिक्त वर्गीय अनुनासिक का द्वित्व व्यजित करने के लिए पूर्ववर्ती ध्वनि-चिह्न के ऊपर अनुस्वार देने की प्रवृत्ति दिखाई पडती है, जैसे *संमुह, तंमुह*, (४१२|१)।

३७. ड़ के लिए रासो की प्रतियो मे कोई स्वतत्र चिह्न नहीं है। ड के द्वारा ही ड़ को भी व्यक्त किया गया है। रासो (३·४,५) के *उडि* (*उडिय*), *बडगुज्जर* (*बड़-गुज्जर*) जैसे शब्दों से पता चलता है कि ड़ के उच्चारण का अस्तित्व अवश्य था। अपभ्रंश के बाद नव्य भारतीय आर्यभाषा मे यह नई ध्वनि है।

३८. धारणोज की लघुतम रूपान्तर वाली प्रति मे तो नहीं, किन्तु सभा की प्रति मे *ब* और *व* का अन्तर स्पष्ट है। इन दोनों ध्वनियों को दो भिन्न चिह्नो द्वारा स्पष्टता के साथ व्यक्त किया गया है। *रवि* के लिए *रबि* कही लिखा न मिलेगा और न तो *बोल*° के लिए कहीं *वोल*°। फिर भी इसमे पूरा सन्देह है कि *व* का पूर्ववर्ती उच्चारण उस समय तक सुरक्षित रहा होगा। पूर्व के लिए *पुब्ब* (१३·१, १४·२) शब्द का मिलना ही बतलाता है कि प्रा० भा० आ० का *व* इस भाषा मे *ब* हो गया था। ऐसी स्थिति मे श्रुति-परक उच्चारण को छोड़कर *व* के मूल और पूर्ण उच्चारण की संभावना नहीं प्रतीत होती।

य की स्थिति भी यही है। सपूर्ण कनवज्ज समय मे *य* से शुरू होने वाले शब्द कुल १६ हैं जिनमें से १४ तत्सम शब्द हैं और वे भी प्रायः संस्कृत श्लोकों मे प्रयुक्त

---

१. उक्ति०, १९५३ ई०, स्टडी §२१

* पत्र-संख्या। पृष्ठ

हुए हैं। *य* से शुरू होनेवाले तद्भव शब्द निकटवर्ती निश्चयवाचक सर्वनाम *यह* और *येह* हैं। इनके अतिरिक्त आदि *य* प्रायः ज में बदल गया है; जैसे *यदि* > *जदि* >जइ (१४१'४)।

य श्रुति और संयुक्त व्यंजन के एक भाग के रूप में ही सुरक्षित दिखाई पड़ता है।

३६. व्यंजन-द्वित्व सूचित करने के लिए सभा की प्रति में कोई चिह्न नही है। मालूम होता है, लिपिकार ने उनका सही उच्चारण पाठक के छंद-बोध पर छोड़ दिया है।

भट (*भट्ट*), *पुबह* (*पुब्बह*), *उतर* (*उत्तर*), *कनवज* (*कनवज्ज*), *पिषन* (*पिष्षन*), *दिलीपति* (*दिल्लीपति*) (४२३।१) इत्यादि शब्द इस प्रवृत्ति के उदाहरण हैं। लिपि मे द्वित्व चिह्न का अप्रयोग देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि ऐसे स्थलो पर प्रथम अक्षर पर स्वराघात की प्रवृत्ति रही होगी।

४०. न्ह और म्ह : क्रमशः दन्त्य और ओष्ठ्य अनुनासिकों की ये महाप्राण ध्वनियाँ रासो मे सामान्य रूप से मिलती हैं। इनका उदय सभवतः अपभ्रंश काल से ही हो गया था। बहुत सभव है, ये उससे भी पहले रही हों।

छंद-सम्बन्धी ध्वनि-परिवर्तन

४१. रासो मे प्रयुक्त तद्भव शब्दों मे होनेवाले ध्वनि-परिवर्तन के नियमो का अध्ययन करते समय आरंभ मे ही चिरपरिचित शब्दो के ऐसे रूपान्तर सामने आते हैं कि ध्वनि विज्ञान के विद्यार्थी की कठिनाइयाँ बढ़ जाती हैं। साहित्य के समीक्षक नियमित और अनियमित सभी प्रकार के रूपान्तरो को 'कवि की स्वेच्छा' कहकर आगे बढ़ जाते हैं, किन्तु इससे समस्या हल नही होती। कवि की स्वेच्छा का ही शास्त्रीय नाम 'छन्दोऽनुरोध' है। छदों के अनुरोध से ही कवि यथास्थान प्रचलित शब्दो मे ध्वनि-परिवर्तन करने को विवश होता है। इसलिए नियमित ध्वनि-परिवर्तन के वैज्ञानिक अध्ययन से पूर्व छंद-संबधी ध्वनि-परिवर्तनों को अलगाकर विचार कर लेने से सुविधा होगी।

छंद-संबंधी परिवर्तन सर्वथा कवि की स्वेच्छा पर निर्भर नहीं होते। अनियमिता से प्रतीत होनेवाले उन परिवर्तनों का भी यदि व्यवस्थित रीति से विश्लेषण किया जाय तो निश्चित नियमो का पता चलेगा। रासो मे छंद संबंधी ध्वनि-परिवर्तन के निम्न-लिखित नियम दिखाई पड़ते हैं।

४२. *लघु अक्षर को गुरु* बनाने के लिये रासोकार ने प्रायः तीन उपायों से काम लिया है :—

(क) *स्वर का दीर्घीकरण*—

उघरिय (उद्+ √ घट्)	=	ओघरियो	(३१६ ३)
कमलनु	=	कमलानु	(३३९·१)
चल्यो	=	चालिउ	(१·२)
जुड़े	=	जुरे	(२९०·३)
पॅवार (परमार)	=	पावार	(३३४·१)
मधुर	=	माधुर	(३४४·२)
महिलनु	=	महिलानु	(३३९·२)

(ख) *व्यंजन-द्वित्व*—

(१) *समास-रचना में*

जति गति सु	=	जतिग्गतिस्सु	(१३४·१)
दह दिसि	=	दहद्दिसि	(७९·३)
मद गज	=	मदग्गज	(१८२·२)
नव जल	=	नवज्जलु	(२७२·२)
हय गय	=	हयग्गय	(७९·३)

(२) *वीप्सा अथवा पुनरुक्ति में*

कलक्कला	(१३३·१)	तलतलस्सु	(१३८·१)
कसिक्कसि	(७९·१)	धनिध्धनी	(१३२·३)
कहक्कत	(३११.४)	लहक्कक	(७५·१)

खरक्खर (३०४'३)
गहुग्गह (१६६'१)

(३) *एक ही शब्द के अन्तर्गत*

क : अलक्क (५१ २, ११८'२), उरक्की (१५६.३)
करक्कस (१३४'३), कनक्क (१७५'२)
किरक्कि (१३६ १), ठक्क (२८८६'२),
कटक्क (२८२.१) धनुक्क (११८ १), पायक्क (१७'२)

ख : दिक्खए (१ २), मुक्ख (१७७'३),
विक्खहर (३१५'७)

ग : सरग्गि (१३२ ३)

च : परच्चए (६८'३), सविच्चित (२८६'१)

ज : कमधज्ज (३०३'२), कनवज्ज (१३'३),
फवज्जि (२०८ १), सुज्जल (३७),
हज्जारखी (२५४'१), सुज्जान (६४५),
सावज्ज (२२६'१)

ट : निकट्टे (२६५'२), कमट्ठ (२४४ २)

त : उत्तरिय (६'१), तडित्तह (७७. ४), तारत्त (५०'३),
धावत्त (३२०'२) निरत्त (१३६'२), परवत्त (६६'३)
भत्त (२४७'२), अगणित्त (२३१'१)

द : नारद्द (२२३. ४), सरद्द (४११), सबद्द (११६.१)

न : करन्नु (१७४.२), चरन्न (१७४४), मन्न (१७४.२)
मोहन्न (५४.१), गमन्न (६८.३), श्रवन्न (११८.२)
हिरन्नहि (३४३.२), त्रिन्नयन (२१६.४), रावन्न (२१५.१)

प : उप्पमा (५२.३), तरप्प (१७२.२), तलप्प (१६०.३)
धुप्पदं (१३६.३), त्रिप्पु (१८२.२), मधुप्प (२७१.४)

ब : साहिब्ब (१०२.२), सब्ब (१०२ २), अब्बीर (६४ ३)
तब्ब (२२३ ३)

भ : कुकुम्भ (५४.४)

म : कम्मान (२६१.३) दाहिम्मो (२६६.२), द्रुम्म (२५२.२)
दाडिम्म(८८ १) सनम्मुख (२७८.६),
रेसम्म (२३५.१)

ल : कुल्लए (२४३ १), गुहिल्लय (३.३),
तबल्ल (२२३ ३), पल्ल (२४२.१), पहिल्ले (२६६.१)
हल्लय (३.४), त्रिबल्ली (३१.४), मिल्लान (१४५.१)

व : चुव्वई (२३६.२)

स : निकस्सि (२८६.२),रस्स (८० २)

ध्यान से देखने पर पता चलता है कि शब्दान्तर्गत व्यजन-द्वित्व सबसे अधिक *क*, *ज*, *न*, और *ल* मे हुआ है। कारण स्पष्ट है ; क्योंकि कठ्य स्पर्श, तालव्य घर्ष-स्पर्श, दन्त्य अनुनासिक और पार्श्विक व्यजन ध्वनियाँ सरलता से द्वित्व हो सकती हैं।

(ग) *शब्दान्त मे अनुस्वार*—जिस प्रकार तुलसीदास ने रामचरित मानस मे अधिकाशतः तुकान्त मे मात्रापूर्ति के लिये *किसान* से *किसाना* जैसे आकारान्त रूप कर दिए है तथा कहीं कहीं तुकान्त को अनुस्वार से युक्त कर दिया है जैसे :—

चन्द्रहास हर मे परितापं (सुन्दर कांड)

उसी प्रकार रासो मे भी तुकान्त मे मात्रा पूर्ति के लिये अनुस्वार जोड दिया गया है। इसके उदाहरण पदे पदे मिलते हैं, फिर भी देखिए छंद सं० २४६,

अनुस्वार की वृद्धि कभी-कभी समास मे भी दिखाई पड़ती है ;

जैसे—कामं कला (१४०.२)

४३. गुरु अक्षर को लघु बनाने के लिए रासो में निम्नलिखित पद्धतियाँ अपनाई गई हैं :—

(क) *ह्रस्वीकरण* :

अपूर्व > अपुव (३३६·५)
आबद्ध > अबद्ध (२६१·२)
कांति > कांति (३४०·१)
काया > कया (२६६·३)
ढिल्ली > ढिल्ल (२५३·१)
द्वितीय > दुतिय (३१८·४)
भ्रांति > भंति (३१५·६)
मानो > मनो (३०८·२)
राठोर > रठोर (३०५·१)

(ख) *व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण* :

अपुव्व (अपूर्व) > अपुव (३३६·५)
ढिल्ली > ढिली (३३५·१)
अप्पन (आत्मन्) > अपन (३०२·२)
चालुक्क (चालुक्य) > चालुक (२७७·२)
दिज्जइ > दिजइ (२७६·१)

(ग) *अनुस्वार का अनुनासिकीकरण*

कंपइ > कँपे (२६५·३)
गयंद > गयँद (३११·१)
चंपति > चँपति (३०६·२)
चंपिउ > चँपिउ (३०५·२)
पुंडीर > पुँडीर (२०६·१)
बंध > बँध (३४६·४)
संयोग > सँजोग (३४१·२)
हिंदुवान > हिंदुवाण (२७७·१)

४४. छंद सम्बन्धी परिवर्तनो मे गुरु से लघु बनाने की प्रवृत्ति उतनी नहीं है जितनी लघु से गुरु बनाने की। यह प्रवृत्ति मध्ययुग के अन्य हिन्दी काव्यों मे भी मिलती है। सन्देश रासक में भी इन पद्धतियो का आश्रय लिया गया है।[१] रासो में छन्द-सम्बन्धी ध्वनि-परिवर्तनो पर विचार करते हुए बीम्स को इतनी अव्यवस्था दिखाई पडी कि उन्होने रासो के *डिंगल-भाषा* नामकरण का कारण इस अव्यवस्था को ही ठहराया। बीम्स के अनुसार "वर्तमान युग के भाट चंद की शैली को 'डिंगल-भाषा' कहते हैं क्योकि यह छंदः शास्त्र के बँधे नियमों का पालन करने वाली पिंगल के विरुद्ध है।[२] डिंगल नामकरण का जो कारण बीम्स ने बताया है, उसके बारे मे यहाँ कुछ भी कहना प्रासंगिक नही है। लेकिन चंद छदों मे अव्यवस्था देखकर उनका संकुचित (लज्जित) होना युक्ति-सगत नही है। स्वय रासो के 'आदि पर्व' मे ही मात्रा-सम्बन्धी ये वाक्य कहे गए हैं—

छद प्रबंध कवित्त जति, साटक गाह दुहत्थ।
लहु गुर मण्डित खंडियहि, पिंगल अमर भरत्थ॥ ८१॥
युत अयुत जुक्ति विचार विधि, वयन छद छुट्यौ न कह।
घटि वड्ढी मती कोई पढइ, तौ चद दोस दिज्जो न वह॥ ८२॥

रासो के छद सम्बन्धी परिवर्तन वस्तुतः भाषा के लय प्रवाह के अनुसार ही है और ध्वनि-परिवर्तन का यह भी एक नियमित ढंग है।[३]

स्वर-परिवर्तन

ऋ :

४५. रासो की लिपि-शैली मे ऋ वाले तत्सम शब्द प्रायः *री* के द्वारा व्यक्त किए गए हैं। इससे मालूम होता है कि उस समय तक ऋ स्वर नही रह गया था और उसका उच्चारण सामान्यतः इ के निकट समझा था। लेकिन

---

१ डा० हरिवल्लभ भायाणी, सदेह रासक § १६, § १७,

२ बीम्स स्टडीज़ इन दि ग्रैमर ऑव चद वरदायी जे० ए० एस० बी० जिल्द ४२, भाग १, १८७३ ई०।

३. एलेन, फ़ोनेटिक्स इन एंशिएट इंडिया § ३ २३

तत्सम शब्दो के अतिरिक्त रासो मे अनेक ऐसे अर्ध तत्सम शब्द प्रयुक्त हुए है जिनमें ऋ अन्य स्वरो मे परिवर्तित हो गया है। यह परिवर्तन रासो की कोई अपनी विशेषता नहीं है बल्कि प्राकृत-अपभ्रश की परपरा का निर्वाह मात्र है। ऋ के परिवर्तन के कुछ उदाहरण निम्नलिखित है।

ऋ < अ

गृह > घर (२७६ ५, ३०२ २, ३१६.२, ३२६.२)

ऋ > इ :

अमृत > अमिय (३११.३)

कृत > किय (१०५.१)

हृदय > हिय (७२.२)

नृत्य > नित्त (१३० २)

ऋ > ई :

मृत्यु > मीचु (२७६ २)

ऋ > उ :

मृत > मुअ (३२०.६)

पृच्छ > पुच्छ (४७.३ ११६.४)

ऋ > ए :

गृह > गेह (५८.३, ६७.४, ६२ २, १७३ ३, २७३.२)

अन्त्य स्वर :

४६. रासो मे अन्त्य स्वर के लोप तथा ह्रस्वीकरण की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। *अन्त्य स्वर के ह्रस्वीकरण* की प्रवृत्ति अपभ्रश काल से ही व्यापकता प्राप्त कर चुकी थी।[1] भाषावैज्ञानिको ने लक्षित किया है कि ठेठ अपभ्रंश के

---

१. अल्सडोर्फ़ . अप० स्टडी, पृ० ७, भायाणी . संदेश रासक; ग्रैमर § ४१, टर्नर : 'फ़ोनेटिक वीकनेस आफ़ टर्मिनेशनल एलिमेंट्स इन इंडो आर्यन', जे० आर० ए० एस०, १९२७, पृ० २२७–३९

सभी शब्दो का अंत ह्रस्व स्वर से हुआ है। सभवतः आदि अक्षर पर स्वराघात होने के कारण ही अन्त्य स्वर के उच्चारण मे दुर्बलता आई है। इस नियम के अन्तर्गत आने वाले रासो के शब्द निम्नलिखित हैं--

गंग > गंग (१६२.१, १७३.२, २४३.१)
धारा > धार (५१.४)
भाषा > भाष (८०.१, ८७.२)
योद्धा > जोध (८०.२, २५८ २)
वल्गा > वग्ग (१५५ १, २५६.१)
रजनी > रयणि (२७०.१)
रेखा > रेख (१३४ ३)
सेना > सेन (१००.४,८५.८,२६०.१,२६२ १,१०३.४)
शय्या > संजु (७४.४)
शोभा > सोभ (३४.१,३५ १,६६ १,७६.१,११५.१,)
लज्जा > लाज (१२१.२, १२२.२, १५२.१)
राज्ञी > रानि (१४५ ४)
भुजा > भुज (२०८ ३, ३२६ ४)

मात्र-संबंधी स्वर-परिवर्तन

४७. बीम्स का अनुसरण करते हुए कुछ विद्वानो ने रासो के शब्दों में स्वर-परिवर्तन सबधी अराजकता तथा स्वच्छदता की बात दुहराई है।[१] किसी भाषा की ध्वनि प्रवृत्ति को ठीक से न समझ पाने पर प्रायः उसमे अराजकता ही दिखाई पड़ती है। प्राकृत वैयाकरणो ने भी अपभ्र श के बारे मे इसी प्रकार के विचार व्यक्त किए हैं।[२] परंतु खोज करने पर उस अराजकता मे भी निश्चित् नियमो की प्राप्ति होती है प्राकृत-अपभ्र श की तरह रासो मे स्वर-परिवर्तन दो प्रकार के मिलते हैं।

---

१. विपिन बिहारी त्रिवेदी, चद वरदाई और उनका काव्य पृ० २६७.

२. स्वराणा स्वरा प्रायोपभ्र शे। (हेम० प्राकृत व्याकरण, ८।४।३२६), त्रिविक्रम (३'३'१), मार्कण्डेय (१७ ६)

(क) मात्रा - संबंधी

(ख) गुण - संबंधी

मात्रा-संबधी परिवर्तन के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

आ > अ :

आनंद°	>	अनंदने	(२४२·२)
आयास	>	अयास	(१६५·२)
आरंभ	>	अरंभ	(२०९·३)
अर्धांग	>	अरधंग°	(२६·३)
आरोह	>	अरोह	(५१·२)
आलाप	>	अलाप	(१२२.१)
आवास	>	अवास	(१६५·१, १८५·२)
आसाढ	>	असाढ़	(११५·२)
आहार	>	अहार	(१५४·१)
कटारी	>	कट्टरी	(१३४·१, १३५·२)
कालिदी	>	कलिदी	(५१·१)
चाँदनी	>	चंदणी	(२०७·१)
ताम्बूल	>	तंबोल	(१४८·२)
	>	तमूल	(१४६·१)
ताराजन	>	तराजन	(८७·३, २०६·४)
पाताल	>	पयाल	(२२·२, २४२·२)
राजपुत्र	>	रजपूत	(३·६, १४९·३)

ई > इ :

जीव	>	जिय	(३४६·२)
जीवन	>	जियण	(२७७·५)
जीवन	>	जियन	(९·४)

तीरभुक्ति　　　　　तिरहुत्ति* (१००२)

ऊ > उ :

भूत　　　　　हुअ　　　(३०२.४)

४८. मात्रा-सबधी स्वर परिवर्तन के जो उदाहरण यहाँ दिए गए हैं, उनमें से अधिकांश स्थलो पर आदि अक्षर में ही स्वर की मात्रा परिवर्तित हुई है। म० भा० आ० के अध्येताओ ने लक्षित किया है कि मात्रा-सबधी परिवर्तन प्रायः आद्य अक्षर के स्वर में ही होता है† और वह भी दीर्घ से ह्रस्व की ओर होता है। आद्य अक्षर में स्वर का गुणात्मक परिवर्तन बहुत कम होता है।

गुण-संबंधी स्वर-परिवर्तन

४९. स्वरो का गुण-सबंधी परिवर्तन मात्रा की अपेक्षा अधिक जटिल और विशेष अध्ययन का विषय है। रासो मे यह परिवर्तन निम्नलिखित ढग से हुआ है--

°अ° > इ :

तुरंग　>　तुरिय　(३०९.१)

अ° > इ :

रणस्तम्भ　>　रिणथंभ　(२७७.४)

शय्या　>　सिज्जा　(६४.३)

°अ° > उ :

अंजलि　>　अंजुलिय　(१७०.३)

°इ > अ :

ध्वनि　>　धुन　(२२८.२)

---

* समवतः इसका अर्थ *तीर-हुँति* (तीर अर्थात् तट से या के पास) है। इस स्थिति में भी *तीर* > *तिर* परिवर्तन प्रस्तुत नियम के अंतर्गत आ जाता है।

† डा० एस० एम कात्रे, प्राकृत लैंग्वेजेज़, भारतीय विद्या भवन, बम्बई, १९४५, पृ० ४७

इ° > उ :

द्विज > दुज्ज (७३·४, १७७·४)
बिन्दु > बुंद (३०४·४)

इ° > ऊ :

इक्षु > ऊख (२०७·२)
द्वितीय > दूव (१७७·१)

°ई° > अ :

निरीक्ष्य > निरखि (४८·१, ६४·३)

°उ > अ :

चक्षु > चख (२७·३, ३२·३, ११०·४, ३७३·२)
मुकुट > मुकट (१४९·३)

°उ° > इ :

कौतुक > कोतिग (२०५·४)
पुरुष > पुरिख (१२०·३)

°उ° > ओ :

सुवर्ण > सोवन्न (५४·१, ५८·३)

°ऊ° > ओ :

ताम्बूल > तंबोल (१४८·२)
मूल्य > मोल (३७·२)
नूपुर > नोपुरं (१३२·२)

ए° > इ :

एष > इह (१४·१, ३२·२, १०९·२)
एक > इक्क (६·२, ११०·४, १७७·२, १३८·४)

°ए° > इ :

नरेन्द्र > नरिंद (६९·२, ११२·१, १३८·४)

°ए° > उ :

देवालय > दुवाल (२०३·८)

°ओ° > आ :

छोड़ (छुट्) > छांडि (१४५·४)

°ओ° > ऊ :

क्रोध > कूह (३३१·१)

°औ° > उ :

मौक्तिक > मुतिय (३१·३)

°औ° > ओ :

कौतुक > कोतक (३१८५)

५० स्वरों के गुण मे परिवर्तन की विभिन्न स्थितियों के अध्ययन से परिवर्तन के कारणो का भी पता लगाया जा सकता है। कही तो यह परिपर्तन समीपवर्ती स्वर की अनुरूपता के कारण हुआ है जैसे *विंदु* > *वुंद* और कही स्वराघात को उपस्थिति तथा अनुपस्थिति के कारण। किन्तु परिवर्तन के कारणो की अपेक्षा उसकी स्थितियो का अध्ययन विशेष उपयोगी है।

उद्वृत्त स्वर

५१. प्राकृत-अपभ्रंश मे मध्यग व्यजनो के लोप से शब्द के उच्चारण में विवृत उत्पन्न हो जाती थी और उस स्थान पर प्रायः किसी ह्रस्व स्वर की ध्वनि सुनाई पड़ती थी। भाषावैज्ञानिक उस स्वर को उद्वृत स्वर कहते हैं। भारतीय आर्य-भाषा विशेषतः म० भा० आ० और आ० भा० आ० मे उद्वृत्त स्वर का इतिहास अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उसे स्वतन्त्र रूप से सुरक्षित रखने, य व श्रुति में परिवर्तित कर देने और पूर्ववर्ती स्वर के साथ संयुक्त करने के अनुसार आ० भा० आ० की किसी रचना की भाषा की परख होती है।

पृथ्वीराज रासो मे उद्वृत्त स्वर की ये तीनो अवस्थाएँ मिलती है।

(क) *उद्वृत्त स्वर का स्वतन्त्र अस्तित्व सुरक्षित रखना*—रासो में यह

प्रवृत्ति विरल दिखाई पड़ती है। जो थोड़े से उदाहरण मिलते हैं उन्हें प्राकृत अपभ्रंश काल का अवशेष समझना चाहिए।

चुतुष्षष्ठि > चउसट्ठि (३१३·५)
यदि > जइ (१४१·४)
राज > राउ (१३·३, १७०·२, २७०.३, ३२५ १)
वात > वाउ (३०२ २)

(ख) *पूर्ववर्ती स्वर के साथ उद्वृत्त स्वर की संधि*—दो स्वरो का सह अस्तित्व रासो को स्वीकार नही है। प्रायः उन्हें स्वर-संकोचन के द्वारा अथवा सधि के द्वारा सयुक्त कर देने की ओर झुकाव अधिक है। यह प्रक्रिया शब्द के अन्तर्गत तथा शब्दान्त दोनो स्थितयो में दिखाई पड़ती हैं।

शब्दान्तर्गत :

तृतीया > *तिईज > तीज (१·१)
पादातिक > *पाआइक > पाइक > पायक्क (१७ २)
राजपुत्र > *राअउत्त > रावुत > रावत (३२० १)
ज्वालापुर > *जालाउर > जालोर (२७७·२)
सुवर्ण > सोनि (१७५·४)
श्रवण > स्रोन (५५·३, ५६·१, २६३·१)
शाकंभरी > *सअंभरी > संभरि (१५·२,१४२·१,२७०·६)
मयूर > मऊर > मोर (७१·३, १७७ ४)
संमुख > संमुह > साम्हो (४·१, ४२·२)

शब्दान्त में :

कलियुग > कलऊ (८८·२)
कंचुक > कंचुअ > कंचू (५२·१)
समय > समै (६५·४)
जय > जै (१६०·४)

राज > राअ > रा (२५७·३, २७७·५)
ऐरावत > *ऐरावअ > ऐराव (१६·२)
जंगलपति > जंगलवइ > जंगलवै (३११·२)

पदान्त मे :

उद्वृत्त स्वर के सकोचन का प्रभाव रूपरचना के क्षेत्र मे विशेष दिखाई पडता है। इसके द्वारा विकारी रूपो तथा क्रियापदो के रूपो मे बहुत परिवर्तन हो गया।

(१) तृतीया विभक्ति मे ॰अइ > ॰ऐ—

हत्थइं > हत्थैं (२२६ ४)
तइं > तैं (२७७ १, २,३,४)

(२) वर्तमान काल के तिङन्त क्रिया-पद में —॰अइ > ॰ऐ

कहै (१४९·३, ३०८·१) = कहइ
चलै (३·४, ३०८·१) = चलइ
आवै (१०४·१, १५९·४)
कंपै (२३८·२)
सुनै (४२·१)
जंपै (२९९·२) रहै (७४·४, १४५·५, २७४·५)
गिनै (५७·२) झंपै (२३७·१)
छुट्टै (५१·३) जानै (२·१, २६१·४)
है (१०९·१) रक्खै (२७६·१)

(३) विधि और कर्मवाच्य के क्रिया पद मे— ॰अइ > ॰ऐ

जग्गिजै (१८·१) दिक्खियै (१६·२, १६·४)

(४) भविष्यत् के क्रिया-पद में— ० अइ > ऐ

जानिहै (९४·५) भिद्दिहै (६·२)

(५) भूत कृदन्त, पुंल्लिग, मे— ० अउ > ओ

आयो (८३·४) चल्यो (१४·२, ३·५)
पायो (८३·३) फूल्यो (१५·१)
गयो (८३·१) ऊयो (१२६·२)
भयो (२६६·२, ३०६·२, ३११·४, ३१८·५)
भो (३२८·१)

(६) भूत कृदन्त, स्त्रीलिग, मे— इय > ई

भई (३४६·४) चली (११३·१, २०५·२)
करी (२८६·१, २८९·१) चढी (१६४·२)
थक्की (१५८·१) थट्टी (१८१·१, १८६·३)
धाई (२२७·१, ३४०·२)

(७) भूत कृदन्त, बहुवचन, में ०इअ > ए

चढ़े (२८७·१) लिये (१०२·२)
कढ़े (२८७·२) चमके (२०७·१)
उये (१५·२) चले (१८६·१)

(ग) *उद्वृत्त स्वर का य श्रुति में परिवर्तन*—रासो मे स्वर-संकोचन के बाद श्रुति का स्थान आता है। व श्रुति की अपेक्षा रासो में य श्रुति अधिक मिलती है। इस प्रवृत्ति को प्राकृत अपभ्रंश परम्परा का निर्वाह समझना चाहिए। इसका बिचार व्यजन-प्रसंग मे किया जायगा।

व्यंजन-परिवर्तन

क. असंयुक्त व्यंजन

५२. *महाप्राणीकरण:* रासो में आदि और अनादि अल्पप्राण व्यंजन को महाप्राण कर देने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है।

स्कंधक > खंधउ (३२०·४)

कंधार > खंधार (३२४·२)

स्कम्भ > खंभ (४२·२)

गृह > घर (२७६·५)

√ ज्वल् > झलकंत

√ स्था° > ठक्की (२२६·२)

स्थितकी > ठठुक्की (६६·१)

अंकुर° > अंखुली (२४१·१)

वल्गा > वाघ (३२४·३)

५३. *घोषीकरण* : अघोष व्यंजनों में से कुछ को रासो में घोष बना देने के उदाहरण मिलते हैं, जैसे,

अनेक > अनेग[1] (२८५·१)

एक > एग[2] (१८६·१)

कौतुक > कोतिग (२०५·४)

चातक > चातग (१६१·४)

प्रकट > प्रगट (३१०.१, ३२६·२)

यहाँ केवल क के घोषीकरण के प्रमाण मिलते हैं। संभव है, घोष बनाने की प्रक्रिया इससे अधिक व्यापक रही हो।

५४. *मूर्धन्यीकरण* : कुछ दन्त्य ध्वनियाँ रासो में मूर्धन्य रूप में प्रयुक्त मिलती हैं।

थ > ठ :

ग्रंथि > गंठि (१७७·२, १७८·२)

---

१. तुलनीय संदेश रासक; कड्डिय कुडिल अणेग तरगिहिं (१७७ २)

२. वही, एगु इक्कट्ठु कट्ठु मह दिन्नउ (१८० ४)

त > ड :

गर्त > गड्ढे (१५५ १)

द > ढ :

दिल्ली > ढिल्ली (४२·१, १००·१, १८६·४, १६८·३)

परतु अनुनासिक न का मूर्धन्य *ण* मे परिवर्तन बहुत कम हुआ है। इससे स्पष्ट है कि रासो की प्रवृत्ति सभी ध्वनियो को मूर्धन्य करने की ओर नहीं थी।

५५. *ण-त्व विधान* : रासो मे थोड़े से तत्सम तथा अर्ध-तत्सम शब्दो के अतिरिक्त निम्नलिखित स्थलो पर न > *ण* परिवर्तन हुआ है—

कथन	कहणो (२८०·१)
श्मशान	मसाण (२६६ १)
हिंदुवान	हिंदुवाण (२७७ १)
रहना (√रह्०)	रहणो (२८०·२)
भानु	भाणु (२८७ २)
भानु	भाणं (२६६·२, २८५·२)
मने (मनसि)	मणि (२३८·१)

अर्ध-तत्सम अवशेष :

रजनी	रयणी (२६७·१)
वदन	वयण (२२८ २)
चंद्रिका	चंदणी (२७०·१)

५७. ण > न :

अगनित (३१७·६)	कारन (४५·२)
अरुन (३१८.५)	किरन (४५ २)
कंकन (७६·६)	गन (२७·१, १८०·१)

कर्न (७६·३)	गुन (८७·३, ६०·१, १६८·४)
मोहिनी (२७३·२)	निर्वान (३१७·५)
चरन (२४·१)	पानि (५२·३, १७१·३, १६०·१)
तरुन (४६·२, ३३३·४)	पान (३३·१, १४५·६)
तीन (८६·२, १०१·३	पूरन (७५·२)
दक्खिन (१५०·२)	प्रनाम (८६·२)
दच्छिन (२०८·३)	प्रमान (४२·२)
दप्पन (५३·१)	प्रवीन (१३७·३)
धरनि (६८·२, २६६·३)	प्रान (१४१·४, १७४·४)

ण > न की ओर विशेष झुकाव से प्रमाणित होता है कि रासो की भाषा राजस्थानी की अपेक्षा ब्रजभाषा के अधिक निकट थी।

५८ *मध्यग-म-की स्थिति* : अपभ्रंश की तरह रासो मे भी मध्यग म को विकल्प से वँ कर देने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है।

कुमारी	कवँारि (१७८·१)
तोमर	तोवँर (२३५·२, २३६·६)
पामार	पावांर (३·४)
प्रमाण	प्रवान (५·२)
भ्रमर	भवंर (३०१·२)
सामंत	सावंत (१२६·१, १४६·६, ३२२·२)

५६. *मध्यग तथा अन्त्य व की स्थिति* : भाषावैज्ञानिकों ने अन्त्य व के लोप और उ मे परिवर्तित हो जाने को ब्रजभाषा की विशेषता बतलाई है।[1] फलस्वरूप रूप रचना के क्षेत्र मे अपभ्रंश के पूर्वकालिक प्रत्यय इवि और अवि ब्रजभाषा मे केवल इ के रूप मे अवशिष्ट रह गये। इसके अतिरिक्त *राव* > *राउ*

---

१ भायाणी, संदेश रासक, ग्रैमर § ३३, सी, पृ० ४८

हो गया। इस प्रकार ध्वनि तथा रूप-रचना दोनों ही दृष्टि से ब्रज में **–व,– –व** का ध्वनि-परिवर्तन महत्वपूर्ण है। रासो मे वे दोनो विशेषताएँ लक्षित की जा सकती हैं।

६०, *मध्यग तथा अन्त्य स की स्थिति :* रासो में अन्त्य–**स** का परिवर्तन प्रायः ह मे हो गया है। सख्या वाचक विशेषणों मे तत्सम–**श** पहले–**स** हुआ फिर–**ह** हो गया ; जैसे

दश > दस > दह (७६. ३, १६३. २);
एकादश > ग्यारस >ग्यारह (१'१) द्वादश > द्वादस > बारस >
बारह (३३६. ३) त्रयोदश > तेरस > तेरह (३१८'६)
वस्तुतः यह अन्त्य–स स्वरान्तर्गत अथवा मध्यग ही कहा जायगा।
केसरी > केहरी (७२. २) इसी प्रवृत्ति का परिणाम है।

षष्ठी विभक्ति मे °स्य > °स्स > °ह परिवर्तन इसी नियम के अन्तर्गत हुआ था ; जिसके फलस्वरूप मे रासो मे षष्ठी के निम्नलिखित रूप मिलते हैं—

अंगह (१९२. १) असमनह (८. २)
कनवज्जह (९१. ४) तडित्तह (७७. ४)
दरबारह (८३. १) निसानह (२० २. १)

भविष्यत् के तिडन्त-तद्भव रूपो मे भी °ष्य° > स्स > ह की प्रवृत्ति देखी जा सकती है।

भिदिहै (६. २)
मानिहै (९४. ६)
मंगिहइ (१२३. २)

६१, *अन्य मध्यग व्यंजनों की स्थिति :* प्राकृत-अपभ्रंश की भाँति रासो में भी **क ग च ज त द** तथा **प** अल्पप्राण स्पर्श व्यजनों के लोप और उनके स्थान पर **य व** श्रुति के उच्चारण के उदाहरण प्रचुर मात्रा मे मिलते हैं। रासो मे आए हुए इस प्रकार के शब्दों को म० भा० आ० का अवशेष कहा जा सकता है। इस विषय मे रासो की कोई अपनी विशेषता नही है।

क :			
	अरिक	अरिय	(१३. २)
	आकाश	आयास	(२९९. ५, ३११. ३)
	दिनकर	दिनयर	(४५. १, ३०५ २)
	मणिकार	मनियार	(७०. ९)
	लोक	लोय	(३४७. ४)
	सकल	सयल	(१४२. २, ९४. ४)
ग :			
	उद्गते (उद्+<गम्)		उये (१५. २)
	नगर	नयर	(३२ १, ६०. ४, ७०. १,)
			(१५० २, १६२. १)
	मृगाङ्क	मयंक	(१७६. २)
	मृगेन्द्र	मयंद	(५३. ४)
च :			
	लोचन	लोयन	(३११.६)
	वचन	वयण	(२२८.१)
ज :	कविजन	कवियन	(३२.१)
	गज	गय	(५७.१, ८१.१, २२२.४)
	गजेन्द्र	गयंद	(५३.३)
	गुणिजन	गुनियन	(८६.१)
	निज	निय	(२९.३, ४५.१, १३९.२)
	प्रजल्प्य	पयंपि	(१७९.१)
	भुजंग	भुवंग	(४२.२, २७६२)
	रजनी	रयणी	(२६७.१)
त :	कातर	कायर	(३३०.४)
	घात	घावु	(२०२.१)

पाताल	पायाल	(२२·२,२४२·१)
रतन	रयन	(३२०·१)
वात	वाय	(१६·४)
सुत	सुवन	(१०६·२)

द् :

पद्दल	पयदल	(२५४·२)
पादातिक	पायक	(१७·२)
मदमत्त	मयमत्त	(२५९·४)
रुदंत	रुवंत	(१८५·२)
हृदय	हिय	(७२·२)

प :

गोपाल	गोवल्ल	(१०१ ४)
जंगलपति	जंगलवै	(३१९·१)
भूपाल	भुवाल	(३१७ २)
राजपुत्र	रावत	(३२०·१)
रूप	रूव	(१६·२,४४.१,४८·२)

६२. *मध्यग महाप्राण स्पर्श व्यंजन :* : शब्द के अन्तर्गत स्वरो के बीच मे आनेवाली महाप्राण ध्वनियो का प्रायः महाप्राणत्व ही शेष रह जाता है। यह प्रवृत्ति भी प्राकृत अपभ्रंश काल से ही आरम्भ हो गई थी। इस प्रकार के अनेक तद्भव शब्द रासो मे भी पाए जाते हैं। नीचे मध्यग ख ग; थ ध तथा भ के उदाहरण प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

ख :

दुःख	दुह	(२०३·२,३३८·४)
सुख	सुह	(३२८·४)

घ :

सुघट	सुहर	(५७·१,२३२·५)

थ :

अथ	अह	(३४६·३)
अथवा	अहवा	(१९७·२)
यूथ	जूह	(३१५·२, ३३१·८)
नाथ	नाह	(१७३·३)
पृथिवी	पुहवि	(१४३·१)

ध :

अधिस्थित	आहुट्टिय	(२७१·२)
क्रोध	कोह	(३१८·३)
विधि	विहि	(४५·२)
विधु	विहु	(३३६·५)

भ :

तीर-भूत (भुक्ति ?)	तिरहुति	(१००·२)
दुर्लभ	दुल्लह	(४६·२)
प्र + √भू	पहुच	(७२·१)
लभ्	लह	(१६३·२)

६३. *व्यंजन संबंधी-विशेष परिवर्तन :* रासो मे व्यंजन संबंधी कुछ विशेष परिवर्तन भी लक्षित किए जाते हैं उदाहरण निम्नलिखित हैं—

क > ह :

चिकुर > चिहुर (३०७·१)

ज > ग :

कनवज > कनवग (३१२.६)

ट > र :

भट > भर (१२५.६, ३१८.५, ३२२.२, ३२२.४)

र > ल :

सरिता	सलिता	(२०३.१)

इन परिवर्तनो का कारण स्पष्ट नही है किन्तु पुरानी हिंदी के अन्य काव्यों में भी इस प्रकार के विशेष व्यंजन-परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं।

संयुक्त व्यंजन

६४. संयुक्त व्यंजनो में से निम्नलिखित के परिवर्तन विशेष रूप स उल्लेखनीय हैं।

क + ष = क्ष
व्यजन + य
व्यजन + र
र + व्यजन

क्ष की कुछ स्थितियो को छोड़कर शेष संयुक्त व्यंजनों मे प्राकृत अपभ्रंश की भाँति रासो मे भी पूर्व-सावर्ण्य तथा पर सावर्ण्य के द्वारा प्रायः व्यंजन-द्वित्व हो गया है। रासो मे जहाँ छंदोऽनुरोध से व्यजन द्वित्व नही हुआ है, वहाँ व्यंजन द्वित्व का यही कारण है। नीचे इनमे से प्रत्येक के कुछ महत्त्वपूर्ण उदाहरण उद्धृत हैं।

(१) क्ष > क्ख :

दक्षिण	दक्खिन	(१५०.२)
पक्षधर	पक्खर	(२२८.१)

क्ष > ख :

अक्षि	अंखि	(१२०.३)
अलक्ष्य	अलख	(३३२.६)
इक्षु	ऊख°	(२०७.२)
क्षण	खिणि	(४.२)

क्षीण खीन (५३.४)

क्षेत्र खेत (२६२.१, ३१३.१)

चक्षु चख (२७.३, ३२.३, ११०.४, ३०३.२)

नंक्ष्यति (√ नश्) > नंख° (१२०.२)

क्ष > च्छ :

दक्षिण दच्छिन (२०८.३)

क्ष > छ :

क्षिति छिति (२८.१)

क्षीर छीर (१७४.३)

क्षोभ छोह (५८.४)

(२) व्यंजन + य

नृत्यति नच्चए (६८.४)

नित्य नित्त (१३०.२)

वाद्यते बज्जई (१५७.३)

मध्य मज्झ (५२.४ २३४.३)

(३) व्यंजन + र

चक्र चक्क° (२६७.१)

अग्र अग्ग (२५४.२)

जाग्र° जग्गिजै (१८.१)

वज्र बज्ज (१४८.२)

गात्र गत्त (२७१.३)

छत्र छत्त (२४३.२)

पत्र पत्त (२३.१, ६८.४, ६४.१, ६७.२)

भद्र भल्लि (१०३.१)

अभ्र अब्भ (१२६.२)

सहस्र सहस्स (२६८.२)

(४) र + व्यंजन

शर्करा	सक्कर	(६०.२)
मार्ग	मग्ग	(१४.१ २१.३, २७४.२)
गुर्जर	गुज्जर	(३०२.१, ३१७.१)
कीर्ति	किंत्ति	(२७७., ३२८.२)
अर्ध	अद्ध	(३८.१, २०४.३)
दर्पण	दप्पन	(५३.१)
निर्मल	निम्मल	(५३.१)
दुर्लभ	दुल्लह	(३५.१)
पूर्व	पुब्ब	(१३.१)
सर्व	सब्व	(२७४.१, ३००.१)

६५. *व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण :* प्राकृत-अपभ्रंश से रासो की विशेषता इस बात मे है कि उसने परपरागत व्यजन द्वित्व को सरल करके उसे एक व्यजन के रूप में उपस्थित किया। भाषावैज्ञानिको ने एक स्वर से इस प्रवृत्ति को भारतीय आर्यभाषा की आधुनिक प्रवृत्ति कहा है।[1] पजाबी को छोडकर यह प्रवृत्ति प्रायः सभी आधुनिक आर्यभाषाओ मे पाई जाती है।[2] रासो मे जहॉ व्यजन द्वित्व का सरलीकरण नही हो सका है, उसे प्राकृत अवशेष कहा जाय अथवा पंजाबी का प्रभाव, यह स्पष्ट नही है। परन्तु मेरी समझ से तो प्राकृत अवशेष कहना अधिक युक्तिसंगत प्रतीत होता है।

रासो मे सरलीकरण की यह प्रक्रिया दो रीतियो से की गई है :—

(क) क्षतिपूरक दीर्घीकरण-सहित, और

(ख) क्षतिपूरक दीर्घीकरण-रहित

१ तेस्सितोरी, पुरानी राजस्थानी, पृ० ७ (सभा सस्करण), भायाणी सदेश रासक, ग्रैमर, §३६ ; चैटर्जी, उक्ति व्यक्ति प्रकरण, स्टडी, §३५

२. चैटर्जी, इडो आर्यन एड हिंदी, पृ० ११८

(क) *क्षतिपूरक दीर्घीकरण :* दो व्यजनो मे से केवल एक को सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक है कि दूसरे की क्षति उसी अक्षर मे कही अन्यत्र पूरी की जाय। यदि पूर्ववर्ती अक्षर का स्वर ह्रस्व हो तो स्वाभाविक है कि परवर्ती व्यजन द्वित्व की पूर्ति उसे दीर्घ करके की जाय। इस प्रकार व्यजन-द्वित्व से पूर्ववर्ती ह्रस्व स्वर को दीर्घ की भाँति उच्चारण करने की प्रक्रिया को ही भाषा वैज्ञानिको ने 'क्षति-पूरक दीर्घीकरण' नाम दिया है। रासो मे इस ध्वनि-प्रवृत्ति के उदाहरण निम्नलिखित हैं।

अष्ट > अट्ठ > आठ (९७·२)

उद्गतो > उग्गयो > उग्गो > ऊयो (१२६·२)

कार्य > कज्ज > काज (९·४,२९·१,१९५·२,२२९·१)

क्रियते > किज्जइ > कीजइ (६०·४)

कृत > किन्ह > कीन (२७२·४)

छुट् > छुट्टि > छूटि (१५३·२)

यस्य > जस्स > जासु (६७·१,५८·३,२६९·१)

डिम्भ > डींभ (८६·३)

दर्दुर > दद्दुर > दादुर (११५·२)

दीयते > दिज्जइ > दीजइ (१५४·४)

निद्रा > निद्द > नींद (२७०·२)

लक्ष > लक्ख > लाख (२३·२)

वल्गा > वग्ग > वाघ (३९४·३)

(ख) *क्षतिपूरक दीर्घीकरण-रहित :* व्यंजन-द्वित्व के पूर्ववर्ती ह्रस्व स्वर को जब दीर्घ नही करते और परवर्ती व्यंजन द्वित्व मे से केवल एक रह जाता है तो उसे 'क्षतिपूरक दीर्घीकरण-रहित' सरलीकरण कहा जायगा। रासो मे इस प्रकार के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

आत्म > अप्प > अपु (२८·१)

अलक्ष्य > अलक्ख > अलख (३३२·१)

उच्च > उच (२७.२)
उत्संग > उच्छंग > उछंग (१७३.२)
उत्थित > उट्ठिय > उठे (२०४.१)
उड्डित > उड्डिय > उडिय (३.५)
उत्तुंग > उत्तङ्ग > उतंग (२२५.१)
उत्पाटयति > उप्पारइ > उपारे (२६०.१)
उद्गमति > उग्गइ > उगे (१५.२)
कृष्टति > कड्ढइ > कढे (२८७.२)
कान्यकुब्ज > कन्नउज्ज > कनवज (१.२, १६८.३)
चक्षु > चक्खु > चख (२७.३, ३२.३, ११०.४, ३०३.२)
? > चड्डिउ > चढिउ (१३.४)
चालुक्य > चालुक्क > चालुक (२७७.२)
चित्त > चितु (१८४.२)
युद्ध > जुद्ध > जुध (२४७.१)
तुच्छ > तुछ (१६३.३, २४८.२)

जहाँ पूर्ववर्ती अक्षर दीर्घ स्वर से युक्त होता है, वहाँ क्षतिपूर्ति के लिए दीर्घीकरण की आवश्यकता नहीं रहती। ऐसे शब्द मे होने वाले सरलीकरण को भी 'दीर्घीकरण-रहित' के ही भीतर लिया जा सकता है। रासो मे इसके भी उदाहरण मिलते हैं, जो निम्नलिखित हैं—

चैत्र > चैत्त > चैत (१.१)
योद्धा > जोद्धा > जोध (८०.२, २५८.२)
वाद्य° > वाज्ज° > वाजने (२५७.३)

स्वर-भक्ति

६६. प्राकृत अपभ्रंश मे संयुक्त व्यंजन के क्लिष्ट उच्चारण को सरल करने के लिये सयुक्त व्यंजन के बीच मे प्रायः स्वरागम कर दिया जाता था और यह

स्वर सयुक्त-व्यजन में से पूर्ववर्ती व्यजन के साथ जुड़ कर पूर्ण अक्षर की रचना करता था। भाषाशास्त्रियों ने इस प्रक्रिया को 'स्वर-भक्ति' की सज्ञा दी है। रासो में म० भा० आ० की इस परपरा का निर्वाह पाया जाता है। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं—

अचलेश्वर	अचलेसुवर	(३१२·२)
अर्धांग	अरधंग	(२६·३)
अस्नान	असनान	(१०·१)
यत्न	जतन	(१९३·१)
तल्प	तलप्प	(१६०·३)
तीर्थ	तीरत्थ	(१९२ १)
तुर्क	तुरक	(२७५ ५)
दर्शन	दरसन	(२९·१)
दुर्दैव	दुरदेव	(१६६·१)
द्वार	दुवार	(५७·१)
धर्म०	धरम्म०	(१३०·१)
पर्वत	परवत्त	(६९·३)
प्रणाम	परनाम	(८५·४)
स्पर्श	परस	(११२·३,१६०·१,३३१·२)
प्राकृत	पराकृति	(३४५·४)
पार्थ	पारथ्थि	(२७४·५)
पूर्ण	पूरन	(७५·२)
मुक्ति	मुकति	(७८·१)
वर्ण	वरन	(१०७·२,३१२·२,३२०·५)
वर्ष	वरस	(११०·१)
स्वप्न	सपन	(१२७·१,१४४·१)
शब्द	सबद	(५·१,१०५·१)

स्वर्ग	सरग्गि	(१३२ ३)
सर्व	सरव	(१७९.२)

सानुनासिकता

६७. संयुक्त व्यंजन तथा व्यजन द्वित्व का सरलीकरण करने के लिए जिस प्रकार क्षतिपूरक दीर्घीकरण होता है, उसी प्रकार क्षतिपूरक सानुनासिकता भी होती है। यह क्षतिपूरक सानुनासिकता कभी तो दीर्घीकरण सहित होती है और कभी दीर्घीकरण-रहित। रासो मे इसके लिए सानुनासिकता के स्थान पर **अनुस्वार** का प्रयोग किया गया है। अनुनासिक स्वर का अस्तित्व रासो की लिपि-शैली के कारण स्पष्ट नही है। इसलिए छद-प्रवाह को ध्यान मे रखते हुए ऐसे सरलीकरण को ***'क्षतिपूरक अनुस्वार'*** के ही अन्तर्गत समझना सुरक्षित है। 'क्षति-पूरक अनुस्वार' के कतिपय उदाहरण निम्नलिखित है।

अश्रु	अंसु	(७६ १)
कर्ष	खंच*	(२५१.१)
जल्प्	जंप	(८५.१, ११० ६, १७७.१, १६६.६)
दर्शन	दंसन	(२५.४, ४५.१.)
बक्रिम	वंकिम	(१४८.१)
मध्य	मंझ	(७१.१)
√मृग्	मंगन	(१०५.२)
मुग्ध	मुंध	(२७१.४)
निद्रा	निंद	(१३६.२)
पक्षी	पंखी	(१५६.१)
प्र+√जल्प्	पयंपि	(१७६.१)

* खंच की व्युत्पत्ति विवादास्पद है। होर्नले ने इसका सम्बन्ध √कृष् से जोड़ा है परन्तु ष् से च् परिवर्तन की व्याख्या युक्तिसगत प्रतीत नही होती।

रेफ-विपर्यय

९८. रासो मे कुछ शब्द ऐसे मिलते हैं जिनमे किसी व्यजन से संयुक्त पूर्ववर्ती र (र + व्यंजन) विपर्यासित होकर पूर्ववर्ती व्यजन के साथ परवर्ती अश की तरह सयुक्त हो जाता है; जैसे

गंधर्व > गंध्रव (२३ १, २७·१)
पर्यंक > प्रजंक (३४४ २)

लघुतम रूपान्तर मे इस प्रकार के शब्द बहुत कम हैं। इसके विपरीत वृहत् रूपान्तर में ऐसे शब्दो की बहुलता है। रेफ विपर्यय की यह प्रवृत्ति आज भी पजाबी बोलचाल मे पाई जाती है। *परमात्मा* का उच्चारण पजाबी लोग *प्रमात्मा* करते हैं। इस विषय मे आधुनिक राजस्थानी की क्या स्थिति है, मुझे नही मालूम। संभवतः राजस्थानी मे यह प्रवृत्ति नही है। इसलिए रासो मे रेफ-विपर्यय की इस प्रवृत्ति को किसी अन्य सतोषप्रद व्याख्या के अभाव मे पजाबी प्रभाव का परिणाम कहा जा सकता है। सभव है, कुछ लोग इसे छदोऽनुरोध का परिणाम कहें, लेकिन जैसा कि बीम्स ने कहा है, रासो की प्रत्येक ध्वन्यात्मक विशेषता को हम छंदोऽनुरोध की ओट मे नहीं छिपा सकते। छदोऽनुरोध लगडी दलील है और इस युक्ति की शरण, चारो ओर से निराश होकर, अत मे ही लेने की सलाह दी जा सकती है।

फ़ारसी शब्दों में ध्वनि-परिवर्तन

९९. लघुतम कनवज समय मे फारसी शब्दो की सख्या तीस के आसपास है, जिनमे से निम्नलिखित शब्द तद्भव रूपमे ही प्रयुक्त हैं—

आब (२७६ ६, २७९·२)
दरबार (७९·४, ८५·२, १४२·२)
सवार (१७४·३)
साल (१०·३, २२ ३, ३४४·३)

साहब (१०२३)

स्याह (१३३'४, १७५'४)

शेष निम्नलिखित ध्वनि-परिवर्तन के साथ प्रयुक्त हैं

(१) आदि अक्षर के स्वर में स्वराघात के कारण मात्रा-सबधी परिवर्तन—

आसमान[२]	>	असमनह	(२०२२)
सेहरा	>	सेहरउ	(२२०६)

(२) श—स :

शमशेर	>	समसेर	(२०६३)
शहनाई	>	सहनाइ	(२२५१)
शाह	>	साह	(१७ १, ३२५'३)
शोर	>	सोर	(१८६२)

(३) व्यंजन-द्वित्व :

तुर्क	>	तुरक्की	(१२७३)
फौज़	>	फवज्जि	(२०८१)

(४) सम्प्रसारण तथा स्वरभक्ति :

तख़्त	>	तखत	(१८६'४)
तुर्क	>	तुरक	(२७५'५)

(५) फारसी की सघर्षी ध्वनि ख़ ग़ ज़ और फ़ उस समय हिन्दी में नही थी, इसलिए रासो में स्वभावतः उनका ग्रहण स्पर्श व्ययजन के रूप में किया गया। फलतः,

तख़्त	>	तखत
तेग़	>	तेग
ज़िरह	>	जिरह
हज़ार	>	हज्जार
फौज़	>	फवज्ज

(६) शब्द के द्वितीय अक्षर मे स्वर का गुणात्मक परिवर्तन—

नफ़ीरी	>	नफेरी	(२२६·१)
साबित	>	साबुत	(२७६·५)

वृहत् रूपान्तर मे अरबी-फारसी शब्दो की संख्या बहुत अधिक हैं; परन्तु चूँकि मैने उसे अपने अध्ययन का आधार नहीं बनाया है, इसलिए उन शब्दो पर यहाँ विचार करना अप्रासंगिक होगा। उन शब्दों पर स्वतन्त्र रूप से अन्यत्र विचार करना ही अधिक उचित होगा।

द्वितीय अध्याय

रूप-विचार

१. रचनात्मक उपसर्ग और प्रत्यय

७०. उपसर्ग : रासो को शब्द-रचना मे तत्सम और तद्भव दोनो प्रकार के उपसर्ग दृष्टिगोचर होते हैं। सम्प्रति तद्भव उपसर्गों पर ही विचार करना उपादेय है।

(१) अ- > आ- (अधिक, पूरा, चारों ओर और तक); द्वितीय अक्षर पर स्वराघात के कारण आदि अक्षर के दीर्घ आ का ह्रस्वीकरण हो गया है।

अनदने	(२४२ २)	आनन्द°
अरंभ	(२०१'२)	आरम्भ
अरोह	(५१'२)	आरोह
अबद्ध	(४०'२)	आबद्ध

(२) उ-> उत्-(ऊपर)

तत्सम शब्दो मे सन्धि-प्रक्रिया से उत् का त् परवर्ती स्वर अथवा व्यजन के साथ जुड़कर सुरक्षित रहता है किन्तु रासो के तद्भव शब्दो मे इस उपसर्ग के अन्त्य त् का लोप हो गया है।

उखारे	(२६०'२)	उत् + √ खा
उझकि	(१०३'३)	उत् + √ झक्
उटंकि	(६४'४)	उत् + √ टकि
उठत	(३२०'२)	उत् + √ स्था
उडि	(३'५)	उत् + √ डा
उतंग	(२३'३)	उत् + तुंग
उपारे	(२६०१)	उत् + पाटयति
उलट्टि	(१३६'१)	उत् + लुठ्

(३) ऊ-> अव-(नीचे, हीन, अभाव)

ऊघट्ट (१५७'१) अव + √ घट्

(४) ओ-< अव-

ओघरियं (३११'२)

(५) दु-< दुस्-(कठिन)

दुसह (१४६.२) दुस्सह

(६) निद-< निर्-, निस्- (बाहर, निषेध)

निकस्सि (२८६'२) निष्कासित

निबरंत (३३३'२) निर् + √ वृ

निसंक (१८६'१) निस् + शङ्क

(७) प- < प्र- (अधिक, आगे, ऊपर)

पठावहि (१६८.३) प्रस्थापयसि

पयंपि (१७६'१) प्रजल्प्य

पयाणहि (२८७.२) *प्रयाणस्मिन्

पसर (१२८.२) प्रसार

पहार (३३५.२) प्रहार

पहुच (७१ १) *प्रभूतक[1]

(८) स- < सम्- (साथ, पूर्ण)

सजुत्त (१०६'१) संयुक्त

सपत्तिय (३२१'१) सम्प्राप्तिक

(६) सा- < सम्-

सामुही (२५२'२) < सम्मुख

७१. रचनात्मक प्रत्यय—कृदन्त और तद्धित ।

-अ <-क : (स्वार्थिक)

---

१ भुव· पर्याप्तौ हुच । (हेमचन्द्र, प्राकृत व्याकरण, ८-४-३९०)

रूपान्तर—उ और य- ।

अग्गलउ	(१०७·२)	सेहरउ	(३२०·२)
गुज्जरउ	(३०३ १)	कियउ	(१४५·३)
पक्खरउ	(१४६·४)	अच्छरिउ	(३११·३)
अंजुलीय	(१७१·१)	कित्तिय	(२२६·१)
अरिय	(१३·२)	ढिल्लिय	(३१५·५)
अलिय	(१२८ १)	छत्रपतिय	(३१३·५)
अनुरत्तिय	(१६३४)	त्रीय	(७·१)

—अ <-क्त : भूत कृदन्त । कुछ लोग इसे भ्रम से शून्य प्रत्यय समझते हैं ।

हंक (३१० १)

गह (३१३·१)

—अंत (तत्सम) :—वर्तमान कृदन्त, विशेषण; रासो मे वर्तमान काल की समापिका क्रिया के रूप मे प्रयुक्त ।

अप्पंत	(१६·१)	झलकन्त	(१२·४)
कसन्त	(७५·३)	गसन्त	(२७१ १)
जरन्त	(७, ३)		

—अत <-अंत :

देखत	(८६·३)	दिखत	(८४·१)
कहत	(१४६)	परत	(३३५·१)

—अता <-अत :

कहता (२१५ १)

लहता (२१५·२)

—अ <-अक : स्वार्थिक से उत्पन्न और संज्ञा तथा विशेषण शब्दो की रचना करने वाला ।

भला	(१४६ ६)	पत्ता	(११८ १)
अड्ढा	(२५१ १)	तुरिया	(१६२४)

पगुरा (२७४४) वानरा (२१७२)

– आ < – क्त + क : भूत कृदन्त। लिंग-वचन से अनुशासित।

यह खड़ी बोली तथा पुरानी व्रजभाषा की मुख्य विशेषता है।

हुआ (१८३१)

किया (१८५२)

चल्या (१५३२)

– ई < – इका[1] : तद्धित। मुख्य स्त्री-प्रत्यय।

अखुली (२४११)

अगुली (३३१)

अधियारी (२७०१)

अच्छरी (१०३२)

घरी (२०६४)

– ई < – ईय : तद्धित। विशेषण।

तुरक्की (१५७३)

दच्छिनी (१००४)

पच्छिमी (१५८१)

जंगुली (२७७५)

– क्क[2] < ? : कृदन्त। त्वरा-सूचक।

झमक्कहि (३४३२)

पहुक्कहि (३४३२)

– त्तिन > — त्व : तद्धित। भाववाचक सज्ञा बनाने वाला प्रत्यय। इसका प्रचलन अपभ्रंश-काल से ही हो गया था[3]। आधुनिक हिंदी मे

---

१ चैटर्जी, बगाली लेंग्वेज, § ४१६

२ भायाणी, संदेश रासक, ग्रैमर § ४६

३ त्व-तलोः प्पण॰ ॥ अपभ्रंशे त्व तलो प्रत्ययो॰ प्पण इत्यादेशो भवति। वड्डप्पणु परि पाविअइ [३६६ १] ॥ प्रायोधिकारात् ' वड्डत्तणहो तणेण [३६६ १] ॥ (हेम० प्राकृत व्याकरण, ४४३७)

इसके स्थान पर—*प्पन* का प्रचलन है जो अपभ्रंश काल मे विकल्प से व्यवहृत होता था। रासो के वृहत् रूपान्तर मे भी -*प्पन* पाठ ही मिलता है। परंतु—*त्तनु* के प्रचलन की पुष्टि *रामचरित मानस* की कुछ प्राचीन प्रतियों से होती है। ना० प्र० सभा से प्रकाशित और शभूनारायण चौबे द्वारा सम्पादित मानस मे '*केहि न सुसंग बडत्तनु पावा*' (१-१०-८) पाठ सुरक्षित रखा गया है। वस्तुतः -*त्म* और -*त्व* के -*त्त* और -*प्प* दोनो ही विकार म० भा० आ० काल मे हुए जैसे *आत्म-* > *अत्त, अप्प-*। इनमे से संभवतः -*त्त* वाला रूप प्राचीनतर है।

अमलत्तिनु (२६ ३)
कवित्तनौ (२७६ ६)
धीरत्तनु (१८२·१)
बडित्तनौ (२७९ ५)

-*न* < -*अनीय* : क्रियार्थक कृदन्त। इसका संबध अपभ्रंश -*अण* (हेम० ४४४१) से है।

कहन	(३७·४)	कहना
गहन	(२१२·१)	ग्रहण
दिक्खन	(९१ ४)	देखना
मग्गन	(११२ २)	मांगना
चाहन	(१३६ १)	चाहना (देखना)
मरन	(३३४ २)	मरना
जान	(२६१·४)	जाना

-*नो* (*णो*) < -*अनीय* : क्रियार्थक कृदन्त। -*न* का ओकारान्त रूप + -*नो* पुरानी व्रजभाषा की अपनी विशेषता है[१]। आधुनिक कन्नौजी और जयपुरी में यह अब भी बोला जाता है। आधुनिक व्रजभाषा मे **नौ** होता है। बोल-चाल की व्रजभाखा मे मिर्जा खॉ ने -*ना* रूप भी सुना था।

---

१ मिर्ज़ा खाँ, ग्रैमर ऑव व्रजभाखा, पृ० ४६

कहणो (२८०'१)
गहणो (,,)
रहणो (२८०'२)
वहणो (,,)

– नी < –इन् : तद्धित, स्त्रीलिंग द्योतक।

चंदणी (२७०'१) चांदनी
त्रित्तनी (२२६'२) नर्तकी

– र < –(अप०) ड, ड़ : तद्धित, स्वार्थक।

पगुर (१८४'१) पगु राज (जयचंद)
मज्झर (३३७'२) मज्झ, मध्य
हत्थरे (२२१'१) हाथ में

– री < –र : तद्धित, गुण वाचक, 'वाला' अर्थ द्योतक।

मुंछरिया (२०७'४) मूँछवाला

– *हार* < –*कार ?* : तद्धित, 'वाला' अर्थ-द्योतक। इसकी व्युत्पत्ति अभी तक अनिश्चित है। होर्नले ने इसका संबंध सं० – *अनीय* से जोड़ा है[1] जो संतोषप्रद नहीं समझा जाता। संभव है, *–कार* < *–आर* में –ह–श्रुति के आगम से इसकी रचना हुई हो।

निसाहार (२२३'१) निशावाला; पूरा वाक्य इस प्रकार है :—

'निसानं निसाहार वज्जे' अर्थात् रातवाले निसान बजे।

२. संज्ञा

७२ *लिंग* :

व्याकरण की दृष्टि से रासो में प्रयुक्त संज्ञा शब्दों में लिंग निर्णय के लिए एक ही उपाय है कि स्त्रीलिंग संज्ञाएँ—इकारान्त तथा—ईकारान्त होती हैं, जैसे—

---

१. गौडियन ग्रैमर; § ३२१

अच्छरी (१७३ २) चंदणी (२७० १), *अंगुरी* (३३ १), *भिल्ली* (२६० २), *घरी* (२०६ ४), तथा

सुंदरि (१७० १), *पुत्ति* (१६६ १), *संजोगि* (३३८ ३) इत्यादि।

इसके अतिरिक्त स्त्रीलिंग संज्ञाएँ कृदत विशेषण के अन्वय से भी स्पष्ट हो जाती है। स्त्रीलिग सज्ञाओं के साथ अन्वित होनेवाले कृदत भी प्रायः–इकारान्त तथा–ईकारान्त होते हैं, जैसे—

भई विपरीत गति (३४६ ४)
सुनि सुंदरि वर वज्जने
चढ़ी अवासन उट्ठि। (१६५ १)
दिक्खति सुंदरि दर बलनि। (१६५ १)
जब दस कोस दिली रहिय। (३३५ २)
भिरत भंति भइ विक्खहर। (३१५ ६)
भई रारि। (३२३ १)

कृदत विशेषण के अतिरिक्त स्त्रीलिग सज्ञाएँ सबध परसर्ग—*की* के अन्वय से भी पहचान मे आ जाती है जैसे—

इहि मरन कीरती पंग की। (२७७ ५)

कभी कभी ये संज्ञाएँ निकटवर्ती अथवा दूरवर्ती निश्चयवाचक के स्त्रीलिंगवत् रूप से भी विविक्त होती हैं, जैसे—

पंगुराइ सा पुत्ति (१६६ १)
ति अच्छरी (१७३ ३)

जहाँ अचेतन पदार्थों मे –इकारान्त और – ईकारान्त रूप दृष्टिगोचर होते हैं, वहाँ ये प्रत्यय लिंग–बोध कराने के साथ कभी-कभी आकार की लघुता भी प्रकट करते हैं, जैसे *थारि* (१७१ २) अर्थात् थाली। आकार मे जो थाली से बड़ा पात्र होता है, उसे थाल कहते हैं।

स्त्रीलिग संज्ञाओं मे इकारान्त तथा ईकारान्त प्रत्यय का प्रभाव इतना बढ़ा कि संस्कृत के अनेक आकारान्त स्त्रीलिग शब्द भी आ० भा० आ० मे ईकारान्त हो गए। रासो में इस प्रकार के अनेक शब्दो मे से एक है—

सुलच्छिनिय (११६ ३) < सुलक्षणा

वचन

७३. एकवचन से बहुवचन बनाने के लिए रासो मे मुख्यत: -न प्रत्यय जोड़ा गया है, जो व्रजभाषा की अपनी विशेषता है। मिर्जा खॉ ने १७ वीं सदी में ही इसे लक्षित किया था। उनके अनुसार *कर* और *पग* के बहुवचन रूप *करन* और *पगन* होते हैं।[१] आरभिक १४ वीं सदी की मैथिली रचना 'वर्ण रत्नाकर' में जहाँ *-न्ह* वाले बहुवचन की प्रधानता है, एक उदाहरण *-न* प्रत्ययान्त का भी मिला है।

मयूरन चरइतं अछ (२१ अ)

'वर्ण रत्नाकर' की ही तरह अन्य पूर्वी रचनाओं मे *-न्ह* वाले बहुवचन की प्रधानता है। यहाँ तक कि पूर्वी प्रदेशो के कवियो की व्रजभाषा में भी यदा-कदा *-न्ह* का प्रयोग दिखाई पड जाता है। तुलसीदास की व्रजभाषा मे लिखी 'गीतावली' में भी *वीथिन्ह* (१ १) जैसे प्रयोग मिल ही जाते हैं।[२]

इनके विपरीत रासो मे *-न्ह* का प्रयोग खोजे नही मिलता; अधिकांशतः बहुवचन *-न* प्रत्ययान्त हैं, जैसे—

नृप नयनन ति सँजोगि। (३४ १२)
पुरिखन (१२० ३), राइन (१२५ १)
अवाम्नन (१६४ २)

-न के अन्य विकृत रूप *-नु* और *-नि* भी मिलते हैं और बिना भेद भाव के इन सबका प्रयोग सभी कारको मे होता है; परन्तु *-नु* मुख्यतः कर्म-

१ व्रजभाखा ग्रैमर, पृ० ४१

२ डा धीरेन्द्र वर्मा, व्रजभाषा, § १५०

सम्प्रदान-सम्बन्ध बहुबचन मे प्रयुक्त होता है और *-नि* करण तथा अधिकरण में जैसे :—

मुक्के मीननु मुत्ति (१६३·२)
राजनु समझावहि (१६२२)
सुगंधनि (११३·२) गयंदनि (२२२·४)
दर बलनि (१६५·१)

७४. *-न* से पूर्ववर्ती स्वर कभी-कभी अकारण ही दीर्घ कर दिया जाता है। रासो की इस विशेषता को बीम्स ने काफी पहले लक्षित किया था।[1] बीम्स के बाद होर्नले का भी ध्यान इस विशिष्ट रूप की ओर गया था।[2] रासो से उन्होने *महिलान द्रव्यान* शब्द उद्‌धृत किए हैं। सयोग से रासो के हमारे पाठ मे भी *महिलानु* शब्द प्राप्त हुआ है; उसके अतिरिक्त *कमलानु*, *दिवान (देवान)* और *हिदुवाण* शब्द भी मिले हैं। इनका पूरा प्रयोग इस प्रकार है।

१. दिव मंडन तारक सयल, सर मंडन कमलानु।
जस मंडन नर-भर सयल, महि मंडन महिलानु॥ (३३६)
२. दिव दिवान गो देवरउ। (३२०.५)
३. तै रक्खे हिदुवाण। (२७७·२)

इनमे से केवल *कमल* शब्द ही अकारान्त हैं और *-न* जुड़ने पर उसका अन्त्य स्वर दीर्घ *-आ* हो गया।

शेष शब्द आकारान्त तथा उकारान्त हैं। इसलिए *महिला* का *महिलानु* तथा *हिदु* का *हिदुवाण* होना कोई आश्चर्यजनक नही है। किन्तु *कमल* का *कमलानु* होना अवश्य विचारणीय है।

इस प्रकार के प्रयोग व्रजभाषा के अन्य कवियो मे भी मिलते हैं।[3]

---

१. कम्पेरेटिव ग्रैमर जिल्द २, २१६, २०७, २८२
२. गौडियन ग्रैमर. पृ० १६५.
३. डा० धीरेन्द्र वर्मा, व्रजभाषा § १५०

तुरकान (भूषण० २४)
सखियान (नरोत्तम १००)
दुखियान (भारतेन्दु)

सामान्य स्थिति में *तुरकन*, *सखियन*, *दुखियन* होना चाहिये। इसे केवल छंद का अनुरोध कहकर नहीं टाला जा सकता। मिर्जा खाँ ने भी *कुलिटान* रूप का उल्लेख किया है जो संभवतः *कुलटा* का बहुवचन है।[1]

७५.–न बहुल रूपों के अतिरिक्त रासो में–ह प्रत्ययान्त बहुवचन रूप भी मिलते हैं।

देखि अरि दंतह कट्टइ (३०९ ४)
(देखकर शत्रु दाँत काटते हैं)
कँपे काइरह (२९५·३)

अपभ्रंश में ये रूप विशेषतः संबंध–सम्प्रदान, एकवचन में प्रयुक्त होते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि यह प्रत्यय या तो *–हिं* का ही दुर्बल रूप है या फिर *–हँ* का निरनुनासिक रूप। क्योंकि *–ह* वाले बहुवचन रूप अन्यत्र देखने में नहीं आये। 'वर्ण रत्नाकर' में भी *–आह* वाले ही रूप मिलते हैं।[2]

पुरानी रचनाओं में अभी तक संदेशरासक ही ऐसा है जिसमें-*अह* अथवा *ह* वाले कर्ता बहुवचन के रूप खोजे जा सके हैं[3] जैसे—

अबुहत्तणि अबुहह णहु पवेसि (२१ ख)

परंतु मेरे विचार से *अबुहह* यहाँ प्रथमा बहुवचन नहीं, बल्कि षष्ठी बहुवचन है। वाक्य का सीधा अर्थ है कि अबुधत्व के कारण अबुधों *का* प्रवेश नहीं है। लेकिन भायाणी ने उसे घुमाकर इस प्रकार रखा है—

---

१. ब्रजभाखा ग्रैमर, पृ० ४१
२. इंट्रोडक्शन § २६
३. संदेश रासक, ग्रैमर, §५१ (३)

'अबुधत्वेन, अबुधाः (मत्काव्ये) न खलु प्रवेशिन.

वस्तुतः *अबुहह पवेसि* (*पवेसु*) रूप-रचना की दृष्टि से षष्ठी विभक्ति द्वारा संबद्ध है परतु कारक की दृष्टि से कर्ता का अर्थ देता है। इसे षष्ठी की व्यापकता का प्रमाण समझना चाहिए।

७६ प्रत्ययो के अतिरिक्त सज्ञाओ का बहुत्व द्योतित करने के लिये रासो में *जन* या *गण* जैसे बहुलता-द्योतक शब्दो का भी विशेषणवत् प्रयोग किया गया है, जैसे

अरिजननु (३३०५)
तरायन (२०६४)
हयगन (१८०१)

समूह वाचक शब्दों से बहुवचन बनाने की प्रवृत्ति 'वर्ण रत्नाकर' में भी मिलती है, जैसे, *नायिका-जन* (२१ ख)। यही वजह है कि कुछ विद्वानों ने बहुवचन प्रत्यय -न की व्युत्पत्ति इसी *जन* से मानी है।

कारक

७७ रासो के सज्ञा शब्दो मे कारक रचना के तीन आधार दिखाई पड़ते है—

(१) निर्विभक्तिक शब्द मात्र का प्रयोग सभी कारकों मे ;
(२) अपभ्रंश की विभक्तियो का ध्वन्यात्मक ह्रास के साथ अथवा यथावत निर्वाह। जैसे—उ; इ, ए, एँ ऐँ, ह हि, हे; न, नि, और नु।
(३) अपभ्रंश के परसर्गों का निर्वाह तथा नये परसर्गों की रचना। जैसे,

सहु, सूं, सो
तण, तन, लगि
ते, तैं, हुति
का, की, के, कहुं, कइ, को, कूं
मज्झ, मंझ, मह, महि, मधि, इत्यादि।

अनुपात की दृष्टि से निर्विभक्तिक पदों की सख्या सबसे अधिक है[1] और परसर्गों की सख्या सबसे कम। परन्तु जैसा कि पहले कहा जा चुका है (§ ३१ छ), प्राकृत पैंगलम् तथा अन्य अवहट्ट रचनाओं की अपेक्षा रासो में परसर्गों तथा उनके प्रयोग का अनुपात कहीं अधिक है। अवहट्ट की कारक-रचना से रासो की एक विशेषता और है कि विभक्ति और कारक में अव्यवस्था अधिक है जिसके कारण बहुत सी विभक्तियाँ निर्विशेष रूप से सभी कारकों में प्रयुक्त होती हैं। विकारी विभक्ति का रूप[2] (ऑब्लीक केस) का प्रादुर्भाव इसी अव्यवस्था का परिणाम है। फलस्वरूप एक वचन में—हिं[3] और बहुवचन में न विभक्ति विकारी रूप में प्रायः सभी कारकों में प्रयुक्त दिखाई पड़ती है। परन्तु इन दोनों के सयोग से आधुनिक ढग के एक विकारी रूप—ओं का निर्माण इस समय तक नहीं हुआ था। रासो में विकारी रूप —ओं कहीं नहीं मिलता।

७८. *कर्त्ता कारक* : (क) सामान्यतः इस कारक के लिए रासो में निर्विभक्तिक शब्द मात्र का प्रयोग होता है; जैसे—

जप्यो प्रिथिराज (३३६.२)
चहुवान गउ (३०२.६)
सिर तुट्टै (१८९.१)
भुल्यो पुहवि-नरिंद (१६३.१)
विट्यो चहुवान (२६८.१)

(क) अकारान्त प्रातिपदिकों के अतिरिक्त इकारान्त और उकारान्त प्रातिपादिक भी अपने मूल रूप में ही कर्त्ता कारक का अर्थ देते हैं; जैसे—

---

१. हॉर्नले का भी यही निष्कर्ष है कि चद कबीर, बिहारी लाल वगैरह की पुरानी हिंदी में विभक्ति-प्रत्यय बिल्कुल नहीं या बहुत कम इस्तेमाल किया गया है। (गौडियन ग्रैमर, पृ० २१६)

२. डा० चैटर्जी ने इसके लिए तिर्यक् शब्द का प्रयोग किया है (दे० भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी, हिन्दी अनुवाद, १९५४ ई०)

३ उक्ति व्यक्ति-प्रकरण, स्टडी, ५६ [७]

अरब्बी लरै (१०६'१)

इम जंपइ चंद वरद्दिया (३०२'६)

(ग) अपभ्रंश[1] की भाँति रासो मे भी कर्त्ता कारक में संज्ञा के रूप प्रायः उकारान्त दिखाई पड़ते हैं।

कहै चंदु (३३६'६)

पर्‍यो माल चंदेलु (३१७'१)

चपिअ वद्दल वाउ (२०२'२)

रह्यो स्वामि सिर सेहरउ (३२०'६)

उकारान्त कर्त्ता कारक की व्यापकता अपभ्रंश के बाद पुरानी पश्चिमी राजस्थानी[2], पुरानी ब्रजभाषा तथा मध्यप्रदेश की कुछ पूरबी बोलियो में भी दिखाई पड़ती है जिसे चैटर्जी ने पुरानी ब्रजभाषा का प्रभाव माना है।[3]

कभी-कभी यह –उ विभक्ति स्वार्थिक प्रत्यय –अ < –क द्वारा प्रवर्धित प्रातिपदिक मे जुड़कर स्वतंत्र स्वर के रूप मे भी आता है, जैसे–

बड हथ्थहि बड गुज्जरउ जुज्झि गयउ बैकुंठ (३०३'१)

(घ) कर्त्ता कारक, बहुवचन के रूप एकवचन की ही तरह निर्विभक्तिक और उकारान्त होते हैं, परन्तु बहुवचन के उकारान्त रूप हमारे पाठ मे बहुत कम मिलते है।

भिरहिं सूर सुनि सुनि निसान। (१०'२)

गजराज विराजहि। (२८३'१)

विहरे जनु पावस अंभ उठे। (२०४'२)

इत्तने सोर वाजिन्न बज्ज। (२२२'२)

(ङ) बहुवचन के लिए कहीं-कहीं रासो मे आधुनिक खड़ी बोली के–एकारान्त विकारी रूप भी प्रयुक्त हुए है; जैसे–

---

१ स्यमोरस्योत्। (हेम० ४ ३३१)

२. तेस्सितोरी, पुरानी राजस्थानी; ५७ (१)

३ उक्ति व्यक्ति०, स्टडी, ५६ [२]

वाजने वीर रा पंग बाजे। (२५७·४)

(वीर पंग राज के बाजने अर्थात् बाजे बजे)

अनंदने निसाचरे। (२४२·२)

(निशाचर आनन्दित हुए)

७६, *कर्म कारक* : (क) कर्त्ता की तरह कर्म कारक में भी सामान्यतः शब्द का मूल रूप अथवा –उ विभक्ति व्यवहार में लाई जाती है। कर्म की –उ विभक्ति को कर्त्ता के रूप का ही विस्तार समझना चाहिए।

बज्जपति बज्ज गहि। (१४८·२)
अमिय कलस लियो। (२११·२)
इह अप्पउं ढिल्लिय तखत। (१६८·१)
अंगना अंग चंदनु लावहि। (१६२·२)
दिव दिवान गो देवरउ। (३२०·५ ,
(देव-देवता देवल को गए)

(ख) बहुवचन में कर्म काररक के लिए—हि विभक्ति का प्रयोग किया गया है। लिपि-शैली की अनियमितता के कारण यह कहना कठिन है कि यह –हि सानुनासिक था या निरनुनासिक। हमारी प्रति में यह निरनुनासिक ही है।

कीर चुनहि मुकताफलहि। (९८·४)

कर्म कारक बहुवचन मे कहीं कहीं –इ विभक्ति भी मिलती है, जो सभवतः –हि का ही प्राणत्व-रहित रूप है।

त्रिप जोइ फवज्जइ वंट लियं (२११·२)

(ग) कर्म-कारक, बहुवचन की सर्वाधिक प्रचलित विभक्ति –न है जिस पर वचन-वाले प्रकरण मे विचार किया जा चुका है। मूलतः यह विभक्ति संस्कृत के षष्ठी बहुवचन—आनाम् का घृष्ट रूप है।

- मुक्के मीननु मुत्ति (१६३'२)

सत्थिथनु (१५२'१)

अन्य रूप :

पुरिखन (१२०'३), राइन (१२५'१)

दरबलनि (१६५'१) सुगंधनि (११३'२)

८०. *करण कारक*—(क) निर्विभक्तिक रूप :

अप्पिग हत्थ तंबोल (१४७'१)

(क) करण, एक वचन की अपनी विभक्ति –इ तथा –ए है जिसे अपभ्रंश तृतीया का अवशेष समझना चाहिए।

कनवज दिख्खन कारणइ (१'२)

मनो राम रावन्न हत्थे विलग्गी। (१२७'४)

(ग) बहुवचन मे अन्य कारको की तरह करण मे भी –न, –नि तथा –नु का प्रयोग होता है और कभी-कभी—ऐं का भी।

नृप नयन ति सँजोग। (३४१'२)

सुगंधनि (११३'२)

असु लाजनु राजनु समझावहि। (१९६'२)

सञ्धि आवञ्झ हत्थै करेरी। (२२८'४)

८१. *अपादान कारक*—(क) निर्विभक्तिक :

टुट्टियं जानु आकास तारा। (   )

(मानो आकाश से तारा टूटा)

धर सिर छंडि फनिंद। (१८४ अ)

(फणीन्द्र ने धरा को सिर से छोड़ दिया।)

(ख) सविभक्तिक : सभी कारको के लिए प्रयुक्त होने वाली *हि* विभक्ति अपादान में भी व्यवहृत होती है।

हेमहि कढ्ढहि तार। (७६·२)
हेम से तार काढ़ता हैं।

८२. *संबंध कारक*— (क) निर्विभक्तिक : संबंध कारक के निर्विभक्तिक रूपों को विविक्त करने के विषय में सबसे बडी कठिनाई यह है कि ऐसे स्थलो पर प्रायः तत्पुरुष समास की सभावना दिखाई पडती है।

दिल्लिय तखत (१९८·३)
हय पुट्ठिय (१९६·३)
रवि रत्थ (२१४·२)
गवरि कंत (२१३·३)

(ख) सविभक्तिक : अपभ्रंश की ह विभक्ति का प्रयोग[1] रासो मे तत्कालीन अन्य रचनाओं से कही अधिक मिलता है। कभी कभी इसका रूप एकारान्त भी हो जाता है।

तडित्तह ओप (७७·४)
बिंबह फल (७८·४)
कनवजहे (३·१)

(ग) सबध बहुवचन की अपनी विभक्ति *-न* या *-नि* है जो विकारी रूप में अन्य कारको के लिए भी प्रयुक्त होती है।

मद गंध गयंदनि सुक्कि गयो (२८८·४)
पंखिण सद्द भयं (२८८·३)

८३. *अधिकरण कारक*—(क) निर्विभक्तिक :

परत देखि चालुक्क धर (३२१·१)
दिखिय त्रिपति तन चोट (३२१·२)
सपत्तिय त्रिपति रन (३२१·२)
जिनके मुख मुच्छ (२०७·४)

---

१. होनेले, गौडियन ग्रैमर, पृ० ६६६

(ख) सविभक्तिक : एक वचन मे अपभ्रंश की इ, ए विभक्तियों का निर्वाह किया गया है ।

कहि कंकन (७६'३), एकइ समइ (११३'२), दिसि (१२४'२)
सिरि मंडि (१३१'१), सरग्गि (१३२'३), प्राति १४२'१)
गवक्खइ अख्खी (१९१'१) तथा आसने सूर वड्ढे (९८'१)
कंधे धरंता (२१६'२)

-ए कही कही -ऐ भी हो गया है—

सीसै धरो जास गंगा (२२५'४)

(ग) अपभ्रंश तृतीया-सप्तमी, बहुवचन की विभक्ति *-हिं*[1] का प्रयोग रासो में भी प्राप्त होता है किन्तु यहाँ उसके निरनुनासिक रूप *-हि* का प्रयोग बहुवचन के साथ ही एकवचन मे भी हुआ है ।

सरद्दहि (७६'४)
कवियहि संपत्ते (८७'१)
चहुं दिसहि (११०'५)
सिघासनहि (१२६')

(घ) संबध कारक की -ह विभक्ति का प्रयोग अधिकरण मे भी हुआ है ।

अंगह चंदन लावहि (१९२'१)
भयउ निसानह घाउ (२०२'१)
ज्यों भद्दव रवि असमनह (२०२'२ ए)

८४. *भावे षष्ठी :* सबंध और अधिकरण की -ह विभक्ति का प्रयोग रासो मे *भावे* भी हुआ है, जैसे

खग्गह सीसु हनंत खग्ग खप्पुरिव खरक्खर (३०४५)
(शीर्ष पर खड्ग के हनते ही खड्ग खर खर करता हुआ धस गया ।)

---

१. भिस्सुपोर्हि । (हेम० ४ ३४७)

धरनह कन्हह परत ही प्रगट पंगु त्रिपु हंक्क (३०१'१)

(धरणी पर कन्ह के पड़ते ही नृप ने पगु को प्रकट रूप से ललकारा)

यहाँ *खग्गह* और *कन्हह* की *-ह* विभक्ति भावे षष्ठी (Genetive absolute) की तरह प्रयुक्त हुई है।

परसर्ग

८५. प्राचीन विभक्तियों और विकारी रूपों का प्रयोग जहाँ रासो की भाषा की प्राचीनता सूचित करता है, वहाँ परसर्गों के बहुल प्रयोग उसकी भाषा की आधुनिकता प्रमाणित करते हैं। पुरानी व्रज के कर्तृ-करण परसर्ग नै *(ने)* को छोड़कर रासो में प्रायः सभी परसर्ग मिलते हैं। ने का प्रयोग रासो के बृहत् रूपान्तर में भी खोजे नहीं मिला। रासो के प्रथम वैयाकरण और सम्पादक बीम्स को भी बड़ी मुश्किल से तीसरे समय में **ने** के प्रयोग वाली निम्नलिखित पक्तियाँ मिलीं—

बालप्पन पृथ्वीराज नें
निसि सुपनंतर चिह्न।
लै जुग्गिनिपुरह
तिलक मथ्थ करि दीन्ह ॥
(३।३।१–४)

परतु उन्हें लगा कि यहाँ **ने** का प्रयोग कर्तृ-करण की अपेक्षा सम्प्रदान में हुआ है।[1] सम्प्रदान अर्थ में **नें** का प्रयोग पश्चिमी राजस्थानी की विशेषता है और इस एक प्रयोग के आधार पर संपूर्ण रासो की भाषा में कोई निर्णय देना जल्दबाजी होगी। परंतु इतना निश्चित हैं कि रासो में **ने** का अभाव है और यह अभाव भी एक महत्वपूर्ण तथ्य है। इससे यह प्रमाणित होता है कि रासो की भाषा उस समय की है जब व्रजभाषा में **ने, नें** अथवा **नै** का विकास नहीं हुआ था और इस बात के पर्याप्त प्रमाण हैं कि **ने** का विकास पश्चिमी बोलियों में बहुत बाद में हुआ। यह ध्यान देने योग्य है कि १४ वीं सदी के 'प्राकृत पैंगलम्' में भी **ने** अप्रयुक्त है।

---

१ स्टडीज़ इन दि ग्रैमर ऑव चद वरदाई, जे० ए० एस० बी०, १८७३ ई०।

बीम्स[1] और होर्नले[2] ने पश्चिमी हिंदी के ने परसर्ग को मारवाड़ी के जिस सम्प्रदान-नैं या ने से सबद्ध किया है, वह स्वय परवर्ती विकास है। तेसीतरी ने 'प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी' मे कर्म सम्प्रदान-परसर्ग नइँ के उदाहरण जिन रचनाओ से दिये हैं वे स्वय उन्ही के अनुसार १५०० ई० के आस पास की हैं।

परतु पश्चिमी हिंदी के ने परसर्ग के लिए यदि प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी (मारवाड़ी) तक ही जाना है तो कर्म-सम्प्रदान नइँ की अपेक्षा स्वय कर्तृ-करण मे प्रयुक्त नइँ के निकट जाना अधिक युक्तिसगत होगा। तेसितोरी ने कर्तृ करण नइँ के भी कुछ उदाहरण दिए हैं जैसे—

आदीश्वर-नइँ दीक्षा लीधी (आदि च०)

= आदीश्वर ने दीक्षा ली।

देवताए भगवन्त-नइँ कीधउ तें दखी (आदि च०)

देवताओ ने वह देखा (जो) भगवन्त ने किया।

परतु ने के कर्तरि प्रयोग वाली यह रचना भी १६ वी सदी की है।

तात्पर्य यह है कि रासो मे कर्तृ करण परसर्ग ने का अभाव उसकी प्राचीनता का पक्का प्रमाण है।

८६. की तरह रासो मे एक ही परसर्ग अनेक कारको के लिए प्रयुक्त होता है। एक कारक के लिये विशेष रूप से आने के साथ ही सामान्य रूप से वह अन्य कारको मे भी आता है। कारको के क्रम से रासो मे प्राप्त परसर्गों का वर्गीकरण निम्नलिखित है —

कर्ता कारक : ×

कर्म कारक : ×

करण कारक : सा, सूँ, सहु, (सहु); तं

सम्प्रदान कारक : तनु, तन; लागि

---

१ कम्पैरेटिव ग्रैम्र, भाग २, पृ० २७०

२ गौडियन ग्रैमर, पृ० २१६

अपादान कारक : ते, तैं; हुंति

सम्बन्ध कारक : का, की, क ; को कउ, कहु, कहु, कू

अधिकरण कारक : मज्झहि, मज्झे; मज्झि; मज्झ, माझी, मज्झर; मझ; मधि, मह, महिं

८७. *करण-परसर्ग* : (क) सहु < अपभ्रंश सहुँ (हेम ४४१६,५) < स० *साकम्* (पिशेल [३] २०६)

धातु सहु (७०२)

(ख) *सो* < अप० सहुं

इक्क लक्ख सों भिरे (२६६४)

इह कहि सखिन सों (१६७१)

(ग) सूँ :

लक्ख सूं लर्यो अकल्लो (२६६:०२)

राज सूं कहहि (१४६'६)

मग्गन सूं पान (११२'२)

जहाँ तक रासो के सूं का संबंध है, इसे मारवाडी प्रभाव कहा जा सकता है। आधुनिक मारवाडी के साथ पुरानी राजस्थानी में भी स के प्रयोग मिलते हैं[१]; जैसे—

कुमार सूं (ष० ३५), *किरात* सूं युद्ध करइ (आदिच०)

जम सूं जुरने (२१०'४)

किन्तु रासो मे प्रधानता सूं की अपेक्षा *सो* परसर्ग की ही है और जहाँ सू है, वहाँ उसके समानान्तर दूसरी प्रतिया मे *सों* पाठ भी मिलता है जो ब्रजभाषा की प्रकृति के सर्वथा अनुरूप है।

(घ) *ते* : इसकी व्युत्पत्ति विवादास्पद है। चैटर्जी इसे संस्कृत अन्तः से सबद्ध

१, पुरानी राजस्थानी, पृ० ७२

करते हैं[1]। केलॉग इसका सबध संस्कृत प्रत्यय—*तः* से जोड़ते है और तेसितोरी—*होन्तउ* (अप०) से।[2] मुझे तेसितोरी की व्युपत्ति ऐतिहासिक और युक्तिसंगत प्रतीत होती है। मूलतः यह अपादान कारक का परसर्ग है; परंतु करण के लिए भी इसका विस्तार हो गया। उसी तरह जैसे आधुनिक खड़ी बोली में मूलतः करणः परसर्ग *से* का विस्तार अपादान के लिए भी हो गया है। जैसा कि केलॉग ने *ते* का अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा है कि यह अग्रेजीके 'बाइ' शब्द का समानार्थक है न कि 'विद्' का[3], रासो मे भी *सों* और *ते* के प्रयोग में अर्थ-संबधी अंतर किया गया है। करण कारक मे *ते* के प्रयोग के दो उदाहरण रासो से प्रस्तुत हैं—

पुण्य ते राजकाज (२८·१)
=पुण्य के द्वारा राजकाज,
पानि ते मेरु ढिल्ले (२३४·४)
=पाणि के द्वारा मेरु ढीला हो गया

सों का प्रयोग सामान्यतः 'साथ' के अर्थ मे हुआ है जब कि *ते* का प्रयोग 'द्वारा' अथवा 'साधन' के अर्थ मे। इस प्रकार केलॉग ने *ते* का जो अर्थ-विवेक किया है, वह प्रस्तुत प्रसग से भिन्न होते हुए भी *सों* और *ते* के अर्थ-भेद पर विचार करने के लिए सकेत सूत्र प्रस्तुत करता है।

लिपि-शैली की अनिश्चितता के कारण यह स्पष्ट नही है कि *ते* सानुनासिक था अथवा निरनुनासिक।

८८ *सम्प्रदान परसर्ग*—(क) *तन, तनु* < अप० *तण*[4]: रासो में इसका प्रयोग *ओर* के अर्थ मे हुआ है।

गुनियन तन चाह्यो (८६·१)
पट्टनु तनु देख (३०६·१)

---

१ उक्ति व्यक्ति० स्टडी § ६३

२. हिंदी ग्रैमर § १७१

३. पुरानी राजस्थानी § ७२ (२)

४. तादर्थ्ये केहिं-तेहिं-रेसिं तणेणा·। (हेम० ४·४२५)

(ख) *लगि* < **लग्गि* < *लग्ने* : इस परसर्ग का प्रयोग अपभ्रंश में नहीं था। तेसितोरी ने 'पुरानी पश्चिमी राजस्थानी' मे अपादान के अन्तर्गत *लगइ* और *लगी* दो परसर्गों का उल्लेख किया है[1] जो रूप की दृष्टि से इससे साम्य रखते हुए भी अर्थ की दृष्टि से भिन्न है। वस्तुतः सम्प्रदान के अर्थ मे *लगि* अथवा लागि का प्रयोग पुरानी पश्चिमी बोलियों मे नहीं मिलता, बल्कि पूर्वी बोलियों मे मिलता है। यदि *लिए* का सबध *लगि* से ही है तो खड़ी बोली मे इसे पूर्वी प्रभाव के रूप मे स्वीकार करना चाहिए। इस प्रकार रासो मे *लगि* के प्रयोग को पूर्वी प्रभाव कहा जा सकता है :—

जीव लगि सत्त न छंडउं   (३०२·३)

रासो मे अन्यत्र कई स्थानो पर *लगि* का प्रयोग *तक* के अर्थ में हुआ है जिस अर्थ मे आगे चलकर इसीसे विकसित *लौं* का प्रयोग हुआ।

८९ *अपादान परसर्ग*—(क) *हुँति* < अप० (हेम० ४ ३५५, ३७३) *होन्तउ* < स० * भवन्तक :

कविराज दिल्ली हुँति आयो   (८३·४)

सभा वाली प्रति मे *हुँति* के स्थान पर *तैं* पाठ है। इससे *हुँति* और *तैं* के सबंध—सभवतः पौर्वापर्य सबध—पर प्रकाश पड़ता है। *हुँति* का प्रयोग कीर्तिलता, पद्मावत, रामचरित मानस आदि अन्य रचनाओ मे भी मिलता है। तेसितोरी ने पुरानी राजस्थानी मे भी इसके प्रचलन के उदाहरण दिए हैं (७२[3]११)

(ख) *ते* : रासो मे अपादान के लिए *हुँत* की अपेक्षा *ते* का ही प्रयोग अधिक हुआ है।

देवता मग्ग ते स्वर्ग भुल्ले।   (१७·४)

दस कोस कनवज्ज ते   (२७०·५)

---

१ पुरानी राजस्थानी, ६७२ (६)

परवत्त ते ढाहे (९९·३)

ताप ते ध्यान लग्गे (१८.३)

अंतिम उदाहरण मे अधिकरण का सन्देह होता है; और *ताप* के स्थान पर *तप* पाठ सही मालूम होता है।

९० सम्बन्ध परसर्ग : विशेष्य-निघ्न होने के कारण सबध-परसर्ग के रूप सबद्ध सज्ञा के लिग वचन के अनुसार विविध मिलते है।

(क) आधुनिक खड़ी बोली के समान रूप—*का*, *की*, *के*

तजि जीवन का मोहि (१८७·२)

भय की दिसि (२०९·१)

कीरती पंग की (२७७·१)

चहुवान के सार (३०१·२)

नितम्ब स्याम के (११६ २)

सयन्न काम के (,,)

कोट के मुनारे (२५५·४)

(ख) को : रूप की दृष्टि से यह खड़ी बोली के कर्म-सम्प्रदान से साम्य रखते हुए भी अर्थ की दृष्टि से ब्रजभाषा संबध कारक का परसर्ग है। आरंभिक ब्रजभाषा मे आधुनक *कौ* का विकास संभवतः नही हुआ था; इसीलिये मिर्जा खॉ ने संबध-परसर्ग के नाम पर केवल *को* का उल्लेख किया है।[1] सामान्यतः इसे कन्नौजी और जयपुरिया का रूप कहा जाता है।

कवि को मन रत्तउ (९०·३)

आदरु किय न्रिप तास को (१०५·१)

(ग) कउ – सभवत. यह ब्रजभाषा *कौ* का पूर्व रूप हैं।

सुनि रव प्रिय प्रिथिराज कउ (१६७ ३७)

सभा की प्रति मे *कउ* के स्थान पर *का* पाठ मिलता है।

---

१ ब्रजभाखा ग्रैमर, पृ० ४२

(घ) *कहुं, कहु* – वस्तुतः यह कर्म-सम्प्रदान परसर्ग है परंतु रासो के लघुतम कनवज्ज समय में हमें इसके सभी प्रयोग सबध अथवा भावे षष्ठी के मिले।

कनवज्ज कहुं (१५२२)

प्रथिराज कहु निसान (२०२१)

परत धरनि हरसिंघ कहु (३००१)

सभा की प्रति मे प्रथम *कहुं* के स्थान पर *कौं*, द्वितीय *कहु* के स्थान पर *को* किन्तु अतिम *कहु* के स्थान पर *कहुं* पाठ मिलता है। लिपि-शैली की अनिश्चितता के कारण यह कहना कठिन है कि *कहुं* सानुनासिक था अथवा निरनुनासिक। बहुत सभव है, यह सानुनासिक रहा होगा। सामान्यतः इसे अवधी, भोजपुरिया आदि पूर्वी बोलियो की विशेषता के अतर्गत रखा जाता है। तुलसी, जायसी, कबीर मे इसके उदाहरण बहुत हैं।

(ङ) *कूँ* : ब्रजभाषा मे *कौं* के साथ *कू* रूप भी मिलता है हमारी सीमा मे इसका केवल एक उदाहरण मिला है और उसके लिए भी सभा की प्रति मे *कौं* पाठान्तर है।

दल प्रिथिराज कूं (३०५.२)

(च) *कै* : वस्तुतः यह पुरानी बैसवाड़ी का परसर्ग है और स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होता है। तुलसी ने लिखा है, *'खल कै प्रीति यथा थिर नाही'* (किष्किधा कांड)। रासो की सीमा मे जो दो उदाहरण मिले हैं दोनों ही पुल्लिगवत् व्यवहृत हुए हैं—

रोस कै दरिया हिलोरे (१०३.२)

रिपु कै सबद (२०५.१)

(छ) *तणी, तण* : संबंध के अर्थ मे इसका प्रयोग पुरानी राजस्थानी की विशेषता है; जैसे 'ढोला मारू-रा दूहा' मे

राणि राउ पिगल-तणी (४)

रासो मे इसके केवल दो उदाहरण मिले हैं—

रेण सरद तनी = शरद की रजनी (२८४.४)

वर बंबर वैरख छत्र तणी = छत्र की (२८४.१)

६१. *अधिकरण-परसर्ग* – (क) इसके विषय मे महत्त्वपूर्ण तथ्य यही है कि पुरानी ब्रज के घिसे रूप – *मै* और *मे* रासो मे दृष्टिगोचर नही हुए। रासो मे इस परसर्ग का अधिक से अधिक घिसा रूप *मह* है; इसके अतिरिक्त अधिकांश रूप *मज्झ* वाले पुराने ही हैं। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं—

झरंत सु गंग मह	(१६३·४)
मन महि अनुरत्तिय	(१६३४)
सावंत घन मधि	(१२६·१)
हत्थ माझी	(३२५·४)
पट्टन मंझ	(७१·१)
गन मज्झ	(२३४·२)
घन मज्झि तडित्त	(७७·४)
अच्छरी अच्छ मज्झे	(२२५·२)
ससि मज्झहि	(७७२)

(ख) इसी प्रकार ब्रजभाषा के *पै* और *पर* रूप रासो मे नही मिलते। इनके स्थान पर रासो मे पुराना रूप *उप्पर* अथवा *उप्परि* ही प्रयुक्त है।

रेनु परए सिरि उप्परहि	(१८०·१)

३. संख्या वाचक विशेषण

६२. *पूर्ण संख्या वाचक*

१ :	इक	(३६, ६३, १०२१, ३१६·१)
	इक्क	(६२, १००४, १७७२, २७६४ २६६·४ ३३७२)
	इक्कु	(३६, १६०·४)
	एकु	(३२०२)
	एग	(१८६१)

२ : दु (७८ ३)

दुइ (३१९ १)

३ : तिन्नि (८२·२)

तीन (८६ २)

त्रिय (७·१)

त्रीय (७·१)

४ : चार (२७०·३)

चारि (९०·१)

च्यारि (२९९ ६)

५ : पंच (२७९·३, ३२५ ७, ३१७ ६)

६ : खट (१४२ २, १४४ १)

छह (११०·१, ११३·१)

७ : सात (१४६·२, १४४·१)

८ : आठ (३०४·६)

१० : दस (१४४·१, २७०·५, २८२·२, ३२०·२)

दह (७९·३, १६३·२ ३१३·२)

११ : ग्यारह (१·१)

१२ : बारह (३३६·३)

द्वादस (३३७·४)

१३ : तेरह (३१८·६)

१५ : दस पंचति (२८२·२)

१६ : सोड़स (१९·१)

सोलह (३२१·६, ३२२·२)

५० : पंचास (१०८·२)

५१ : इक्कावनइ (१·१)

६४ : चउसट्ठि (३१३·५)

८०	:	असिय	(२३०'२)
		असी	(२७४'६)
१००	:	सइ	(१'१, २६२'१)
		सै	(२७७'४)
		सय	(२०१'१)
		सौ	(२७६.३)
		सत	(२०१, ६६'२, १५१'२)
१०००	:	सहस	(१२५'१, १४२'२, २६८'१)
		सहस्स	(२६८'२)
		सहस्र	(६६'२)
		हज्जार	(२५४'१)

पूर्णाङ्क संख्या बोधक अन्य शब्द :

लक्ख	(८२'२, १३८'३, २७४'६ २६६'२)
लाख	(२३'२)
लाखु	(६७'१)
कोटि	(५८'२, ६१'२, १६६,२, ३२१'१)

(ख) रासो मे प्राप्त होने वाले पूर्णाङ्क सख्या बोधक-शब्दों मे कुछ के रू ।वचारणीय हैं *सात, आठ, ग्यारह, बारह* और *तेरह* के वैकल्पिक रूप नही मिलते । इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इनके आधुनिक रूप-तब तक स्थिर हो चुके थे । *बीस* तक की अन्य संख्याओ में भी *एक, तीन, चार दस* और *सोलह* के आधुनिक रूप विकल्प से प्रचलित थे । इनके अतिरिक्त *सौ* और *लाख* भो आधुनिक रूप मे प्रयुक्त होते थे । इनके साथ-साथ प्राकृत

अपभ्रंश के कुछ पुराने अवशेष भी रह गए थे। जैसे *इक्क, एग*[1], *दह*[2] *सइ* और *सहस्स* ।

कुछ संख्याओं के रूप अभी विकास की आधुनिक अवस्था तक नहीं पहुंच सके हैं, जैसे *छह* । षष् का अन्त्य ष् व्ययान्त प्रवृत्ति के कारण *ह* तो हो गया किन्तु आधुनिक भाषाओं में मिलने वाले रूप तक पहुंचने के लिए *ह* का पूर्णतः लोप नहीं हो सका था ।

अन्य रूपों मे विशेष विचारणीय *दुइ, तिन्नि* और *च्यारि* हैं । ब्रज मे जहॉ *दोउ* रूप मिलता है, वहॉ रासो मे *दुइ* है जो कि पूर्वी भाषाओं की प्रकृति के अनुसार है ।[3] 'उक्ति व्यक्ति प्रकरण' से भी प्रमाणित होता है कि पुरानी कोसली मे *दुइ* रूप ही होता था (१५|२१) । इस प्रकार या तो रासो के *दुइ* का पूर्वी प्रभाव माना जाय या फिर स्वराघात के कारण आद्य ओ की दुर्बलता का परिणाम समझा जाय ।

ब्रज भाषा की भॉति रासो में भी *चारि* रूप मिलता है परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि च मे य संयुक्त करके उसके तालव्य सवर्णी उच्चारण की ओर विशेष झुकाव था ।

तीन के अतिरिक्त *तिन्नि* रूप की व्याख्या के लिए या तो छंदोऽनुरोध की युक्ति दी जाय या फिर उसे पंजाबी प्रभाव माना जाय क्योंकि पंजाबी मे *तिन* रूप होता है ।[4]

पूर्ण संख्यावचक शब्दों में फारसी *हजार* का *हज्जार* रूप में ग्रहण ध्यान देने योग्य है ।

---

१ एगो (हेम० १ १७६)

२. वररुचि प्राकृत-प्रकाश, २ ४४; हेमचन्द्र १ २१६; प्रबन्ध चिन्तामणि—गणिया लब्भइ दीहडा के दह अहवा अट्ठ ।

३. होर्नले, गौडियन ग्रैमर, पृ० २५४

४. होर्नले, पृ० २५४

९३. *अपूर्ण संख्यावाचक*—

अड्ढ (२५१·१)
अध (३३३·२)
अद्ध (३८·१, २०४·३, ३७०·१)

रासो मे प्राप्त होने वाले रूप प्राकृत अपभ्रंश के अवशेष प्रतीत होते हैं। व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण करने के बाद भी *अध* आधुनिक ब्रजभाषा का रूप प्राप्त नहीं कर सका था।

९४. *क्रम संख्यावाचक*

पहिलइ (२६९·६)
पहिली (३१५·१)
पहिल्ले (२९९·१)
दुतीय (३१८·४)
विय (३२१·१)
वीय (३८·२, ५०·४)
तिअ (३३७·१)
तीज (१·१)

इनमे से *पहिली* को छोड़कर अन्य सभी रूप प्राचीन अवशेष हैं। रासो मे *सर* प्रत्यय वाले *दूसरे* और *तीसरे* रूपों का प्रयोग नहीं मिलता।

९५. *समुदाय वाचक*—

दुहुँ (१०१·१, २०४·१) = दोनों
तिहुँ (२१२·६) = तीनो
चहुँ (११०·५) = चारों

९६. *संख्यावाचक विशेषणों से बनने वाले समास*—

दुसेर :

समसेर दुसेर समाहनि से। (२०६·३)

तिहिद्दिया :

बंध्यो तिन्न तिहिद्दिया। (२६६'५)

४. सर्वनाम

६७. *उत्तम पुरुष सर्वनाम :* रासो मे निम्नलिखित रूप मिलते हैं—

मूल रूप : **हूँ, मै, मो।**

विकारी रूप : **मोहि, मो, हम।**

यहाँ दो रूपो का अभाव ध्यान देने योग्य है— *हौं* और *हमारो*। ये दोनो ही रूप प्राचीन ब्रजभाषा मे बहुत प्रचलित थे और रासो के वृहत् रूपान्तर मे भी अन्यत्र मिलते हैं। बीम्स ने इन रूपो का उल्लेख किया है। किन्तु हमारे पाठ की सीमा मे ये दृष्टिगोचर नही हुए।

(१) *हूँ :*

अहो कंद वरदायि कहूँ हूँ। (६१'३)

कनवज्जह दिख्खन आय हूँ। (६१'४)

प्राचीन ब्रजभाषा की कुछ रचनाओ मे हूं मिलता है।[1] परतु इसका विशेष प्रचलन पुरानी और सभवतः आधुनिक मारवाड़ी मे विशेष है।[2]

(२) *मै :*

मै व गोरि साहिब्ब साहि सरवर साहंतो। (२५७'५)

मै वस्तुतः तृतीया एक वचन का रूप है और इसका प्रयोग भूतकालिक कृदत के कर्ता की भाँति होता है, लेकिन यहाँ यह वर्तमान कृदत के साथ प्रयुक्त हुआ है।

(३) *मो :*

मो रवि मंडल भेदि जीव लगि सत्त न छंडउं। (३०२'३)

---

१ डा० धीरेन्द्र वर्मा, ब्रजभाषा, § १५६

२ तेसितोरी, पुरानी र जस्थानी § ८३

मो वस्तुतः विकारी रूप है, परंतु यहाँ इसका प्रयोग मूल रूप कर्ता की भाँति हुआ है—*मो छंडउं*।

(४) *मो* (विकारी रूप) :

मो सरण सरण हिंदू तुरक (२५७·५) = मेरी
मो कंपहि सुरलोक (१६८·१) = मुझसे
ते जम्म अंत मो लहे (११६·२) = मुझे

उपर्युक्त तीन उदाहरणो मे *मो* का प्रयोग क्रमशः संबध, अपादान और कर्म सम्प्रदान मे हुआ है। इससे स्पष्ट है कि विकारी *मो* का प्रयोग सभी कारको मे होता था।

(५) *मोहि* :

भय मोहि दिखायो (२७५·१) = मुझे
है व्रत मोहि (१६६·४) = मुझे

मोहि मुख्यतः कर्म कारक एक वचन का रूप है।

(६) *हम* :

हम बोल रहै (२७४५) = हमारा
हम तुम्ह दुस्सह मिलन (३०२·२) = हमारा
हम सउ भ्रित सुंदरी एग (१८६·१) = हमारे ?

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि रासो में *हम* का प्रयोग प्रायः आदरार्थ एक वचन मे ही हुआ है।

६८ *मध्यम पुरुष सर्वनाम* : प्राप्त रूप निम्नलिखित हैं—

मूल रूप : तुम
विकारी रूप : तुम्ह, तुम्हइ, तैं, तुज्झ, तोहि

(१) *तुम* :

मिल्यो तुम आइ (१८४·२)

तुम गुज्जर भट भीम (२७५·३)

तिहि सरणागत तुम करो (२७५·५)

इसका प्रयोग कर्त्ता कारक, एक वचन के रूप मे हुआ है।

(२) तुम्ह :

इह तुम्ह मग्ग	(१४·१)	=	तुम्हारा
हम तुम्ह दुस्सह मिलन	(३०२·२)	=	तुम्हारा
तुम्ह सत्थहि सामंत कुमार	(१६६·२)	=	तुम्हारे

तुम्ह का प्रयोग सम्बन्ध कारक, एकवचन मे मिलता है।

(३) तुम्हइ :

रवि तुम्हइ समुहउ उवइ (१४·१)

यहाँ तुम्ह-इ का -इ या तो निश्चयार्थक -हि का ही एक रूप है, या फिर इसका सम्बन्ध अपभ्रंश तुम्हइं से है।

(४) तै :

तै रक्खे हिंदुवाण	(२७७·१	=	तैंने, तुमने
तै रक्खे जालोर	(२७७·२)		
तैं रक्खे पंगुलिय	(२७७·३)		
तै रक्खे रिणथभु	(२७७·४)		

तैं का सम्बन्ध अपभ्रंश तइं[१] से है जो मइं की भाँति तृतीया एकवचन का रूप है।

(५) तुज्झ :

तहि गिन्यो तुज्झ गनि	(१·५·४)	=	तुझे

यह कर्म-सम्प्रदान, एकवचन का विकारी रूप है। ब्रजभाषा मे इसका प्रयोग नहीं मिलता। वस्तुतः यह खड़ी बोली का रूप है।

---

१ टा-ड्यमा पइ तइ (हेम० ४ ३७०)

(६) *तोहि* :

नहि रक्खूं कवि तोहि (१२३·१)
कल्लि समप्पूं तोहि (१२३·२)

यह कर्म-सम्प्रदान एकवचन का रूप है और प्राचीन ब्रजभाषा की अनेक रचनाओं मे प्रयुक्त हुआ है।

यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि *मेरो* और *हमारो* की तरह *तेरो* और *तुम्हारो* तथा *तिहारो* रूप अप्राप्त हैं।

९९. *दूरवर्ती निश्चयवाचक* : अपभ्रंशोत्तर काल से ही दूरवर्ती निश्चय वाचक सर्वनाम के रूपो का प्रयोग अन्य पुरुष सर्वनाम के लिए भी होने लगा था। यह प्रवृत्ति ब्रजभाषा की अन्य रचनाओ की तरह रासो में भी पाई जाती है। हमारे पाठ मे केवल *वह* के ही उदाहरण प्राप्त हुए हैं, बहुवचन *वे (वै)* तथा विकारी रूप *वा* के उदाहरण अप्राप्त हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये रूप परवर्ती विकास हैं।

(१) वह :

वह रवि रथ लै जुत्तयो (३०९·६)
वह नर निसंक (३०९·५)
वह रुंडमाल हार (३०९·६)

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित दो स्थलो पर *उह* का प्रयोग हुआ है जो संभवतः स्थान वाचक क्रिया विशेषण अव्यय *वहाँ* का अर्थ देता है।

उह हने गयंदह (३०७·३) = वहाँ, उधर
उह मारइ इहु धाइ (३०९·४)

इसके विकारी रूप *उस* (५४·२) का भी केवल एक उदाहरण प्राप्त हुआ है, जो संदेहास्पद है।

१०० : *निकटवर्ती निश्चयवाचक* : रासो में निम्नलिखित रूप प्राप्त होते हैं :—

एकवचन : इह, इहु, यह, येह
बहुवचन : इनि

यह (५७·२) और येह (६३४) के प्रयोग संदेहास्पद हैं ।

(१) इह, इहु :

इह तुम्ह मग्ग समुज्झ (२३·१) = यह
इनिहारि इह (१०९·२)
इह न सन्थि प्रिथिराज (१२२·१)
इह जु इंदुजन (१४५·२)
इह कहि सिर धुनि (१९५·१)
इह सुनिय लीज (३१८·२)
इहु प्रिथिराज नरिंद (१६६·२)
इहु पिक्खिउ (३०७·२)

(२) इनि :

इनि छिनि (१६९·३)
वान रक्खहि इनि वारह (३३६·३)

१०१. संबंध वाचक : रासो मे प्राप्त रूप निम्नलिखित हैं :—

संबंध वाचक

एक बचन : जु, जो, जासु, जिहि,
एक बचन : जिन, जिने,

(१) जु, जो :

धरणि रक्खे जु भुअंगह (२७५·२)
वधू रक्खै जु अप्प कुल (२८५·३)
जहु रक्खै जो हेम (२७५·४)
परयो साह जो सूर सारंग गाजी (३२५·२)

(२) *जास, जासु* : जिसके

सीसै धरो जास गंगा (२२४.४)
राम गोइंद जासु वर (२६९.१)
पलौ नागवर जासु धर (२६९.२)

(३) *जिने* : जिन्होंने

जिने हंकिया पंगुरा (३२२.४)
जिने पारियै पंग खंधार सारो (३२४.४)
जिने नॅखिया नैन गयदंत नाना (३२५.२)

(४) *जिन* :

जिनके मुख मुच्छ ति मुंछरिया (२०७.४)

१०२. *नित्य संबधी* : प्राप्त रूप निम्नलिखित हैं :—

एक वचन : *सो, तासु, तिहि*
बहु वचन : *ति, ते, तिन, तिनै, तिके,*

(१) *सो* :

सो कविराज दिल्ली हुँति आयो (८३.४)
लिए साथ रजपूत सो (३.६)

दूसरे उदाहरण मे *सो* का अर्थ सख्यावाचक *सौ* भी हो सकता है।

(२) *तासु* :

तासु पुत्ति जम्मु छोड़ि ढिल्लिनाथ आचरे (१७३.४)
तासु गेरव मैमंतो (३७५.३)

(३) *तिहि* :

तिहि सरणागत तुम करो (२७५.५)
भयो परत तिहि सद्द (३११.४)
तिहि सद्द सीस संकर धुन्यो (३३३.५)
तिहि उप्परि संजोग नग (३४०.२)

(४) *ति, ते* :

ति अच्छरी (१७३·१)
ते नैन दीसं (४९·१)

(५) *तिन, तिनै* :

राजन तिन सह प्रिय प्रमद (३४१·१)
तिनै देखते रूप संसार भग्गै (१८·४)
ते सज्जए सूर सव्वे तुखारा (१५४·४)

(६) *तिके* : वस्तुतः यह मारवाड़ी बोली मे पाया जाता है।[1]

परे सूर सोलह तिके नाम आनं (३२३·२)
तिके उच्चरे सोह अन्नोन्न पारी (६१४)
तिके द्व्व के हीन हीनेति गत्ते (६२·२)

१०३. *प्रश्नवाचक सर्वनाम*—इसके दो भेद होते हैं—प्राणिवाचक और अप्राणिवाचक। रासो मे इन दोनो के निम्नलिखित रूप प्राप्त होते हैं।

प्राणिवाचक : को, कौन, किनहि
अप्राणिवाचक : कइ, कहु

उदाहरण :

इह अपुव्व को मानिहै (९४·६)
रहै कौन संता (२१९·१)
किनहि कह्यो प्रिथिराज (८१·१)

तिहि क्रियजन कइ काज (१६५·२) = केहि, किस
कहहि कन्ह यहु काहु (१८३·२) = क्या

१०४ *अनिश्चयवाचक सर्वनाम*—इस सर्वनाम के, रासो मे, दो प्रकार

१ पर्केलॉग, हिंदी ग्रैमर, टेबिल ११

के रूप मिलते हैं। एक तो *कोइ* (कोई) वाले और दूसरे संख्या-वाचक विशेषण एक से बने हुए हैं। दोनों के उदाहरण निम्न-लिखित हैं—

इह वंस भाजि जानइ न कोइ (३०२५)
एक करहिं सूर असनान दान (१९·१) = कोई
इक कहहिं लेहि वर इंदुराज (१९·३)
इक कह इंदु फनिंद (१६६·१)
इक कहै दुरदेव है (१६६·१)
इक कहैं असि कोटि नर (१६६·२)

१०५. *निजवाचक सर्वनाम—निय* के अतिरिक्त *अप्पण, अप्प, अप्पु* तथा *अपन* रूप प्राप्त होते हैं जिनके उदाहरण निम्नलिखित है।

त्रिप निय निद विसारि (१३९·२)
इतो बोझ अप्पण धरो (२७५ ६)
अप्पु मग्ग लग्गियइ (२७४·२)
वधू रक्खै जु अप्प कुल (२७६ ३)
स्वामि हुइ जाइ अपन घर (३०२·२)

कभी-कभी निजवाचक सर्वनाम का द्वित्व भी हो जाता है, जैसे *अपना-अपना*। रासो मे इसका *अप्प अप्प* रूप मिलता है।

जु अप्प अप्प चिप्फुरे (२४५·२)

५. सर्वनाम-मूलक विशेषण

१०६. *प्रकार वाचक* : रासो में इसके *अस, इसो, तस* और *तेसो* रूप मिलते हैं। उदाहरण निम्नलिखित हैं—

अस कत्थइ (२७९·३)
इसो जुद्ध अनुरुद्ध मध्यान्ह हूवं (२९६·१)

प्रजंक तदून तस (३४४·३)
वरं वीर गुंडीर तेसे सुभंगा (२२४·३)

१०७, *परिमाण वाचक* : रासो मे इसके इत्त° वाले रूप मिलते हैं । सोदाहरण सभी रूप निम्नलिखित हैं—

नरिद इंद इत्त कोरि (१३९२)
इत्तनहि सास घरि वारि रहियो (२३८·३)
इत्तनउ कहत भुजपति उठ्यो (१:६·५)
भयो इत्तने युद्ध (२६६६)

१०८, *सख्या वाचक* : प्राप्त रूप निम्नलिखित हैं—

कितकु सूर संभरधनी (१०७·१)
कितकु देस दल बंध (१०७१)
कितोकु इन हथ उग्गलउ (१०७२)
कते राने (२६७२)

६. क्रिया

१०९, प्रेरणार्थक—रासो मे प्रेरणार्थक क्रिया के जो थोड़े से रूप प्राप्त हुए हैं उनमे एकमात्र प्रेरणार्थक प्रत्यय *–आ–* का प्रयोग दिखाई पड़ता है ; जैसे निम्नलिखित उदाहरणो मे *पठावनि, दिखायो* और *कनायो* क्रिया रूप *पठ्+ आ, दिख्+ आ, कह + आ* से बने हैं ।

अम्महि पुच्छन दूत पठावहि (१६८·३)
मरन भय मोहि दिखायो (२७५·१)
होइ के मोहि कहायो (२७५·२)

११०, *वाच्य*—भूतकालिक कृदंत से बने हुए निष्ठा के रूप मूलतः कर्मवाच्य के होते हुए भी अपभ्रंश तथा परवर्ती भाषाओ मे कर्तृवाच्य की ही तरह प्रयुक्त होते

हैं। इनके अतिरिक्त *–य–* लगाकर बनाए हुए अन्य प्रकार के भी भाव वाच्य तथा कर्मवाच्य के रूप मिलते हैं।

मनो दिक्खियै रूव ऐराव इंदा। (१६.२) = दिखलाई पड़ता है।
मनो दिक्खियै वाय वड्ढे कुरंगा। (१६.४) = ,,
विनेत्रिय दिक्खिय पूरन काम। (७५.२) = ,,
बुज्झियइ सूर सामंत हुइ। (२७५.६) = बूझा जाता है।
पति सत्थै तन खंडियइ। (२७८.६) = खंडित किया जाता है।
मरण सनम्मुख मंडियइ। (२७८.६) = मंडित किया जाय
अप्पु मग्ग लग्गियइ (२७४.२) = लगा जाय।

वस्तुतः ये सभी रूप प्राकृत-अपभ्रंश के *–ज्ज–* वाले विधि के रूपों से उत्पन्न हुए हैं जिनका अर्थ भाववाच्य की भाँति होता है। इनके अतिरिक्त रासो में *–ज्ज–* > *–ज–* वाले कुछ रूप भी सुरक्षित हैं; जैसे

कहूं जग्गिजै पुण्य ते राज काजं (१८.१)
मरन दिजइ प्रिथिराज (२७६.१)

देख धातु से कर्मवाच्य अथवा भाव वाच्य बनाने के लिए आदि स्वर को परिवर्तित करके *दिख–* अथवा *दीख–* कर देने से भी काम चल जाता है; जैसे

जु दिक्खिहि नारि सकुंज परी (७३.३) = दिखाई पड़ती है।

इसी प्रकार भूतकाल मे भी कर्मवाच्य तथा भाव वाच्य के रूप बनाए जाते हैं; यहाँ भाव वाच्य का एक उदाहरण प्रस्तुत है—

दिक्खियग नीर (१२.४) = नीर देखा गया।

आधुनिक हिंदी में भाव वाच्य अथवा कर्मवाच्य बनाने के लिए दो क्रियाओं के संयुक्त प्रयोग की अपेक्षा रहती है और ऐसे संयुक्त प्रयोग मे द्वितीय क्रिया प्रायः *जाना* अर्थवाली होती है; किन्तु रासो मे भूतकालिक भाव वाच्य के ऐसे भी रूप मिलते हैं जिनमें *जाना* के बिना केवल एक ही क्रिया से काम चलाया जाता है। संयुक्त क्रियाओं की अविकसित अवस्था के कारण ही उस समय ऐसा होता था।

अनेक वर्न जो कहे।   (११६२) = कहे गए हैं

मूल काल

१११. आधुनिक आर्यभाषा की अन्य आरंभिक रचनाओं की तरह रासो में भी ऐतिहासिक दृष्टि से दो प्रकार की काल रचना मिलती है—प्राचीन तिङन्त रूपों से उत्पन्न अर्थात् तिङन्त तद्भव और प्राचीन कृदन्त रूपों से उत्पन्न अर्थात् कृदन्त तद्भव। तिङन्त तद्भव रूपों से तीन मूल काल बनते हैं: वर्तमान निश्चयार्थ, भविष्य निश्चयार्थ और आज्ञार्थ।

कालरचना के लिए प्रयुक्त होने वाले तिङन्त तद्भव रूप भी तीन हैं: वर्तमान कृदन्त, भूतकालिक कृदन्त और भूत संभावनार्थ।

चूँकि ये कृदन्त रूप विशेषण होते हैं इसलिए ये लिंग वचन-पुरुष से अनुशासित होते हैं।

११२. *वर्तमान निश्चयार्थ*—रासो में प्राप्त रूप निम्नलिखित प्रकार के हैं।

	एक०	बहु०
१.	कहउं कहू	कहहि
२.	×	कहहु, कहउ
३.	कहइ कहै	कहहि

विश्लेषण करने से निम्नलिखित प्रत्यय लगाए गए प्रतीत होते हैं।

१.	–अउं –ऊं	–अहि
२.	×	–अहु, –अउ
३.	–अइ, –ऐ	अहि

इनमें से प्रत्येक के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

(१) —*अउं*: ऐतिहासिक दृष्टि से ये रूप प्राचीनतर हैं; अपभ्रंश में ऐसे ही रूपों का प्रचलन था। रासो में इनके अवशेष पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं।

इहि भुवहि ढिल्लि कनवज करउं। (१६८·३)

इह अप्पउं ढिल्लिय तखत (१६८ ३)

(२) —ऊं : ये रूप अपेक्षाकृत आधुनिक हैं और अन्त्य स्वर-संकोचन के परिणाम-स्वरूप निर्मित हुए है। रासो के अपने रूप यही हैं।

नहि रक्खूं कवि तोहिं (१२३·१)
कल्लि समप्पूं तोहिं (१२३ २)
जाणूं पावस चुव्वइ (२३९ २)

(३) –अहु : रासो के ये रूप अपेक्षाकृत प्राचीनतर हैं।

गेह किमि गंजहु (९२·२)
किनि गुनि पंगुराइ मन रंजहु (९२·३)
तिहि रक्खहु तिय वास (१२४ २)

(४) –अउ : ये रूप बहुत कम मिलते हैं—

संचउ (९३·१), रंचउ (९३·२)

(५) –अइ : इन रूपो को अपभ्रंश का अवशेष समझना चाहिए। इनकी संख्या रासो मे बहुत अधिक है।

इम जंपइ चंद वरद्दिया (३०२ ६)
धर तुट्टइ खुर धार (३०४ १)
गहव गय कुंभ उपट्टइ (३०९·३)
इस वंस भाजि जानइ न कोइ (३०२·५)

(६) –ऐ : आधुनिक रूप यही है और अन्त्य स्वर-संकोचन के द्वारा इनकी रचना हुई है।

इम जंपै चंद वरद्दिया (२९९ ६)
दिक्खि सुर लोक सहदेव कंपै (२३७·२)
आब रहै तब लग जियन (२३६ ५)
तब लगि चलै कवित्तनौ (२७९·६)

(७) –अहिं : ऐतिहासिक दृष्टि से अन्य पुरुष बहु वचन के ये रूप अपेक्षाकृत प्राचीन हैं। अन्त्य –ह के लोप से –ऐं वाले रूपों के निर्माण की प्रवृत्ति रासो मे नही मिलती।

इक कहहिं (६·३)
बल भरहिं सूर सुणि सुणि निसान (१०·२)
तिन्नि लक्ख निसि दिन रहहिं (८२२)
सयल करहिं दरबार (१४२·२)
गजराज विराजहि (२८३·१)'

११३. *भविष्य निश्चयार्थ* : रासो में *–ह–* < *–स्स–* < *–ष्य–* वाले रूपों की प्रधानता है। प्रायः स्वर-संकोचन के द्वारा –इह > –है हो गया है किन्तु कहीं कहीं प्राचीन अवशेष के रूप मे –हइ वाले रूप भी मिल जाते हैं।

इक रवि –मंडल भिद्दिहै (६·२)
राठोर राय गुन जानिहै (९४·५)
इह अपुव्व को मानिहै (९४·६)
जु कछु इच्छ करि मंगहइ (१२३२)

इनमे से अंतिम उदाहरण मध्यम पुरुष एक वचन का है।

११४. *आज्ञार्थ* : रासो मे आज्ञार्थ के *–ओ* प्रत्ययांत रूप ही मिलते हैं।

तिहिं सरणागत तुम करो (२७५·५)
इतो बोझ अप्पण धरो (२७५ ६)

कृदन्त रूप

११५. *वर्तमानकालिक कृदन्त*—इसके लिए रासो मे प्राचीन *–अंत* तथा नवीन *–अत* दोनो प्रकार के रूप मिलते हैं और किसी सहायक क्रिया के बिना ही वर्तमान काल की रचना करते हैं।

(१) –अंत :

झलकंत कनक (१२·४) = कनक झलकता है।
राइ अप्पंत दानं (१९·१) = राजा दान अर्पित करते हैं।
जराउ जरंत कनंक कसंत (७५·३)

(२) –अत :

दिखत चंदवरदाइ (८४·१) = चंद वरदाई देखता है।

सेवते बंध निसुरत्त पाई (१०२·४)

कवि कन्ह कहता (२१५·१)

सकति सुर महिख बलिदान लहता (२१५·२)

११६. *भूतकालिक कृदन्त* : रासो मे भूतकालिक कृदंत के विविध रूप मिलते हैं। कही तो *–अ* अथवा शून्य प्रत्यय मिलता है; कहीं *–य, –यो, –यौ*; कही *–न, –नी, –नो, –नौ*; कही *–न्ह, –न्हों,* तथा कही *–ध, –धो, –धी* वाले रूप भी मिलते है। इनके अतिरिक्त एक रूप और मिलता है जिसके अंत मे *–इग* प्रत्यय आता है। सभवतः यह संयुक्त प्रत्यय है। इसमे *–ग गत > गअ* का संक्षिप्त रूप प्रतीत होता है। प्रत्येक के उदाहरण निम्नलिखित हैं।

(१) –अ :

झुकित खग्ग चहुवान गह (३१३·१)

= झुकते हुए चहुवान ने खड्ग गहा।

धन्य धन्य प्रिथिराज कहि (३१२·१)

= प्रिथिराज ने धन्य धन्य कहा।

प्रगट पंगु न्रिप हंक (३१०·१)

= पंगु नृप ने प्रगट रूप से हाँका।

उड्ड न्रिप तेज विराज (१२७·१)

= तेज विराज रहा था।

(२) *–य, –यो, –यौ* : ये पुल्लिग एक वचन के रूप हैं। इनमें से *–यो* वाले रूपो की रासो मे बहुलता है किन्तु यत्र-तत्र *यौ* वाले रूप भी मिल जाते हैं। प्राचीन व्रजभाषा मे ये दोनो ही रूप साथ-साथ मिलते हैं। आगे चलकर *–यो* वाले रूप कन्नौजी और जयपुरी में विशेष प्रचलित रहे और व्रज मे *–यौ* वाले रूपों की प्रधानता हो गई।

बंधि खुरसान किय मीर वंदा (१०·३)
कविता किय चंद (१२६१)
उडिय रेणु (३·५)
कर करार सज्यो समुह (६·१)
उपज्यो जुद्ध (१२·२)
भट्टि पुब्बहि चल्यो (१३·२)
कंचन फूल्यो अर्क बन (१८·१)
चंद गयो दरबारह (८३ १)
दिल्लीसर लंक्ख्यौ (१४९ १)
दुसह दारुन अति पिक्ख्यौ (१४९·२)

(३) –इ : स्त्रीलिंग मे भूतकालिक कृदंत कर्त्ता के अनुसार –इकारान्त हो जाता है ; जैसे

छह सुंदरि एकइ समइ चली। (११३·२)

(४) –ये, –ए : ये रूप बहुवचन के हैं।

उये कलस जयचंद ग्रिह (१५·२)
देवता मग्ग ते स्वर्ग भुल्ले (१७·४)

(५) –न, –न्ह :

मिलि मुद मंगल कीन (२७२·४)
खन तलप्प अलप्प मन कीने (१६०·३)
गुन उच्चारि चारि तब किन्हों (९०·१)
जउ भूखै सक्कर पय दिन्हो (९०·२)
देवि दीन्हो हुंकारो (३११·२)

(६) –द्ध : यह अत्यत प्राचीन रूप है। अपभ्रंश मे भी इसके उदाहरण बहुत कम मिलते हैं। 'प्रबंध चिंतामणि' के एक दोहे में इसका प्रयोग हुआ है—

महु कन्तहु इक्क ज दसा अवरि ते चोरहि लिद्ध ।'

बीम्स को भी इसके चार ही उदाहरण रासो में मिले हैं—

बर दीधौ ढुंढा नरिंद । (१·३०५·१)

प्रथिराज ताहि दो देस दिद्ध ॥ (१·३०७·६१)

पुत्री पुत्र उछाह । दान मान घन दिद्धिय ॥

धाम धाम गावत धमार । मनहु अहि बन मनि लद्धिय ॥

यहाँ *लिद्ध* की व्याख्या करते हुए बीम्स ने कहा है कि *लभ्* धातु के भूत कृदंत रूप *लब्ध* से संबद्ध होने के कारण ही *लद्ध* रूप बना है और सारूप्य सिद्धान्त के अनुसार *दद्ध* भी उसी के वजन पर बन गया ।

हमारे पाठ मे एक स्थान पर लद्धी और अन्यत्र पाठांतर में *लिद्ध* रूप मिलता हैं—

लिद्ध वैरागिरि सब्ब हीरा (१०२ २)

दिसा देस दच्छिन्न लद्धी उपंगा (२२३·२)

(७) -इग[1] : यह रूप रासो की अपनी विशेषता है ।

करिग देव दिख्खन नयर (१६२·१)

गंठि छोरि दक्खिन फिरिग (१७८·२)

त्रिप्पु नयन विभ्र अंकुरिग (१८२·२)

उभय सहस हय गय परिग (२६८·१)

सोनंकी सारंग परगे (२६६·४)

अन्य उदाहरण :

अनुसरिग	(११२·४)	डरिग	(३३३ ६)
अप्पिग	(१२३·१, १४८·१)	फटिग	(१२·३)
उठिग	(११२·३)	भ्रमिग	(१३·१)
कहिग	(१३·१)	मलिग	(१४६·२)

---

१. बीम्स ने रासो में यह रूप लक्षित नही किया है ।

खपिग	(३१५·७)	मिलिग	(११·३)
गहिग	(३३२४)	संचरिग	(७·२, ३१३५)
घटिग	(१२३)	संप्परिग	(३१३·२)
चिडिग	(१९८·२)	सज्जिगे	(६६१)
झिलमिलिग	(११३)		

क्रियार्थक संज्ञा

११७. -न और -ब दो प्रकार के रूप मिलते हैं। इनमे से -न वाले रूपों का प्रचलन अधिक है। प्रत्येक के उदाहरण निम्नलिखित हैं।

(१) -न :

कनवज दिक्खण कारणइ (१·२)
पुच्छन चंद गयो दरबारह (८३१)
कनवज्जह दिख्खन आय हूँ (६१४)
फिरक्कि चक्कि चाहनं (१३६१)
सुह दुह कहन चंद मन रत्तउ (३३८·४)

(२) -ब :

करिव्व (३५·१)
गहॅब गय कुंभ उपट्टइ (३०६३)

पूर्वकालिक कृदन्त

११८. रासो का सामान्य पूर्वकालिक कृदंत —इ है, जो व्यंजनान्त और स्वरान्त सभी धातुओं में समान रूप से लागू होता है। आधुनिक ब्रज की भाँति –आकारान्त और –ओकारान्त धातुओं में जुड़ने पर –य होने की जगह –इ ही बना रहता है। कुछ उदाहरण निम्नलिखित है—

सज्जि साह संधै (१७·१)
वेलि सेवंतिय गुंथिय जाइ (७२·३)

आइ स जो गुनियन तन चाह्यो (८६ १)
ति कवि आइ कवियहि संपत्ते (८७·१)
अप्पिग पानु समानु करि (१२३·१)
इच्छ करि मंगिहइ (१२३·२)

सहायक क्रिया

'भू' धातु के रूप

११९. रासो मे √भू के *-भ-* और *-ह-* दोनों ही प्रकार के रूप मिलते हैं और अनुपात की दृष्टि से दोनो का प्रयोग समान है। किन्तु विकासक्रम की दृष्टि से *-ह-* वाले रूप ही रासो के अपने कहे जायँगे। नीचे इनमे से प्रत्येक के काल रचनानुसार तिङन्त-तद्भव और कृदन्त-तद्भव रूप दिए जा रहे हैं। यहाँ ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि इस सहायक क्रिया के रूप रासो मे संयुक्त काल रचना के लिए प्रयुक्त नहीं हुए हैं।

१२०. *-भ-* मूलक कृदन्त[१] : प्राप्त रूपो मे से अधिकांशतः भूतकालिक कृदन्त के हैं।

पुंल्लिग

भो (३२८·१), भउ (३१७·६), भय (७५·४)
भयो (२६६ २, ३०६ ३, ३११·४. ३२८·४)

स्त्रीलिंग

भइ (३१५·६), भई (३२३·७, ३४६·४), भइ (३३६·४)
भइत (१२७ १)।

१२१. *-ह-* मूलक *तिङन्त रूप* :

है (३३·२), है (१०६ १)

---

१ इसके तिङन्त-तद्भव-रूप रासो में नही मिलते।

अहहि (९४·३), आहि (८४·२)

होइ (७१·४, २७७६, ३०७ २)

उदाहरण :

मुकुट बंध सब भूप हैं (१०९·१)

होइ घरे घरे मंगली (२७७ ६)

जिह पंगुर न्रिप आहि (८४·२)

१२२. *-ह- मूलक कृदन्त रूप* : मुख्यतः भूतकालिक कृदन्त के ही रूप प्राप्त होते हैं—*हुआ, हुअ, हुव, हुवा, हूव* इत्यादि ।

हरखवंत नृप भ्रित हुआ (१८३·१)

खंड खंड हुअ रुड (३०२·४)

अचल अचेत जु खेत हुव (३१४·१)

उभय हुव स्वेद कंप सुरभंग (१६७·१)

राज सगुन साम्हो हुवो (४१)

इसो जुद्ध अनुरुद्ध मध्यान्ह हूवं (२६६·१)

७. संयुक्त क्रिया

१२३. ऐतिहासिक दृष्टि से 'सयुक्त क्रिया' भारतीय आर्य भाषा मे परवर्ती विकास है । अपभ्रंश-काल से इसका उदय स्पष्ट होता है और आधुनिक भाषाओं के क्रमिक विकास के साथ रूप और अर्थ दोनों ही दृष्टियो से इसमे जटिलता बढ़ती जा रही है । रासो मे सयुक्त क्रिया के जो रूप प्राप्त होते हैं, वे रूप और अर्थ दोनों ही दृष्टियों से कम जटिल है । अधिकांश संयुक्त क्रियाएँ पूर्वकालिक कृदत के योग से बनी है और थोड़ी सी क्रियार्थक संज्ञा के भी योग से निर्मित हुई हैं । इनमें से प्रत्येक के उदाहरण निम्नलिखित हैं ।

(१) *पूर्वकालिक कृदन्त के योग से निर्मित* :

धरि रख्यो वल वानि (३४०·२) :

आनि चंपी दिल्ली धर (३३६ १)
उवर हंस उड़ चलहि (३१३·४)
लेहि बइठो (३०७·१)
जुज्झि गयउ (३०३·१)
हुइ जाइ (३०२·२)
मद गंध गयंदनि सुक्कि गयं (२८८·४)
जाइ निकस्सि (२८६·१)
रहे सूर सामत जकि (३२१·२)
चलि गयो न मंदिर रह्यो (३३०·५)
कहे, घरि आव बइट्टो (२८९·२)
न्रिप जोइ फवज्जइ बंट लियं (२११·४)
भाजि प्रिथिराज जाइ जनि (१४९·४)
चल्या तु छूटि प्रवाह (१५३·२)

(२) *क्रियार्थक संज्ञा के योग से निर्मित :*

ग्रिद्ध पावै न जानं (२६१·४)
= गृद्ध जाने न पाए
मिट्यो न जाइ कह्णो (२८०·१)
= कहना मिट न जाय
गज्जि लग्ग्यो (३३२·१)
= गर्जने लगा ।

रासो की संयुक्त क्रियाओं की रचना में यह विशेषता ध्यान देने योग्य है कि दो क्रियाओं के बीच जोर देने के लिए दूसरे शब्द भी आ गए हैं जैसे *जकि रहे* के बीच में 'सूर सामंत' तथा *छूटि चल्या* के बीच *तु* ।

८. अव्यय

क्रिया विशेषण

१२४. काल वाचक :

अब (१८४'३, ३१६'२)
अजहुँति (१८१'१) = आज से
कब (५७'२); छिनि (१६६'३) = क्षण भर
जब (१६८'२, २७६'६, ३३४'१)
जब लगि (१०८'२) = जब तक
तब (८०'१, १०८'२)
तब लगि (१०८'२) = तब तक
निच्चि (२२३'४) = नित्य
नित्तु (१३०'२) = नित्य
पुनि (१५२'२) = पुनः
फिर (१२६'१)
सदाहं (२६२'१) = सदा

१२५. स्थान वाचक :

अग्ग (२५४'२), अग्गलउ (८४'२)
अग्गे (८४'२), अग्गैं (२७०'१)
अनु (१५१'२)
इत्त (६६'२)

इत्तु (११·२)
इतो (२७५·६)
उप्पर (३०४·६)
उप्परि (३१५·३, ३४०·२)
उप्परहि (१८०·१)
ओर (४०·२)
कहँ (४७·३)
कित (३०६·२)
कोद (२३४·१) = ओर
जहँ (८३·३, १४२·१, २८१·३)
जहि (६१·२, १४३·२)
जाह (४४·१)
तहाँ (२६६·२, ३२६·४, ३३३·३)
तहि (१४५·४, २३२·२)

२२६. *रीति वाचक :*

अस (२७६·२, ३१५·१ = ऐसा
इम (५५·३, ११०·२, २७०·६, २६६·६, ३३१·२) = ऐसा
किमि (६२·२) = कैसे
जनु (२०४·२ २८३·२,) = जैसे, मानो
जिम (११०·२, १६१·४, २२५·२, २४०·४) = जैसे
ज्यं (५·२) = ज्यो
ज्यूं (१०६·२, २०२·१) = ज्यों
तिम (८·१, ३११·१) = त्यों
मनहु (१४८·१, १८०·१, १८६·२, ३००·१ ३१८·४) = मानो
मनो (३५·१, ४८·२, ११६·२, २५५·१, २६०·२) = मानो

१२७. *निषेध वाचक :*

जनि*	(१४६४)	= मत
जिन	(२८६·२)	
न	(७३·२, ८७४, २८६३, २६०·२)	
नहि	(१२३१, १४६२)	
नहि	(३३०३), नही (३२७३), नही (२६६५)	
नानु	(३१५१), नाहिं (२२७·२)	
बिनु	(११२·३, ३३०·१)	< बिना
म	(४३१)	< मा
मति	(२७५·२)	< मा ?

१२८. *कारण वाचक*

कत	(१५१२, २८६·२)	= क्यों
किनि	(६२·३)	= क्यों, क्यों न
क्यूं	(१५४४)	= क्यो

१२६. *परिमाण वाचक*

कछु	(२७८·३)

१३०. *समुच्चय बोधक अव्यय*

अरु	(२·२, ८०·२, १६०·१)	= और

१३१. *विभाजक*

अह	(३४२·३)	= अथवा
अहवा	(१६७·२)	= अथवा
कि	(१६५·२)	= या
किधुं	(१६५·२)	= अथवा

---

* तुलनीय—बार बार तू ह्यां जनि आवै। (सूरसागर)

किधौ (८६·३) = अथवा
कै (२·२, ६१·१, १०१·२) = या
कैं (३४५·१) = या

१३२. *केवलार्थक, निश्चयबोधक*

ही (३४·१, ३६·१, ४०·२, ३१०·१)

१३३. *विस्मयादि बोधक अव्यय*

अरी (२८६·२)
अहो (९१·३)

तृतीय अध्याय

वाक्य-विन्यास

१३४. *कारक-संबंधी विशेषता :* वाक्य-विन्यास के अंतर्गत कारकों के प्रयोग-संबंधी विशेषताओं मे से षष्ठी विभक्ति की व्यापकता महत्वपूर्ण है। षष्ठी की व्यापकता के प्रमाण संस्कृत से ही मिलते हैं।[१] म० भा० आ० मे षष्ठी का क्षेत्र और भी व्यापक हो गया।[२] प्राकृत-अपभ्रंश में षष्ठी का प्रयोग सभी कारकों मे होता था।[३] रासो में भी षष्ठी –ह के व्यापक प्रयोग के अनेक उदाहरण मिलते हैं।

(१) कर्म कारक के अर्थ मे :

चंद गयो दरबारह (८३.१)

= चद दरबार को (की ओर) गया।

कनवज्जह दिक्खन आयो (६१.४)

= कनवज्ज को देखने आया।

(२) अधिकरण के अर्थ मे :

अंगह चंदन लावहि (१६२.१)

=अंगो में चंदन लगाती हैं

भयउ निसानह घाउ (२०२.१)

=निसान पर घाव (आघात) हुआ।

ज्यूँ भद्दव रवि असमनह चंपिय वद्दल वाउ (२०२.२)

=जैसे आसमान मे भाद्रपद के रवि को वादल-वायु ने चॉप लिया।

---

१ षष्ठी शेषे। (अष्टाध्यायी, २।३।५०)

२ सुकुमार सेन, हिस्टारिकल सिंटैक्स आव मिडिल इंडो आर्यन, § ६३–८४

३ हेमचन्द्र, ८।३।१३१–१३४

१३५. षष्ठी के विशिष्ट प्रयोगो मे से एक है स्वतन्त्र कारक के रूप मे 'भावे षष्ठी' का प्रयोग । 'जब शत्रन्त अथवा शानजन्त पद का लिग वचन और कारक क्रिया के कर्त्ता से भिन्न किसी अन्य कर्ता के अनुरूप होता है तब वह वाक्याश *भावे* कहलाता है ।' जैसे—

खग्गह सीसु हनंत खग्ग खप्पुरिव खरख्खर । (३०४'३)
= खड्ग के शीर्ष पर हनते ही खप्पर की तरह खड्ग खर-खर [धँस गया] ।
धरनह कन्हह परत ही प्रगट पंग त्रिपु हंक्क (३०१ १)
= धरणी पर कन्ह के पडते ही नृप ने प्रकट रूप से पंगु को ललकारा ।

१३६. वाक्य-रचना की दृष्टि से 'भावे सप्तमी' के भी कुछ विशिष्ट प्रयोग रासो में मिलते हैं—

धरणि मंगल जल पाए (२७८ २)
= जल को प्राप्त करने से (पर) धरणी का मंगल [होता है] ।
दीन मंगल कछु दीनइ (२७८'३)
= कुछ दिए जाने से (पर) दीन का मगल [होता है]
सार मंगली ग्रिह आए (२७८ १)
= गृह मे [व्यक्ति विशेष] के आने से (पर) शाला मंगली [होती है] ।

१३७. अपभ्रंशोत्तर युग से प्राचीन कर्मवाच्य कर्तृवाच्य की भाँति प्रयुक्त होने लगे[1] और नये ढग के भाववाच्य तथा कर्मवाच्य विकसित हुए ।[2] आधुनिक आर्यभाषा के उदय काल मे कर्मवाच्यके भूतकालिक कृदंत रूप तथा विधि के रूपो मे सरूपता के कारण दोनो के अर्थ मे भ्रम उत्पन्न हो गया । फलस्वरूप दोनो के कार्य

---

१ तेसितोरी, पुरानी राजस्थानी, § १३७

२ भायाणी, सदेश रासक, ग्रैमर, § ७६

क्रमशः एक से होने लगे। उदाहरण के लिए रासो के निम्नलिखित *खंडियइ* और *मंडियइ* रूप विधि के *खंडिज्जइ* और *मंडिज्जइ* तथा *-इत(क)* वाले भूत कृदन्त के *खंडित(क)* और *मंडित(क)* दोनों ही समझे जा सकते हैं।

पति सत्थै तन खंडियइ (२७८·५)
मरण सनम्मुख मंडियइ (२७८·६)

(१) इन दोनों प्रकार के रूपो के मिश्रण से *-इयै* वाले निम्नलिखित प्रकार के नये रूप बने जो सर्वथा भाववाच्य के लिए प्रयुक्त हुए हैं—

मनो दिक्खियै रूव ऐराव इंदा (१६·२)
मनो दिक्खियै वाय वड्ढे कुरंगा (१६·४)

यह प्रवृत्ति १४ वीं सदी की संदेश-रासक जैसी अवहट्ट रचनाओं से ही आरंभ हो गई थी। संदेश रासक मे *अंबरु पुणि रंगियइ, अंगु अब्भिगियइ, दविणु पुणु भिट्टियइ* और *किम वट्टियइ* (१०१) जैसे विधि के रूप भाव वाच्य की तरह प्रयुक्त हुए हैं।

(२) भूत कृदंत और विधि के तद्भव रूपो के मिश्रण से *-आणय* > *-आनय* वाले नये ढंग के कर्मवाच्य रूप निर्मित हुए जिनकी रचना में प्रेरणार्थक प्रत्यय का भी आभास मिलता है। रासो मे *पलायन* के अर्थ वाली क्रिया में इस प्रकार की विशेषता स्पष्ट रूप से लक्षित होती है।

तुरिय पट्टनु पल्लान्यो (३०६·१)
= तुरंग को पट्टन (नगर) की ओर भगाया।

पहु पट्टन पल्लानि (३०७·३)
= प्रभु पट्टन की ओर भागे।

अन्य धातुओ मे भी इसका प्रभाव दिखाई पड़ता है; जैसे—

मरन अप्पहीं पिछान्यो (३०६·२)

= मरण को स्वय पहचाना अथवा मरण स्वयं ही पहचाना गया।

१३८. *पद-क्रम* : छंद-प्रवाह के कारण रासो की वाक्य-रचना में उद्देश्य-विधेय तथा कर्ता-कर्म-क्रिया का गद्यानुरूप क्रम नही निभाया गया है। किन्तु इस क्रम-भंग में भी एक बात स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है कि जिस वस्तु पर अधिक जोर देना है वह वाक्य मे सामान्य क्रम का उल्लघन करके पहले रखी गई है; जैसे

बड़ हत्थहि बड़ गुज्जरउ जुज्झ गयउ बैकुंठ (३०३·१)

यहॉ 'बडगुजर' का बैकुंठ जाना कवि के लिए उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना बड़े (नृप) के हाथ उसका जूझ जाना। इसलिए *बड़ हत्थहि* का क्रम *बड़ गुज्जर* से पहले रखा गया है।

इसी प्रकार :

मद गंध गयंदनि सुक्क गयो (२८८·४)

गयंदनि मद गंध (=गजेन्द्राना मदगंध-) के सामान्य क्रम को तोड़ कर 'मद गंध' को पहले रखा गया है।

अमिय कलस आयास लियो अच्छरिउ उच्छंगह (३११·३)

सामान्य क्रम होता : *अच्छरिउ आयास उच्छंगह अमिय कलस लियो*; अर्थात् अछरियॉ आकाश मे उत्सगो मे अमृत कलश लिए हैं। किन्तु यहॉ 'अमिय कलस' को कवि प्रधानता देना चाहता है, इसलिए उसने कर्म को पहले रखा।

इस प्रकार वाक्य मे पदों के क्रम-विपर्यय का मुख्य कारण *अवधारण* प्रतीत होता है।

१३९. अवधारण के कारण रासो मे प्रायः मुख्य क्रिया को वाक्य में सबसे पहले रख दिया गया है। कभी-कभी संयुक्त क्रिया के दोनो अवयवो के बीच दूसरे अनेक शब्द रख दिए गये हैं, यहॉ तक कि एक अवयव वाक्य के आदि में है तो दूसरा वाक्य के अन्त में। इस प्रकार के विशिष्ट वाक्य-विन्यास के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं —

रहिउ स्वामि सिर सेहरउ (३२०·६)

= रहा स्वामी के सिर पर सेहरा।

डरे संभरे राइ संसार सारे (२५६·१)

= डरता है समर-राय (पृथ्वीराज) से ससार सारा ।

मिट्यो न जाइ कहणो (२८० २)

= मिट न जाय कहना

भयो इत्तने युद्ध अस्तमित भाणं (२६६·२)

= हुआ इतने युद्ध मे अस्तमित भानु ।

गए सुंड दंतीनु दंता उपारे (२६० १)

= गए दन्तियो के मु ड [और]दाँत उपारे ।

१४७. *मिश्र वाक्य* : रासो में वाक्य रचना प्रायः साधारण वाक्यों की ही है किन्तु कही कही एकाधिक वाक्यांशो वाले मिश्र वाक्य भी मिल जाते हैं, जैसे—

मीचु लग्गए पाइ कहे घरि आव बइट्ठो (२७६·२)

= मृत्यु पाँव लगे और कहे कि आओ घर बैठो ।

आब रहै तब लगि जियन जियन जग्गु साबुत रहै (३७६ ५)

= जब तक आब (पानी = प्रतिष्ठा) रहे तभी तक जीवन है ···

उह मारइ इहु धाइ देखि अरि दंतह कट्टइ (२०६·४)

= वहाँ मारता है, यहाँ दौड़ता है, यह देखकर शत्रु [आश्चर्य से] अपने दाँत काटते हैं ।

चतुर्थ अध्याय

शब्द-समूह

१४१. रासो के शब्द समूह मे पॉच तत्व हैं : संस्कृत तत्सम, प्राकृत-अपभ्रंश के अर्ध तत्सम, हिन्दी तद्भव, राजस्थानी देशी तथा फारसी। इनमें से सबसे कम शब्द फ़ारसी के हैं। डा० विपिन बिहारी त्रिवेदी ने वृहत् रूपान्तर के मुद्रित सस्करण से लगभग साढे चार सौ अरबी-फारसी शब्दो की सूची दी है।[1] यदि यह मान लिया जाय कि इस सूची मे वृहत् रूपान्तर के सभी फारसी शब्द आ गए हैं तब भी अनुपात की दृष्टि से यह सख्या संपूर्ण शब्द-समूह मे बहुत कम है। हमारे पाठ (लघुतम कनवज्ज समय) मे फारसी शब्दो की सख्या पचास से भी कम है। फारसी शब्दो की सम्भावना 'कनवज्ज समय' के बाद 'बडी लडाई' मे अधिक हो सकती है क्योकि उसमे पृथ्वीराज और मुहम्मद गोरी के युद्ध का वर्णन है। इसलिए 'कनवज्ज समय' के आधार पर फारसी शब्दो के अनुपात के विषय मे कुछ न कहते हुए भी इतना तो कहा ही जा सकता हैं कि रासो का शब्द-समूह मुख्यतः भारतीय आर्यभाषा का ही है। विद्यापति की 'कीर्तिलता' की तुलना मे 'पृथ्वीराज रासो' मे फारसी शब्द अधिक नही है। जिन फ़ारसी शब्दो को रासो मे अपनाया गया है, उन्हे भी हिन्दी की अपनी उच्चारण पद्धति के अनुसार तद्भव रूप दे दिया गया है। (दे० ६६)

लघुतम कनवज्ज समय मे प्राप्त फ़ारसी शब्द निम्नलिखित है —

अरब्बी	(१६०'१)	=	अरब
असमान	(२०२'२)	=	आसमान

---

१. चदवरदायी और उनका काव्य, पृ० ३१३–३४६

आब	(२७६·६)	=	आब
क्म्मान	(२६१·३)	=	कमान
गाजी	(३२५·३)	=	ग़ाज़ी
जिरह	(२२०·३)	=	ज़िरह
तखत	(१८६·४,१९८·३)	=	तख़्त
तुरक	(२७५·५)	=	तुर्क
तेग	(१८६·२)	=	तेग़
दरिया	(२०४·४)	=	दरिया
दरबार	(७९·४)	=	दरबार
नफेरी	(२२६·१)	=	नफ़ीरी
निसान	(२४०·२)	=	निशान
फवज्ज	(२०८·१)	=	फ़ौज
मीर	(२४७·२,२६८·२)	=	मीर
समसेर	(२०६·३)	=	शमशेर
सवार	(१७४·३)	=	सवार
सहनाइ	(२२५·१)	=	शहनाई
साह	(१७१, ३२५·३)	=	शाह
साहब्ब	(१०२·३)	=	साहब
साल	(१०३, २२·३)	=	साल
साबुत	(२७६·५)	=	साबित
सेहरउ	(३२०·६)	=	सेहरा
सोर	(१८६·२)	=	शोर
स्याह	(१३३·४,१७५·५)	=	स्याह
हज्जार	(२५४·१)	=	हज़ार

१४२. शेष शब्द-समूह में लगभग सोलह प्रतिशत संस्कृत-तत्सम हैं। अर्ध-तत्सम, तद्भव तथा देशी शब्दों के विषय मे ठीक ठीक कह सकना कुछ कठिन है।

किन्तु इतना निश्चित है कि ठेठ राजस्थानी के देसी शब्द भी हमारे पाठ मे अधिक नही है। रासो के मुक्क° (मुक्त°), नंष° (√नश्) जैसे कुछ क्रिया पद अवश्य हैं जो आधुनिक राजस्थानी में बहुत प्रचलित है। ऐसे शब्दों पर यथासम्भव 'शब्द कोश' के अन्तर्गत विचार किया गया है। राजस्थानी शब्द-कोश के अभाव मे इस समय यह कहना कठिन है कि अमुक शब्द ठेठ राजस्थानी है अथवा सामान्यतः देसी।

———

कनवज्ज समय

अथ राजा प्रिथीराज-प्रयाणरमाम्यते

दूहा

ग्यारह सइ[1] इक्कावनइ[2] चैत तीज रविवार।
कनवज दिख्खण[3] कारणइ[4] चालिउ[5] सिंभरिवार ॥१॥ १०२

सत[1] सुभट[2] ले[3] संमुहो[4] पंगुराय[5] ग्रिह[6] साज[7]।
कै जानइ[8] कवि[9] चंद अरु कै जानै[10] प्रिथिराज[11] ॥२॥ ७८

कवित्त

कनवजहे[1] जयचंद चल्यो[2] दिल्लेसुर[3] दिख्यन[4]।
चंद वरदिया[5] साथ[6] वहुत[7] सामंत सूर घन ॥
चाहुवान राठोर[8] जाति पुंडीर गुहिल्लय[9]।
वड गुज्जर पांवर चलै जांगरा सु हल्लय[10] ॥
कूरंभ[11] सहित भूपति चल्यो[12] उडिय[13] रेणु[14] किन्हो[15] नभो।
इक इक्कू[16] लख वीर[17] आगमइ[18] लिये[19] साथ रजपूत सो ॥३॥ १०१

दूहा

राज सगुन साम्हो[1] हुवो[2] ध्रुव[3] नरसिघ दहार।
म्रिग दक्खिण[4] खिणि[5] खिणि[6] खुरति[6] चरहिं[7] न संभरवारि ॥४॥ १८१

---

[१] १. सै २. एकानवै ३. देखन ४ कारणे ५. चल्यौ
[२] १. सित २. सामत ३. सु ४. संमुहै ५ पगुराय ६. ग्रह ७. काज ८. जानै ६ ई १० प्रयान ११ प्रथिराज
[३] १. कनवज्जह २ चल्यौ ३. दिल्लीपति ४. पिष्षन ५. बरद्दिय ६. सथ्थ ७. तथ्य ८. कूरम ६ गोर गाजी वडगुज्जर १०. जादव रा रघुवस पार पुंडीरति पष्पर ११. इत्तने १२ छुज्यौ १३. उडी १४. रेन १५. छीनौ १६. लष्ष १७. वर १८. लेषिए १६. चले
[४] १. समूह २. हुम्र ३. धुम्र ४. दच्छिन ५. छिन ६. खुरहि ७. चलहि

सुर ति[1] साय[2] सारम सवद उदय सवदला भानु।
परनि भज्ज[3] प्रतिहार ज्यॅ[4] करहि त कज्ज[5] प्रवान[6] ॥५॥ १८२

कर[1] करार[2] सज्यो[3] समुह हसि त्रिप बुझ्यो चंद।
इक रवि-मंडल भिदिहैं[4] इक्क करहि ग्रिह दंद[5] ॥६॥ १८३

त्रीय[1] दिवस त्रिय यामिनी त्रयी[1] जाम पल जिन्न[2]।
योजन इक इक[3] संचरिग प्रिथीराज संपन्न ॥७॥ २७२

भइत निसा दिस[1] मुदित तिम उडत्रिप[2] तेज विराज।
कथित[3] साथि कथहे[4] कथा सुक्ख सयन प्रिथिराज ॥८॥ ८२४

पद्धड़ी

उत्तरिय चित्त चिंता नरेस।
वत्तरहि[1] सूर सुरलोक देस॥
इक कहहिं[2] लेहि वर[3] इन्दुराज[4]।
जस जिवन[5] मरन प्रिथिराज[6] काज॥ ९॥ २९२

एक करहि सूर असनान[1] दान।
बल[2] भरहि[3] सूर सुणि[4] सुणि[5] निसान॥
सर्वरिय[6] साल वंछहि निभान[7]।
वुधु[8] वाल केम मंगइ विधान[9] ॥१०॥ २९३

---

[५] १. सुनत २. सीस ३. भाज ४ सौ ५. काज ६. प्रमान
[६] १. कल २ क्लार ३. सद्यो ४. भेदिहै ५. आनंद
[७] १. त्रयत २. उन्न ३. इकत्त
[८] १. दिन २. उडुपति ३. कथक ४. कथ्थहि
[९] १. वेतरहि २. कहत ३. बल ४. इन्द्रराज ५. जियन ७. प्रथिराज
[१०] १. अस्नान २. वर ३. भरत ४ सुनि ५. क्रन ३. सरवरिय
७. वंछहित भांन ८. मुध ९. जेम इच्छत विहान

गुरु दपत[1] उदित म्रिग[2] उदित इत्तु[3]।
झिलिमिलिग[4] तार तर[5] तिलिग[6] पत्तु[7]॥
दिखइ[8] इन्दु किरणीण[9] मंदु।
उद्दिमे[10] हीन जिमि न्रिपति[11] वंदु[12]॥११॥ २९४

धर हरिग सीत[1] सुर मंद[2] मंद।
उप्पज्यो जुध्ध आवध्ध दंद[3]॥
पह[4] फटिग घटिग सर्वरि-सरीर।
झलकंत कनक[5] दिख्खयग[6] नीर॥१२॥ २९५

न्रिप भ्रमिग कहगि[1] पहु[2] पुव्व देस।
अरिय[3] नीर[4] नीर उत्तर कहेस॥
वर[5] सिंधु[6] विधु[7] कनवज्ज राउ[8]।
तिहि[9] चढ़िउ[10] स्वर्ग[11] धुरि[12] धर्म[13] चाउ॥१३॥ २९८

रवि तुम्हइ[1] समुहउ[2] उहइ[3] इह तुम्ह[4] मग्ग समुज्झ।
भुल्लि[5] भट्टि[6] पुव्वहि[7] चल्यो[8] कहि उत्तर कनवज्ज॥१४॥ ३०१

कंचन फूल्यो[1] अर्क वन रतने[2] किरण[3] प्रहार[4]।
उये[5] कलस जइचद ग्रिह[6] संभरि सिभरिवार[7]॥१५॥ ३०२

---

[११] १. दयत २. मित ३. इत्त ४. झलमलिग ५. तरु ६. हलिग ७. पत्त ८. देखियत ९. किरनीन १०. उद्दिमहि ११. न्रपति १२. चद

[१२] १. चित्ति २. मुद्द ३. दुंद ४ पहु ५. कलस ६. दिखि गमन

[१३] १. जानि २. इह ३ अरि ४. नयर ५. हर ६. सिद्ध ७, दिद्ध ८. राव ९. तिन १०. बढ्यौ ११. अग १२. धर १३. ध्रंम

[१४] १ तमुह २. समुह ३ उद्यौ ४ है ५ भूलि ६ भट्ट ७ पुव्वह ८. चलहि

[१५] १. फूलिया २. रतनह ३. किरन ४ प्रसार ५. सुवै ६ घर ७. सभरि वार

भुजंग प्रयात

कहूँ संभरे नाथ थड्ढे[1] गयंदा।
मनो[2] दिक्खियै[3] रूव[4] ऐराव इंदा॥
कहूँ फेरहीं[5] भूप अच्छे तुरंगा।
मनो दिक्खियै[6] वाय वड्ढे कुरंगा॥१६॥ ३०५

कहूं माल[1] भूदंड सजि साह संधै[2]।
कहूं पिक्खि पायक्क बानैत बंधै[3]॥ ३०६

कहूँ विप्र ता उठि[4] ते प्रातु[5] चल्ले।
मनो देवता मग्गते[6] स्वर्ग भुल्ले॥१७॥ ३०७

कहूँ जग्गिजै पुण्य[1] ते राज काजं।
कहूं देव देवाल ते भ्रित्य साजं॥
कहूँ तापसा[3] तापते[4] ध्यान लग्गै[5]।
तिनै[6] देखते[7] रूप संसार भग्गै[8]॥१८॥ ३०८

कहूँ सोड़सा[1] राइ[2] अप्पंत दानं।
कहूँ हेम सम्मान प्रिथ्वी[3] प्रमानं[4]॥
इते चारु चारित्त संवेग[5] तीरे।
तिनै देखते पाप नट्ठै सरीरे॥१९॥ ३१०

---

[१६] १. थट्ठे २. मनु ३ दिष्षिनै ४. रूप ५ फेरिहिंत ६ प्रब्रतं
[१७] १. मल्ल २ ते रोस साधैं ३ बाधैं ४. उट्ठत ५ प्रात ६. सेवते
[१८] १. जग्य जापन्न २. त्रित्थान ३. तापसी ४. तप्प ते ५ लागै
६ तिनं ७ दिष्षियै ८ भागै

काव्यं

बंभे[1] कंड[2] कमंडले कलिमले[3] कांतिहरः[4] कः कविः[5] ।
तं तुष्टां त्रैलोक्य[6] तुंग गहनी तुं गीयसे[7] सांमवी[8] ।।
अधं[9] विष्णु अगामिनि अविज्ञले अस्टष्ट ज्वालाहवीं ।
जंजाले जग मार[10] पार करनी दरसाइ[11] सा जाह्ववी[12] ।।२०।। ३२८

त्रोटक

त्रिप थिक्कति गंगजि अंग सिता ।
मुनि मंजन नीर जि अंग हिता ।।
तट मंडल जा भमरे भमरं ।
भव संगति जे अमरे अमरं ।।२१।।

गुन ग्रंध्रव ग्रंध्रन नीति सुनी ।
दिवि भूमि पयालह दिव्व धुनी ।।
तल ताल तमालह साल वटी ।
विचि अंब गंभीर जंभीर वटी ।।२२।।

कल केलि स जंबु स निंबवरा ।
गत पाप स आपस मे सियरा ।।
सुभ वाय तरंग सुरंग धरे ।
उर हार तु मुत्तिय जामु हरै ।।२३।।

दिन दुल्लभ जा वरमं चरनं ।
भइ बंभ कमंडल आभरनं ।।
गिरि तुंग तुखार सदा धरनं ।
नर पाप विमाप न तो सरनं ।।२४।।

---

[२०] १. ब्रह्मा २. कष्ष ३. कलिक्ले ४. काताहरे ५ ककवी ६. त्रयलोक ७. संपद पदं तबाय ८. सहसनवी ९ अघ काष्ट ज्वलने हुतासन हवी अध विष्णु १०. तार ११. दरसाय १२. जाहनवी

सुर ईस सु दीस सु सादरनं।
मिलि अंभसु रंभसु सागरनं ॥
सुभ दुट्टिय मग्ग जु मग्ग।
जसु दंसन जंवुयदीप हलं।
किस मंगन जाथइ पाप मलं ॥२५॥

हर गंगे हर गंगे हर गंगे।
तमि तरल तरंगे अघ क्रितभंगे क्रितचंगे ॥
हर सिर परसंगे जटन[1] विलंगे अरधंगे।
गिरि तुंग तरगे विहरित[2] दगे जल गंगे ॥२६॥

गन गंध्रव छंदे जग जस[1] चंदे[2] मुख चंदे।
मति उच गति मंदे वरसत[3] नंदे गत वंदे[4]।
वपु अप विलसंदे जमभ्रित जंदे कह गंदे ॥२७॥ ३२६

छिति[1] मति उरमालं मुकति[2] विसालं सहसालं[3]।
सुर नर टट चालं कुसुमति लालं अलिजालं।
हिम रिम[4] प्रति पालं हरि[5]चर[6]नालं विधिवालं ॥२८॥ ३२७

दरसन रस राजं जय जुग काजं भय भाजं।
अमरच्छरि[1] करजं[2] चामर वरजं[3] स्रुव[4] साजं ॥
अमलत्तिन[5] मंजरि निय तन जंजरि चख पंजरि।
करुणा[6] रस रजरि नतम[8] पुनंजरि[9] सा संकरि ॥२९॥ ३२८

करिमल[1] हरि मंजन जनहित सज्जन[2] अरिगंजन ॥३०॥ ३२९

---

[२६] १. जटनि २ विहरति

[२७] १. जै जै २ वदे ३ दरसत ४. दंदे

[२८] १. षिति २ मुगति ३ सदकाल ४ रिति ५ हर ६ छर

[२९] १. अंमर छर २ करिज ३. वरिज ४. सुर ५. अंमर तरु ६. करुना ७. मंजरि ८. जनम ९. पुनगिरि

[३०] कलिमल २. संजन

उभय कमल[1] सोभा[2] भ्रिंग कंठाव[3] लीला।
पुनर पुहप पूजा वंदते विप्रराज[4]॥
उरिल मुतिय हारं मव्द घंटी ति वंबं[5]।
मुकति मुकति भारं[6] नंग रंग त्रिवल्ली[7]॥३१॥ ३२४

चन्द्रायणो

दिख्खिय[1] नयर[2] सुभाइ[3] न कवियन यूं[4] कहइ[5]।
है मनु अच्छि पुरंदर इंदुज इह रहइ॥
चख चंचल तन सुद्धि[6] ति सिद्धिहु[7] मनु हरिहं[8]।
कंचन करस[9] झकोलति[10] गंगह जलु भरहि[11]।३२॥ ३३५

नाराच छन्द

भरन्ति नीर सुंदरी ति पान[1] पत्त अंगुरी।
कनंक[2] बक्क[3] जज्जुरी[4] ति लग्गि कड्ढि[5] जे हरी॥३३॥ ३३६

सहज्ज[1] सोभ पंडुरी[2] जु मीन[3] चित्र ही भरी।
सकोल लोज[4] जंघया ति लीन[5] कच्छ रंभया॥३४॥ ३४०

करिव्व[1] मोभ सेसरी[2] मनो[3] जुवान[4] केसरी।
अनेक[5] छब्बि छत्तिया[6] कहूं तु[7] चंद रत्तिया[8]॥३५॥ ३४१

---

[३१] १. कनक २. सिभं ३. कठोव ४. विप्रवे कामराजं ५. त्रिवलिय गग धारा मद्धि घटीव सव्वदा ६. भीरे ७. त्रिवेनी

[३२] १. दिख्यौ २. नगर ३ सुहावो ४. इह ५. कहै ६. सुद्ध ७. सिद्धति ८. हरै ९. कलस १०. झकोरति ११. भरै

[३३] १. सु पांनि २. कनक्क ३. बक ४. जे जुरी ५. कढि

[३४] १. सुभाव २. पिंडुरी ३. मीन ४ लोल ५. सुनीज्ञ

[३५] १. कटिंत २. संसुरी ३. बनी ४. बांन ५. अनंग ६. छत्तियां ७. कहत ८. बत्तियां

दुराइ कुच्च उच्छरे[1] मनो अनग ही भरे।
हरंत[2] हार सोहए विचित्र चित्त मोहए ॥३६॥ ३४२

उठंति[1] हत्थ अंचलं[2] रुरंति[3] मुत्ति सुज्जलं[4]।
कपोल उच्च[5] उज्जले लहंति[6] मोल सिंघले ॥३७॥ ३४३

अधर[1] अद्ध रत्तए सुकील[2] कीर वद्धए[3]।
सोहंत[4] दंत आलमी[5] कहंत बीय दालमी[6] ॥३८॥ ३४४

गहग्ग[1] कंठ नासिका विनान[2] राग सासिका।
सुभाइ मुत्ति सोहए[3] दुभाइ[4] गंज लग्गए[5] ॥३९॥ ३४५

दुराइ[1] कोइ[2] लोचने प्रतक्ख काम मोचने।
अवद्ध ओर[3] भौंह ही[4] चलंत सोह[5] सोहही[6] ॥४०॥ ३४६

लिलाट लाट[1] लग्गए[2] सरद चंदु लग्गए[3] ॥४१॥ ३४७

दूहा

ढिल्लिय[1] जुहि[2] अलकै[3] लता स्रवन[4] सुनै[5] चहुवान।
मनु भुवंग साम्हो चढै कंचन खंभ प्रमान ॥४२॥ ३४९

रहहि[1] चंद मम कव्व[2] करि करहि त कव्व[3] विचार।
जि[4] तुम नयरि[5] सुंदरि कही सवि[6] दीठी[7] पनिहार[8] ॥४३॥ ३५०

---

[३६] १. उंभरे २. रुलत
[३७] १. उठंत २. अचले ३. रुलति ४. सज्जले ५. लोल ६. लहंत
[३८] १. अरद्ध २. सुक्रील ३. वत्तए ४. सुहंत ५. आलिमी ६. दालिमी
[३९] १. गहग २. विनाग ३. सोभए ४ दुभाय ५. लोभए
[४०] १. दुराय २. कोय ३ ओट ४. ए ५ सोह ६ ए
[४१] १. राज २ आड़ए ३ लाजए
[४२] १. ढिल्ली २. सुह ३. अलि की ४ श्रवन ५. सुनहु ४. चहुआन
[४३] १. रहि रहि २. गव्व ३. कवित्त ४. जे ५ नयरि ६. सह
७. दिष्षिय ८. पनिहारि

जांह नदी[1] तट पिक्खियहि[2] रूव[3] रासि वै[4] दासि।
नगर लि[5] नागर नर घरनि रहहिं अवासि[6] अवासि[6] ॥४४॥ ३५२

दंसन[1] दिनयर दुल्लही[2] निय मंडन भरतार।
सहु[3] कारन विहि निम्मयी[4] दुह कत्तिज[5] करतार ॥४५॥ ३५३

कुवलय रवि लज्जा रहनि[1] रहि भजि[2] भंग[3] सरन्नि।
सरसइ[4] सुध[5] वरनन[6] कियो दुल्लह तरुन तरन्नि[7] ॥४६॥ ३५५

छंद

पुनरजन्म[1] जेते[2] जानि जग्गं[3]।
मोहिन्नि[4] ले मुत्ति[5] वानी।
मनो धार आहार कहं[6] दुद्ध[7] तानी[8] ॥४७॥ ३५८

तिलक[1] नग[2] निरखि[3] जगि जोति जग्गी।
मनो रोहिनी रूव[4] उर इंदु[5] लग्गी॥
रूप[6] भुव[7] देखि अवरेख ढग्यो[8]।
मनो काम करि चंपि[9] उडि अप्पु लग्यो ॥४८॥ ३५९

पंगुरे श्रौन ते नैन[1] दीसं।
विचे[2] जोति सारंग निर्वात दीसं[3]॥
तेज ताटंक[4] ता[5] स्रवन[6] डोलं।
मनो अर्क राका उदै अस्त लोलं ॥४९॥ ३६०

---

[४४] १. जाहनवी २. दरस ३ रूप ४ ते ५ सु ६ अवास
[४५] १. दरसन २ दुलह ३ सुह ४ निरमई ५. कत्तरि
[४६] १. रहसि २. भांग ३ अंग ४. सरसि ५ बुद्धि ६ बूंनन ७ तरुन्न
[४७] १. पुनर्जन्म २ [रहे] ३. जग्गे ४. मोहन्न ५. मोती ६. कै ७ दूध ८ तानी
[४८] १. तिलक्क २ नगं ३. देखि ४ रूप ५ इंद ६. रुअं ७. भुअं ८ जग्यो ९. चाप
[४९] १. नयनं २ मनो ३ दीस ४ ताटक ५. ते ६. श्रोन

जलद[1] जंभीर भइ[2] मध्य[3] जोलं[4]।
दिव्य दरसी[5] तिहां ढील बोलं ॥ ३६१
अधर आरत्त तारत्त साई[6]।
चंद विय बीय[7] अरुनै बनाई ॥५०॥ ३६२

कपोलं कलंगी[1] कलिंदीव सोहं।
अलक्क[2] अरोहं प्रवाहे खिमोहं ॥
सिता[3] स्वाति छुट्टै[4] जितेहार भारं।
उभै ईस सीसं मनो गंग धारं ॥५१॥ ३६३

करं कोक नंदं न[1] कंचू समज्झं[2]।
मनो तित्थराया त्रिवल्ली अलुज्झं ॥
उप्पमे[3] पानि अंगूर[4] लभ्भं।
लज्जि[5] दुर[6] केलि कुल्ल मज्झ गभ्भं ॥५२॥ ३६४

नख निम्मल[1] दप्पन[2] भाव दीसं।
समीपं समीव[3] कियं मान रीसं ॥ ३६८
नितंबं उतंगं जुरे बे गयंदं।
मध्य[4] रिपु खीन[5] रक्खयो मयंदं ॥५३॥ ३६५

सक्ति[1] सोवन्न मोहन्न[2] थंभं।
सीत उसनेह[3] रितु दोख रंभं ॥
नारंग रंगीय[4] पींडी छछोरी।
कनक कुंडीनु[5] कुकुम्म[6] लोरी ॥५४॥ ३६६

---

[५०] १. उरज्ज २ भई ३ मज्झ ४ झोल ५ दर्शां ६ साई ७. बिंब
[५१] १. कलागी २ अलक्क ३ सितं ४. बुद
[५२] १. ति २. सनुज्झ ३ ओपमा ४. आनन ५. लाजि ६. दुरि
[५३] १. त्रिम्मल २. द्रप्पन ३. सुगीवं ४. मज्झ ५ छीन
[५४] १. व्रन्न २. सोहन्न ३. उस्नेव ४. निरंगो ५. कुंदीर ६. कुंकुम

रोहि[1] आरोहि[2] मजीर सद्दे[3]।
मंद म्रिदु तेज प्राकार[4] वद्दे ॥ ३६७
एडि इम आडंबर[5] स्रोन वानी।
फिरै कच्च रत्तान मुद्दरत[6] पानी ॥५५॥ ३६८

अंबरं[1] रत्त नीलं सु[2] पीतं।
मनो पावसे[3] धनुख[4] सुरपत्ति कीतं ॥
सुकीवं समीपं[5] न वे[6] सामि जानं।
पंग रवि दरिस अरविंद[7] मानं ॥५६॥ ३६९

दूहा

इय गय दल सुंदर[1] सुहर[2] जे[3] वरनह[4] बहुवारि[5]।
यह[6] चरित्त[7] कव[8] लगि गिनै[9] चलउ[10] संदेह[11] दुवार[12] ॥५७॥ ४४६

छन्द जाति

दिक्खियं[1] जाइ[2] संदेह सोहं[3]।
अर्क सा कोटि संपुन्न[4] दोहं ॥
मंडपै[5] जासु सोवन्न[6] गेहं।
मुत्तियं छित्त[8] दीसे न छेहं ॥५८॥ ३८८

---

[५५] १. रोह २. आरोह ३. वादे ४. परकार ५. डंबरं ६. में रत्त

[५६] १. अम्मरं २. त ३. पावसे ४. धनुक ५. समीप ६. सियं ७. अरव्यंद

[५७] १. सुदरि २. सहर ३. जं ४. बरनो ५. वार ६. इह ७. चरित्र ८. कहँ ९. कहूं १०. चलि ११. पहुपग १२. दुआर

[५८] १. दिष्षियै २. जासु ३. सेहं ४. सापुन्न ५. देह ६. मंडै ७. सोवन्न ८. छत्र

स्रोन सत एक महि महिख रत्ती।[१]
प्रात पूजंत नर नय[२] अत्ती॥
पंड भारत्थ विहु[३] वार[३] साजी।
दिख्ख[४] चहुवान कलिकार[५] गाजी॥५९॥ ३९१

तैनु[१] आकास साभो विराजै[२]
होइ जयपत्त[३] प्रिथिराज[४] राजं॥
दच्छिनै[५] अंग करि नमस्कारं[६]।
मध्य ता नयर[७] कोजइ[८] विचारं॥६०॥ ३९४

भुजगी

जे[१] लंगरी जूथ[२] तिनि[३] कै प्रसंगा।
दे[४] दिख्खिजहि[५] कोटि कोपीन नगा॥
जे[६] जूप के ... सू चोप बारी[७]।
तिके[८] उच्चरे सोह अन्नोन्न[९] पारी॥६१॥ ४२५

जकै[१] सारि[२] संभारि खोलंत[३] लख्खे।
तिके[४] दिख्खिये भूप दानिव्व[५] पख्खे॥
जिके[६] छैलु सुघट्ट[७] वेस्या सुरत्ते।
तिके[८] दव्व[९] के हीन हीनेति[१०] गत्ते॥६२॥ ४२६

---

[५९] १. अनेम २. विय ३. वैर ४. देषि ५. किलकारि
[६०] १. वैन २. ताज ३. जैपत्त ४. प्रथिराज ५. दच्छिनं ६. नमसकारं ७. नैर ८. कीजै
[६१] १. जिते २ रूप ३. दिन ४. तिते ५. दिष्षियै ६. जिते ७. आरी ८. तिते ९. आनन
[६२] १. जिते २. साधु ३. खेलत ४. तिते ५. दामत ६. जिते ७. सघाट ८. तिते ९. द्रव्य १०. हीनत

जिके[1] पासि के[2] रासि[3] लग्गे सुरूपा।
मनो मीन चाहंति[4] वग मध्य दूपा॥
नायिका दिखिव नर नैन डुल्लै।
एह सुर[5]लोक मन[6] इंदु भुल्लै[7]॥६३॥ ४२७

उच्चरे वैन निस[1] के उजग्गे।
मनो कोकला भाख संगीत लग्गे[3]॥
उडु[4] अब्बीर मिजा[5] सवारे[6]।
मनो होइ वासंत भूपाल बारे[7]॥६४॥ ४२८

कुसुम[1] सा[2] चीर सा[3] कीर सोभा।
मध्यता काम कंदलि[4] सुगोभा॥
राग छत्रीस[5] कंठै[6] करंति[7]।
वीन वाजित्र[8] हाथे[9] धरंति[10]॥६५॥ ४२९

दिक्खि[1] अभिमान[2] मिरगी[3] ठठुक्की।
मनो मेनका त्रित्त[4]ते तार[5] चुक्की॥
वर्णते[6] भाइ[7] लग्गे ति सारे।
पट्टने[8] गेह[9] दिखखे सवारे॥६६॥ ४३०

नाराच

जु[1] लाखु[2] लाखु द्रव्य[3] जासु त्रित्त[4] इंद[5] उट्ठयइ[6]
अनेक राइ जासु भाइ आवि[7] आवि[7] विट्ठयइ[8]॥

---

[६३] १ जिने २. कै ३. त्रास ४. चाहत ५. सुरह ६ सुर ७. दिष्षि
[६४] १. निसि २. उजग्गी ३. लग्गो ४ उडै ५. सेजा ६. समारे ७. द्वारे
[६५] १. कुसुम्म २ सन ३ स ४. कदली ५. छतीस ६ कंठं ७. करंतो
८. बाजित्र ९. हथ्थे १०. धरती
[६६] १. देषि २. असमान ३. म्रग्गी ४. नृत्य ५ ताल ६. वरन्नत ७. भावं
८ पट्टनं ९. ग्रेह
[६७] १ सु २. लाष ३. द्रव्य ४. नित्य ५. एक ६. उट्ठै ७. आय ८. विट्ठै

सुगंध नारि[9] सार[10] मान सा मृदग सुब्भवइ[11]।
दच्छिनी[12] समस्त रूव[13] स्याम अंग[14] लुब्भवइ[15] ॥६७॥ ४३२

जि[1] चंद[2] चार[3] धूव[4] देस सेस कंठि[5] गावही।
उपंग वीन तासु चालि[6] वालिता[7] बजावही॥
गमन्न[8] तेय[9] अंग[10] रंग रूग ए परच्चए।
वीर साउ ओड[11] अंग पक्खि[12] पत्त[13] नच्चए॥६८॥ ४३३

सबद्ध[1] सोभ[2] उद्धरे[3] ति[4] त्रिति[5] का वखानए[6]।
नरिंद इंद इत्त[7] कोरि इंद जानए[8]॥६९॥ ४३४

दूहा

अगम हट्ट पट्टन नयर रतन[1] मोति[2] मनियार[3]।
हाटक पट धनु[4] धातु[5] सहु[6] तुछ तुछ दिक्खि सवार॥७०॥ ४३५

मोतीदाम छंद

अमग्गति हट्टति पट्टन संझ।
मानो[1] द्रिग[2]हे[3] फुल्लिय[4] संझ॥
जु नख्खहि मोरित मोर सुढार[5]।
उलिचि[6] ज[7] कीच सु[8] होइ[9] अगार[10]॥७१॥ ४३६

---

९. तार १०. काल ११. सुम्भवै १२. दच्छिनं १३. रूप १४. काम १५. लुम्भवै

[६८] १. सु २. छ्द ३ चारु ४ ध्रुवक ५. कठ ६. पानि ७. वालते ८. गमन्नि ९. ते १०. अनग ११. अरद्ध १२. पक्खि १३. पात्र

[६९] १. सबद्द २. सुम्भ ३. उचरे ४. सु ५. कित्ति ६. बखानिए ७. इत्तनेसु ८. जानिए

[७०] १. रत्न २. मुत्ति ३. मनिहार ४. धन ५. धात ६. सह

[७१] १. मनो २. द्रग ३. देवल ४. फूलिय ५. ठार ६. उलिच ७. त ८. कि ९. पीक १०. उगार

सुमालय[1] पहुप[2] द्र[3]वे[4] दल चंप ।
सुसीत समीर मनो हिय[5] कंप ॥
बेलि सेवतिय गुंथिय[6] जाइ ।
दये[7] द्रबु[8] दासी[9] लेहि ढहाइ ॥७२॥ ४३७

सुबुद्धि[1] बजाज जु[2] बंचहि[3] सार ।
छुवंति[4] न बासर सुज्झहि[5] तार ॥ ४३८
जु[6] दिक्खिहि[7] नारि स कुंज पटोर ।
मनो दुज देखि न[8] लग्गहि[9] चोर[10] ॥७३॥ ४३९

जु[1] मुत्ति[2] जराउ[3] मढ़े बहु भाइ ।
सु[4] फट्टहि[5] कीर[6] कहे[7] सुन[8] गाइ ॥
जु[9] ले तनु सुक्खु अपुब्ब सु साजु[10] ।
सु[11] सेजु सुगंध रहे लपटाइ[12] ॥७४॥ ४४०

लहल्लक[1] तानुक[2] तान[3] सिपाम[4] ।
विने[5] त्रिय दिक्खिय[6] पूरन काम[7] ॥
जराउ[8] जरंत कनंक[9] कसत ।
मनो भय बासर जामिनि[10] अंत ॥७५॥ ४४१

कसिकसि हेमहि[1] कड्ढहि[2] तार ।
उवंति[3] दिनेसहि[4] कर्न[5] प्रकार ॥

---

[७२] १. मिलै २. पद्द ३ पद ४. वेदल ५. हिम ६. गुथहि ७. दियै ८. द्रब ९. दासि

[७३] १. सुबुद्धि २. सु ३. बेचहि ४. छुवंत ५. सूझहि ६ नि ७. देषहि ८. दष्षन ९. लागहि १०. थोर

[७४] १. सु २. मोति ३. जराइ ४. जु ५. कट्टहि ६ करि ७. कहै ८. सुनि ९. सु १०. रहै अपनाइ ११ सु १२. पलटइ

[७५] १. लहंलह २. तानक ३. तानति ४. वाम ५. बनी ६. दीसहि ७. कामभिराम ८. जराउ ९. कनक्क १०. जामिन

[७६] १. हेम सु २. काढ़हि ३. उगत ४. कि हसह ५. कन्न

करि क्करि[६] कंकन अंकन[७] लोभ[८]।
मनो दुज-हीन सरद्दहि सोभ[९] ॥७६॥ ४४२

जरे जुव[१] नग्ग[२] प्रकार ति लाल।
मनो ससि मज्झहि[३] तार विसाल॥ ४४२

तुलंतु[४] ज तुंज तराजन[५] जोप।
मनो घन मज्झि[६] तडित्तह ओप॥७७॥ ४४३

जरे जुय[१] नग्ग[२] सुरंग सुघाट[३]।
ति सुंदरि सोह पुवावहि[४] घाट[५]॥
दु अंगुलि नार[६] निरख्खहि हीर।
मनो फल बिंबह[७] चंपति[८] कीर॥७८॥ ४४४

नखंनख चाहिति[१] मुत्ति[२] न अंसु[३]।
मनो भख छंडि गह्यो[४] रहि[५] हंसु[६]॥
दह[७] दिसि[८] देखि[९] हयग्गय भार।
जु[१०] दिख्खत[११] चंद गयो दरबार॥७९॥ ४४५

दूहा

भाखन[१] भाख सु मिल्लहि[२] सि[३] देइ[४] सिसिर वन[५] इंद।
रथ न वै न वि रस्स अरु[६] जोध सुपंग नरिंद॥८०॥ ४५८

---

६. करकर ७. अकह ७. जोव ६. सोव

[७७] १. जिव २ प्रान ३. सभझहि ४. रुलंत ५. जुग्गतत राजन ६. मद्धि

[७८] १. जिव २. नग ३. सुघाटि ४. उवावति ५. पाट ६. जोर ७. बिबहि ८. चंपहि

[७९] १. चाहति २. मुत्तिय ३. अंस ४. रह्यो ५. गहि ६. हंस ७. दसो ८. दिसि ६. पूरि १०. सु ११. पुच्छत

[८०] १. भाषनि २. मिलिय ३. दिसि ४. दई ५. वनि ६. नव नव रस अरु सघन सघ।

निसि नौबति पल[1] प्रात मिलि हय गय दिख्ख्यो[2] साज।
विरचि[3] सुद्दह[4] करिवरु[5] गह्यो[6] किनहि कह्यो[7] प्रिथिराज ॥८१॥ ४०६

कहे[1] चंद दंदु[2]न करहु रे सामंत कुमार।
तिन्नि[3] लख्ख निसि दिन रहंहि[4] इह जैचंद दुआर ॥८२॥ ४६१

मुडिल्ल

पुच्छत[1] चन्द गयो[2] दरबारह।
हेजम जह[3] रघुबंस-कुमारह ॥
जिहि हर[4] सिद्धि सदा[5] वरु[6] पायो।
सो[8] कविराज[9] ढिल्ली[10] हुंति[11] आयो[12] ॥८३॥ ४६४

दूहा

सुनित[1] हेत हेजम उठित[2] दिखत चंद बरदाइ।
न्रिप[3] अग्गे[4] गुदरन गयो[5] जिह[6] पंगुर[7] न्रिर[8] आहि ॥८४॥ ४७८

वस्तु

तब सु हेजम तवसु हेजम जंति करि जोड़ि[1]।
सीसु नाइ दस वार सेन[2] छत्तपति[3] .. .. ॥
सकल बंध संधन[4] नयन चकित चित्त दिसि दिस गरुठ्ठो[5]।
तब सु कियो[6] परनाम तिहि वरु[7] करि तिहि[8] प्रतिहार।
जिहि प्रसन्न सरसइ[9] कहहि[10] सु कवि चंद दरबार ॥८५॥ ४८२

---

[८१] १ मिलि २. देखिय ३. विचरि ४. सुभर ५ करिवर ६. गहिउ ७. कहिय
[८२] १ कहहि २. दद ३. तीन ४ रहै
[८३] १. पुच्छत २. गयौ ३ जहाँ ४ हरे ५. पास ६. वर ७. पायौ ८. सु
९. कविचद १०. दिल्लिय ११. तै १२. आयौ
[८४] १. सुनत २. उठिग ३. न्रप ४ आगे ५. गयौ ६. जहाँ ७ पगु ८. न्रप
[८५] १. जोरि २. सेत ३. छत्रपति ४. सथ्थन ५. गरिट्ठो ६ कियौ ७. वर
८ राय ९. ९. सरसति १०. कहै

चन्द्रायणो

आइस[१] जो गुनियन तन चाह्यो[२]।
तीन[३] प्रनाम[४] करिउ[५] सिर नायो[६]॥
किधौ[७] डींभ[८] कवि कव्व प्रमानिय[९]।
सरसइ[१०] कव उच्चारहि[११] जानिय[१२] ॥८६॥ ४९०

अडिल्ल

ति कवि आइ[१] कवियहि[२] संपत्ते।
नव-रस भाख ज पुच्छन[३] तत्ते॥
कवि अनेक बहु बुधि गुन रत्ते।
कहि न एक कवि चन्द समत्ते ॥८७॥ ४९८

षट् भाषा काव्यं

अंभोरुहमानंद जोइ[१] लरि सो दाडिम्म लो बीय लो।
लोयंदे चलु चालु आरु कज्जऊ विंबाय कीयो गहो॥
के[२] सीरी के[२] साहि[३] बे यन[४] रसो विक्किस[५]की नागवी।
इंदो मध्य सु विद्यमान विहना ए षष्ठ भासा छंदो ॥८८॥ ५०४

ते[१] कवि आइ[२] कवियहि संपत्तउ[४]।
गुण[५] व्याकरण[६] करहि रस रत्तंउ॥
थकि प्रवाह गंगामुख मंती[७]।
सुर नर स्रवण मडि रहि[८] चंती[९] ॥८९॥ ४९७

---

[८६] १. आयस २. चाह्यौ ३ तिन ४. परनाम ५. कियौ ६. नायौ ७. कंधौ ८. डिभ ९. परवानिय १०. सरसे ११. उच्चारहु १२. बानी
[८७] १. आय २. पहि ३. पुच्छहि
[८८] १. लोइ २. कै ३. साइ ४. वैनिय ५. चीकीमि
[८९] १. ति २. आय ३. पहि ४. संपत्ते ५. गुरु ६. व्याक्रन ७. सरसत्ती ८. रहै ९. बत्ती

गुन उच्चार चारि[1] तब[2] किन्हो[3]।
जउ[4] भूखै[5] सक्कर पय दिन्हो[6]॥
कवि देखत कवि को मन रत्तउ[7]।
न्याइ[8] नयरि[9] कनवज्जि सपुत्तउ[10]॥९०॥ ५०५

कवि अंगह[1] अगीक्रित हीना[2]।
हेम विभा [सिघासन दीना][3]॥
अहो चन्द वरदायि कहूं हूँ[4]।
कनवज्जह दिख्खन आय हूँ॥९१॥ ५१३

जे सरसइ[1] जवनहु[2] त्रिप संचउ[3]।
गजपति गरुव गेह[4] किमि गंजहु॥
किनि गुनि पंगुराइ मन रंजहु॥९२॥
जो सरसइ जानहु वर रंचउ[1]।
तो अद्रिस्ट[2] वर नहि त्रिप संचउ[3]॥९३॥ ५१०

कवितु

सघन पत्त घन थट्ट बेलि पसरी प्रवाल वर।
तहां कमल उन्नयो मूल बिन रह्यो फुल्ल धर॥
कंदल थंभ तिह अहहि सिघ तिहि रह्यो मंडि घरि।
तिहि गज संक न करइ निरखि रिखि रहि उटंकि अरि॥
जैचंद राय सुज्जान गिरि राठोर राय गुन जानि है।
कीर चुनहि मुगताफलहि इह अप्पुव्व को मानिहै॥९४॥

---

[९०] १. चार २. तन ३. कीनौ ४. जनु ५. भुष्यै ६. दीनौ ७. रत्तौ ८. न्याय ९. नयर १०. सपत्तौ
[९१] १. एकह २. कीनो ३ दीनौ ४. कहावहु ५ आवहु
[९२] १. सरसइ २. जानौ ३. चाव ४. ग्रेह ५ मन
[९३] १. रंचौ २. अदिष्ट ३ सचौ

काव्य

किं सांस[1] चुवरेण[2] सेतुस तुसा[3] किं किं त अंदोलिता।
वाला अर्क समान जामतेज अमीलि मोलिता॥
शस्त्रे शास्त्र समस्त खत्त[4] ढहियं सिंधू प्रजा ती[5] खलं।
कंठे हारु रुलंति आंविकि[6] समैं[7] प्रिथिराज हालाहलं॥९५॥ ५२४

दूहा

छत्र सरद[1] जवजन बहुल मह्ल वंस विधि नंद।
सत[2] सहस्त्र[3] संखध्वनिअ[4] महल थानि जयचंद॥९६॥ ५२७
मंगल बुध गुरु सुक्र सनि[1] सकल सूर उड्डु दिट्ठ।
आठ[2] पत्त धुव[3] तम[4] तिमइ[5] सुभ जइचंद[6] वइट्ठ॥९७॥ ५४६

पद्धरि

आसने[1] सूर वड्ढे[2] सनाहं।
जीति छिति राइ किय नासुराहं॥
धम्म[4] दिगपाल धर धरनि खंडं।
धरहि सिर सोभ दुति कनक दंडं॥९८॥ ५७१
जिनै सज्जिगे[1] सिंधु गाही[2] सुपंगं[3]।
तिमिर तजि तेजु भंज्यो[4] कुरंगं[5]॥
जिने हेम परवत्त ते सवे[6] ढाहे।
एक दिन आठ[7] सुरतान साहे॥९९॥ ५७२

---

[९५] १. सीसं २. चमरायते ३. सित छत्रं ४. षित्रि ५. प्रयातं ६. आनक ७. समं
[९६] १. सहस २. एक ३. सहस ४. सषहधनी
[९७] १. सवि २. आत ३. धुअ ४. जिम ५. तपै ६. जयचंद
[९८] १. आसनैं २. ठट्ठे ३. एक ४. ध्रम्म ५. धरै
[९९] १. साजतें २. गाहे ३. सुपंगा ४. भाजै ५. कुरगा ६. सव्व ७ अट्ठ

जंपियो[१] संच जो चंड[२] चंडं।
थप्पियं जाइ तिरहुत्ति[३] पिंडं ॥
दच्छिनी देस अप्पो[४] विचारं[५]।
उत्तरथो सेत वंधे[६] पहारं ॥१००॥ ५७३
कर्न डाहाल दुहुं[१] बान बंध्यो[२]।
सिंधु चालुक्क कै[३] वार खेध्यो ॥
तीन दिन जुद्ध भरि [भूमि][४] रुडं।
तोरि ठिल्लंग[५] गोवल्ल[६] कुंड ॥१०१॥ ५७४
छंडियो बंधि इक गुंड जीरा।
लिये[१] वैरा गिरि[२] सव्व हीरा ॥
गाजने[३] सूर साहाब साही।
सेवते बंध निसुरत्त पाई[४] ॥१०२॥ ५७५
भूलि भल्लि[१] छने[२] जाइ[३] रोरे।
रोस कै सास[४] दरिया हिलोरे ॥
बंधि खुरसान किय मीर वंदा।
राव[५] राठोर विजपाल नंदा ॥१०३॥ ५७६
वंस छत्तीस आवै[१] हकारे।
एक चहुवान प्रिथिराज[२] टारे ॥१०४॥ ५७७

दूहा

सुनि[१] न्रिपति[२] रिपु कै[३] सबद तामस[४] नयन सुरत्त।
दरि[५] दलिद्द[६] मंगन मुखह[७] को मेट्टै[८] विधि पत्त ॥१०५॥ ५७८

---

[१००] १. जंपिय २. रुद ३. तिरहूत ४. आपै ५ विचारै ६. बध
[१०१] १. दुग्र २ बेध्यौ ३. कय ४. भूमि ५ तिल्लग ६. गोवाल
[१०२] १. लिद्ध २. वैरागरैं ३. गज्जने ४ माही
[१०३] १. भष्षी २ षनं ३. जोव ४. सोस ५. राय
[१०४] १. आवैं २. षुमान
[१०५] १. सुनत २. न्रपति ३. कौ ४ तन मन ५. दिय ६. दरिद्र ७. घरह ८. मेटै

आदरु किउ[१] न्रिप तास को कह्यो चंद कवि आउ।
दिल्लीपति जिहि विधि रहइ सु वत कहे समुझाउ॥१०६॥ ५८८

कितकु सूर संभरधनी कितकु देस दल बंध।
कितोकु[१] रन हथ[२] अग्गलउ[३] पुच्छइ[४] राउ सुचंद॥१०७॥ ६४८

सूर जिसो गयनह उवै दल बल मरनां[१] आसि।
जब लगि अरि न्रिप वज्जवै[२] तब लगि देइ[३] पंचास॥१०८॥ ६५०

मुकुट बंध सब भूप है लच्छिन सर्व[१] सुजुत्त[२]।
वरन वइ[३] उ इनिहरि[४] इह[५] ज्यूं चहुवान संउत्त॥१०९॥ ६५३

कवितु

लच्छन सहित बत्तीस वरस छत्रीस[१] मास छह।
इन दुज्जन संग्रहे[२] राहु जिम चंद सूर गह॥
उव[३] छुट्टे महि दान दुजन छुट्टे ति दंड वहि[४]।
इक्क[५] गहहि गिरि कंद इक्क[५] अनुसरहि चरन गहि[६]॥
चहुंवान चतुर चहुं दिसहि[७] बलि हिंदुवान सव हत्थ जिहि।
इम जंपइ चंदु वरद्दिया प्रिथीराज अनुहार[८] इहि॥११०॥ ६५४

दूहा

दिक्खिय वाइ तु थिर नयन करि कनवज्ज नरिंद।
नयन नयन वंकुरि[१] परइ[२] मनु [थह दोइ][३] सइंद॥१११॥ ६५७

---

[१०६] १. किय २. कहिग
[१०७] १. कितक २. हथ्थ २. अग्गरौ ४. बूझ्यौ
[१०८] १. मारन २. उट्ठवै ३. देय
[१०९] १. सब २. मंजुत्त ३. कौन ४ उनहार ५. कहि
[११०] १. छत्तीस २. सग्रहत ३. एक ४. भर ५. एक ६. परि
७. चावदिसहि ८. अनुहारि
[१११] अंकुरि २ परिय ३. थह दोइ

बे[1] त्रियन पुरख[2] रस परस बिनु उठिग राय[3] सुरिसान[4]।
धवलग्रिह[5] त्रिय अनुसरिग रिपु मग्गन सूं पान ॥११२॥ ६८७

दूहा

... . अत्थ[1]।
इह सुंदरि एकइ समइ चली सुगंधनि कत्थ ॥११३॥ ६९०

दूहा

ता रनवास की दासी सुगंधादिक घनसार म्रिगमद ।
हेम-संपुट सुरलोक वहु चलि अच्छरी समान ॥११४॥ ६९१

नाराच छंद उलाला जाति

विहंग भंग जा[1] पुरा[2] चलंति[3] सोभ नूपुरा[4]।
अनेक भंति सादुरं असाढ सोर दादुरं ॥११५॥ ६९२

सुधा समान मुक्कही उठति तिंदु संमुही।
नितंब तुंग स्याम के मनो सयन्न काम के ॥११६॥ ६९३

लवन्न भ्रिंग गुंजही सुगंध गंध हत्थही[1]।
वपंति डोर कंकने... . ...। ॥११७॥६९६

[धनुक्क भौंह अंकुरे ...] मनो नयन्न वंकुरे।
श्रवन्न मुत्ति तारए अलक्क डंक[1] आरए ॥११८॥ ७११

सबह सोब[1] जो खुले रहित्त[2] लज्ज कोकिले।
अनेक वर्न[3] जो कहे ते जम्म अत मोंजहे ॥११९॥ ७१२

---

[११२] १. जे २. पुरिष ३. राइ ४. निसान ५. ग्रह

[११३] १. तिन कइ अथिथ सु हथ्थ किय जे राजन ग्रइ अच्छि।

[११४] दोहा।

[११५] १ जो २. पुरं ३. चलंत ४ नूपुर

[११७] १. पुजही

[११८] १. वंक

[११९] १. सोभ २ रहंत ३. वृन्न ४. ना

अडिल्ल

चाहुवान[१] दासिय रिसि[२] कंपिय[३]।
पुर राठोर[४] रहइ[५] दिसि नंखिय॥
विजर[६] वासु पुरिखन कहि अंखिय[७]।
प्रिथीराज देखत सिर ढंकिय॥१२०॥ ७१४

दूहा

भय[१] चकि भूप अनूप सह पुरख जु कहि प्रिथिराज।
सुमनु[२] भट्ट सत्थह अछै जिह[३] करंति त्रिय[४] लाज॥१२१॥ ७१७
एक कहिय[१] विट्ठिय[२] सुमट इह न सत्थि प्रिथिराज।
इनि...... .... जिह करंति त्रिय लाज॥१२२॥ ७२२
अप्पिग[१] पानु समानु[२] करि नहि रक्खूं कवि तोहि[३]।
जु कुछु[४] इच्छ करि मंगिहइ[५] कल्लि समप्पूं तोहि[६]॥१२३॥ ७२३
हक्कारिउ रखत[१] त्रिपति कुंकुम कलस सुवास।
पच्छिम दिसि जैचंद पुर तिहि रक्खहु तिय वास॥१२४॥ ७२४
आइस[१] राइन[२] सत्थ चलि असी[३] सहस[४] भर[५]सत्थ।
भिर मुम्मिहि तिल्लन कहइ[६] मेर तरिअ मुनि वत्थ॥१२५॥ ७२५
सकल सूर सावंत[१] घन मधि कविता किय चंदु।
प्रिथीराज सिघासनहि[२] पुर रप[३] ऊयो इंदु॥१२६॥ ७६०

---

[१२०] १. चहुआनह २. सिर ३. कपिय ४. रट्ठोर ५. रही ६. विगर ७. अकिय
[१२१] १. भै २. सुमति ३. जिहि ४. तिय
[१२२] १. कहै २. बेठै
[१२३] १. आप्प २. सनमान ३. गोय ४. कछु ५. मंगिहौ ६. सोय
[१२४] १. रावन
[१२५] १. आयस २. रावन ३. अद्भुत ४. एक ५. भट ६. अग्ग राह सो संचरै
[१२६] १. सामत २. सिघासनह ३. पूरिपूरन

भयत[1] निमा दिसि मुदित वनु उड़ त्रिप[2] तेज विराज।
कथिक[3] सत्य कथहि[4] त कथा सुक्ख सयन प्रिथिराज ॥१२७॥ ८२४

दूहा

म्रिदु म्रिदग धुनि संचरिय अलिय अलाप सुध विंद[1]।
तार[2] त्रिगामउ पमर सुर अउसर[4] पंग नरिंद ॥१२८॥ ८३२
जलन[1] दीप दिय अगर रस फिरि घनसार तमोर।
जमिनि[2] कपट अन महिल[3] मुख सरद अव्भ ससि कोर ॥१२९॥ ८३४
तत्तु[1] धरम्मह मत्तु[2] जा[3] हरत[4] ह काम सु वित्तु[5]।
काम विरुद्ध न विधि[6] कियो[7] नित्त[8] नितंबिनि नित्तु ॥१३०॥ ८३५
पुप्फजति[1] सिार मंडि प्रभु गुरु लग्गी फिरि वाइ।
तरुनि तार सुर धरिय चत धरिन[2] निरखिखय चाइ ॥१३१॥ ८४५

नाराच छंद

ततंग [थेइ तत्तथेइ तत्तथे] सुमंडियं।
तथुंग थुंग थै[1] विरान काम डंडियं[2]॥ ८४९
सरगिन मान धनि धा धनिध्धनी निरक्खियं।
भयनि जति अग तनु[3] अगु[4] अगु लक्खियं ॥१३२॥
कलक्कला[1] सुनंत भेद भेदन मन मतं।
रनकि झंकि नोपुर[2] बुलंति ते झनं झनं॥ ८५०
घमंड धार घुंटका[3] भवति[4] भेख लेखयो।
तुटिन्त खुल क्रम पास पीत स्याह रेखयो ॥१३३॥

---

[१२७] १. मदित २ पति ३ कथक ४. कत्थहि
[१२८] १. व्यद २ ताल ३. त्रिग्गम ४. ओसर
[१२९] १. ज्वलन २. जमनि ३ महल
[१३०] १. तात २. मत ३. इह ४ रत्तह ५. चित्त ६. निविद्ध ७. किय ८. नृत्य
[१३१] १. पुहपजलि २. धरनि
[१३२] १. थुगथै २. मांडयं ३ मनु
[१३३] १. कलकलं २. नूपुर ३. घंटिका ४. भमंति

जातिग्गति[1] स्सु तारया करिस्सु[2] भेद कट्टरी।
कुसम्ह[3] सार आवधं[4] कुसम्ह[5] उड्डु[5] नट्टरी॥ ८५१
अरप्प रंभ भेख रेख सेखफ[6] करक्कसं।
तिरप्प तिप्प सिक्खयो सुदेस दक्खिनं दिसं॥१३४॥

दिसा दिसंग गीतने धरंति सासनं धमं[1]।
जमाय जोग कट्टरी त्रिविद्धनं पसंचनं[2]॥१३५॥ ८५२

उलट्टि पट्टि नट्टनं[1] फिरक्कि चक्कि चाहनं।
निरत्त तै निरक्खि जानु वंभ जुत्त वाहनं॥ ८५५
विसेस देस धुप्पदं वदं वदं न राजयो।
सुचक्र भेख चक्रवर्ति[2] वालिगा[3] विसाजयो॥१३६॥

उरद्ध मुद्ध मडली अरोह रोह चालिनं।
ग्रिहं न[1] मुत्ति वत्तिमा[2]मनो मराल मौलिनं॥ ८५६
प्रवीन वानि अंधरी[3] मनि द्रम दु[4] कुंडली।
प्रतच्छ[5] भेख यो धर्‌यो सु भूमि लोअ[6] खंडली॥१३७॥

तलत्तलस्सु तालिना म्रिदंग धंकने घने।
अपा अपा भनंति भेजु पंति जानयो जने॥ ८५७
अलक्ख लक्ख [लक्ख नेनयं] वैन भूखनं।
नरे जुरे नरिंद मास मे ब[1] काम मुक्खनं॥१३८॥ ८५८

---

[१३४] १. लजति गत्ति २. कटिस्सु ३. कुसम्म ४. आउधं ५. अभेड ६. सेखरं

[१३५] १. सुरति सग गातनी धरति सासने धुने २. नच सपने

[१३६] १. नाचनौ २. चक्र वृत्ति ३. ता

[१३७] १. ग्रहति २ दुत्तिमा ३. उद्धरी ४. मुनीद्र मुद्र ५. प्रतष्यि ६. लोइ षंडली

[१३८] १. मेस

दूहा

जाम एक छनि[1] रास घटि सत्तिहु[2] सत्ति न वारि।
किहु[3] कामिनी मुख रति समर त्रिप निय निंद विसारि[4] ॥१३९॥ ८५६

साटक

सुक्खं सुक्ख म्रिदंग तार[1] जयने[2] रागं कला कोकिलं[3]।
कंठी कंठ सुवासिनं[4] मनयितं[5] कामंकला पोखनं ॥
उभ्री[6] रंभ पिता[7] गुना हरिहरी सुभ्रीय[8] चवना[9] पता।
ए[10] सह सुक्ख सुखाइ तार सहिता जैराय रात्र्यं[11] गता ॥१४०॥ ८६१

काव्य

कांता[1] भार पुरा पुनर मद गजं साखा न गंडस्थलं।
उच्छं[2] तुच्छ तुरा स पुष्र कानलं कलि कुंभ निद्धादलं[3] ॥
मधुरे सा य स काय कुंभर सिता गुंजार गुंजारया[4]।
तरुने प्रान लटापट प्पगयरा जइ राय संप्राप्तितं[5] ॥१४१॥ ८६२

दूहा

प्राति राउ संपरपतिग[1] जह[2] दर देव अनूप।
सयल करहिं[3] दरबार जखि सात[4] सहस जिह भूप ॥१४२॥ ८६५
निस बाजव[1] गंगा नदिव ···· ···मोह।
चढ़ित[2] सुखासन संमुहो जहि[3] सामंत समोह ॥१४३॥ ८८७

---

[१३९] १. छिन २. सत्तमि ३. कहु ४ निवारि
[१४०] १. तल्ल २. जवन ३. कोकन ४. सुभासने ५. समजितं ६. उरभी ७. कि ता ८. सुरभीय ९. पवना १०. एवं ११. रात्रं
[१४१] १. कांती २. तुच्छं ३. निंदा ४. गुंजारियं ५. रात्रं गता साम्प्रतं
[१४२] १. संप्रापतिग २. जइ ३. सयन ४ सत्त
[१४३] १ बज्जहिं २. चढ़त ३. जहँ

दस[१] हत्थिय मुत्तिय सयन[२] सात तुरंग पट भाइ।
द्रव्व दरिस[३] बहु संग लिय भट्ट समप्पन जाइ ॥१४४॥ ६००

कवित्त

गयो राज[१] मिल्लान[२] चंद वरदिह[३] ह[४] समप्पन।
दिक्खि[४] सिंघासन ठयो इह जु [ई] दुजन ॥
बहुत कियउ आलापु आउ कनवज्ज मुकट मनि।
एतु[५] दिल्लीसर दत्त दियो तहि गिन्यो तुज्झ गनि ॥
थिर रहै थवाइस विज्जु कर छंडि सि करहि।
... ... पान देहि दिढ़ हत्थ गहि ॥१४५॥ ६१३

दूहा

सुनि तमूल सा पट्ठि करि वर उट्ठिय डिठि बंक।
मनो मोहनि[१] सु मन मलिग[२] मनु नव उदित मयंक ॥१४६॥ ६१६

आर्या

तुलसाइ[१] त्रिप्र हस्तेषु विभूतिः वर[२] योगिनां।
चडिय पुत्त तवोरह[३] त्रीणि[४] देयानि सादरं ॥१४७॥ ६२१

दूहा

भुव[१] वंकिय[२] करि[३] पंगु[४] त्रिप अप्पिग हत्थ तंबोल[६]।
मनहु वज्जपति वज्ज गहि सह अप्पिया सजोर ॥१४८॥ ६२७

---

[१४४] १. तीस २. सघन ३. बदर

[१४५] १. रावन २. मेल्हान ३. वरदिया ४. देषि ५. इह

[१४६] १. रोहिनि २. मिलिग

[१४७] १. तुलसीयं २. श्रिय ३. तांबूलं ४. त्रयो

[१४८] १. भुअ २. बकी ३. किय ४. पंग ५. अप्पि ६. तंमोर

कवितु

पहिचान्यो[1] जैचंदु[2] इहति दिल्लीसर[3] लक्ख्यौ।
नहि न चंद उनिहारि दुसहु दारुन अति पिक्ख्यौ[4]॥
करि संथिअ[5] करि वारु कहै कनवज्ज मुकट मनि।
हय गय दल[6] पक्खरउ[7] भाजि प्रिथिराज[8] जाइ जनि[9]॥
इत्तनउ[10] कहत भुजपति[11] उठ्यो सुनि नरिंद किन्हों[12] न भउ[13]।
सावंत[14] सूर हसि राज सूं[15] कहहि[16] भला[17] रजपूत सउ॥१४६॥ ९७१

दूहा

सुनहु सव्व सामत इह कहै त्रिपति प्रिथिराज।
जउ[1] अच्छहु खिन खित्त महि दक्खिन[2] नयर[3] विराज॥१५०॥ १०४७

बुल्लिय[1] कन्ह आयान[2] त्रिप मति मंडन समरत्थ।
जउ मुक्कहि सत सत्थ अनु[3] तो कत लीन्हसि[4] सत्थ॥१५१॥ १०५०

जउ मुक्कउँ[1] सत सत्थिअनु तो संभरि कुल लाज[2]।
दक्खिन[3] करि कनवज्ज कहुँ[4] पुनि संमुह मरनाज॥१५२॥ १०५१

भय[1] टामक दिसि विदिसि हुइ[2] लोह[3] पखर तिह राउ।
मनु अकाल तिडिय[4] सघन चल्या तु छूटि प्रवाह[5]॥१५३॥ १०७८

---

[१४९] १. पहचान्यौ २. जयचंद ३. दिल्लेसुर ४. पिष्ष्यौ ५. संध्यौ ६. पष्षरहु ७. प्रथिराज ८. जिन ९ इत्तनौ १०. भुअपति ११. किन्नो १२. भौ १३ सामत १४. सो १५. कहै १६. भलौ

[१५०] १. जौ २. देषौं ३. नगर

[१५१] १. बोल्यौ २. अयान ३ सत्थियन ४. लायौ

[१५२] १. मुक्कौं २. लज्ज ३. दिष्षन ४. को ५, नज्ज

[१५३] १. भौ २. कहु ३. बहु ४. राव ५. टिड्डिय ६. प्रवाह

भुजंग प्रयात

प्रवासी त[1] तज्जी[2] न लज्जी[3] अहारे।
मनो रव्वि रत्थे जे आने प्रहारे॥
तिके स्यामि[4] संग्राम झेले दुधारे।
तिनै उप्पमा[5] क्यूं[6] व दीजइ विकारे॥ १५४॥ १०७९

तिनै साहियै वग्ग गड्ढे जि लारा।
मनो आवधे हत्थि वज्जंति सारा[1]॥
छुट्टियं तेजि[2] वेठे जि कारा।
ते सज्जए सूर सव्वे तुखारा॥ १५५॥ १०८०

पक्खरे[1] प्रान जे त्राहु चारा।
जके कंध नामे नहीं लौह झारा॥
.... नहीं भूमि भारा।
टुट्टियं जानु आकास तारा॥ १५६॥ १०८१

घट्ट[1] ऊघट्ट[2] फंदै निनारा।
कंठ झुंल्लंति गज गाह भारा॥
लोह लाहोर वज्जइ तुरक्की।
तिनै धावतै दीस न घुरी फुरक्की[3]॥ १५७॥ १०८२

पच्छमी सिंध जाने न थक्की।
तिनै साथि सिंधी चले जक्कि[1] जक्की॥ १५८॥ १०८३

---

[१५४] १. प्रवाहंत २. ताजी ३. लाजी ४. स्वामि ५. ओपमा ६. क्यौं
[१५५] १. तारा २. तेज
[१५६] १. पाषरे
[१५७] १. घाट २. औघट्ट ३. खुरक्की
[१५८] १. नाव

पमः[1] पंखी न अंखी मनक्खी[2]।
जे आस कढ्ढे नहीं चंपि भक्खी ॥
राग वरणौ नहीं सुध उरक्की।
मनो उप्परे[3] ओस[4] आवै घुरक्की ॥ १५९ ॥ १०८३

अरब्बी विदेशी लरै लोह लच्छी।
गयौ को कंठ कंठील कच्छी ॥
धराखित[1] खुदंतं [रुदंत] बाजी।
दिक्खियै इक्कु इक्कंत[2] ताजी ॥ १६० ॥ १०८४

पंडुए पंगुरे राइ सज्जे[1]।
दुअण[2] वल[3] वच्छ[4] दिक्खंत लज्जै ॥
इहे अपुव्व कवि चंद पिक्ख्यो।
तरनि दुज-राज समतेज दिक्ख्यो ॥ १६१ ॥ १०८५

दूहा

करिग देव दिख्खन[1] नयर गंग तरंग[2] अकुल्ल[3]।
जल छंडहि[4] अच्छहि करइ[5] मीन चरित्तनु भुल्ल[6] ॥१६२॥ ११३६

अडिल्ल

भुल्लयो[1] पुहवि नरिंद त जुद्ध विनुद्ध[2] सह।
मुक्के[3] मीननु मुत्ति लहंतु जु लच्छि[4] दह ॥
हय[5] तुछ तमोर सरंत जु कंठ लह।
पंक प्रवेसह संत भरंत जु गंग मह ॥१६३॥ ११४४

---

[१५९] १. पवंनं २. मनक्की ३. ओपमा ४. उच
[१६०] १. १. खेत २. तत्तार
[१६१] १. साजे २. दुअन ३. दल ४. तुच्छ
[१६२] १. दच्छिन २. तरंगह ३. कूल ४. छुटै ५. करि ६. भूल
[१६३] १. भूलौ २. विरुद्ध ३. नंषहि ४. लष्ष ५. होइ

दूहा

भुल्यो[1] रंग सु मीन न्रिप पंगु चढ्यो हय पुट्ठि।
सुनि सुंदरि वर वज्जने चढी अवासन[2] उट्ठि ॥१६४॥ ११४७
दिक्खति[1] सुंदरि दर[2] बलनि चमकि चढंति अवास।
नर कि देउ[3] किधुं[4] कामहर गंग ह्मंत[5] अयास[6] ॥१६५॥ ११४८
इक्क कहै दुर[1] देव है इक कह इंदु फनिंद।
इक्क कहें असि[2] कोटि नर इहु[3] प्रिथिराज नरिंद ॥१६६॥ ११५८
सुनि वर सुंदर[1] उभय हुव[2] स्वेद कंप सुरभग।
मनु कमलिनि कल सम हरिअ भ्रित करने तन रग ॥१६७॥ ११५९
[सुनि रव प्रिय प्रिथिराज कउ उभद रोम तिन अंग।
सेद कंप सुरभंग भयउ सपत भाइ तिहि अग ॥]
गुरुजन गुरु वंदिअ नहि[1] सुंदरि।
राजपुत्ति पुच्छे कहुँ सुंदरि[2] ॥
अम्महि पुच्छन दूत पठावहि।
गुन[3] अच्छइ पच्छे करु आवहि ॥१६८॥ ११६८

अडिल्ल

पंगुराइ सा पुत्ति[1] सु मुत्तिय थाज[2] भरि।
जुत्तो[3] जो प्रिथिराज न पूछहि वीति[4] फिरि ॥
जरु इनि छिनि[5] सवनि तव्व विचारु करि।
है अतु मोहि न्रितात्रत[6] लेउ मजीव वरि ॥१६९॥ ११७१

---

[१६४] १. भुल्यौ २. अपुब्ब
[१६५] १. देषत २. दल ३. देव ४. किधों ५. गगह संत ६. निवास
[१६६] १. दनु २. अस ३. इक
[१६७] १. सुंदरि २. तन
[१६८] १. निंदरियं २. दुरि दुरि ३. दुत्ति ४. कुन
[१६९] १. पुत्तिय २. थाल ३. जौ हिय ४. तोहि ५. लच्छिन ६. न्रप जीव

सुंदरि आइस धाइ विचारि त नांव लिय[१]।
जो[२] जल गंग हिलोर प्रतीत[३] प्रसंगु लिय॥
कमल ति कोमल हस्त[४] केलि कुलि[५] अंजुलिय।
मनो दान दुज अंध समप्पति[६] अंजुलिय॥१७०॥ ११७४

वृद्ध नाराच

अपंति अंजुलीय दान जान सोभ लग्गए।
मनो अनंग रंग अंग रंभ इंदु पुज्जए॥
जु[१] पानि वारि वाहु थक्कि थारि[२] मुत्ति वित्तए।
पुनप्पि हत्थ कंठ तोरि पोति पुज्ज आपए॥१७१॥ ११७७

निरक्खि[१] वैन देखि नैन ता त्रिपत्ति चाहियं।
तरप्प दासि पासि पंक[३] संकि जानि साहियं[४]॥१७२॥ ११७८

अनेक संगि रंगि रूप जूप [जानि] सुंदरी।
उछ्रग जान गंग मज्झि[१] सुग[२] खत्ति[३] अच्छरी॥ ११७९
ति अच्छरी नरिंद नाह दासि गेह[४] पंगुरे।
तासु पुत्ति जम्म छोडि ढिल्लिनाथ आचरे॥१७३॥

सावंत[१] सूर चाहुवान मान[२] एम जानए।
करन्नु[३] केहरीन पीन[४] इंद मन्न थानए॥ ११८०
प्रतक्ख हीर जुद्ध धार[५] जे सवार[६] संचही।
चरन्न[७] प्रान मान नोच लंतु देतु गंठही॥१७४॥ ११८१

---

[१७०] १. बुल्लइय २. ज्यौ ३. प्रथीति ४. तिय ५. पानि ६. कुल ७ सु अप्पत
[१७१] १. अपत २. सु ३. थाल
[१७२] १. सुटेरि २. तानि पत्ति ३. कपि ४. वाहियं
[१७३] १. मद्धि २. स्वर्ग ३. पत्त ४. ग्रेह ५. अहरे
[१७४] १. सपन्न २. मन्न ३. करी न ४. दीप ५. धीर ६. सुबीर ७. वरंत

सुनंत सूर अस्व[1] फेरि तेजि ताम हंकयो।
मनो दरिद्द रिद्धि पाइ जाइ कंठ लग्गयो॥ ११८१
कनक्क कोटि आस[2] धातु रासि वास मालसी[3]।
रुनंति[4] मोरु[5] सोनि[6] सोनि स्याह[6] छत्र कामसी[7] ॥१७५॥

सुधा सरोज मोज[1] मंग लिक्क[2] रंग हल्लए[3]।
मनो मयंक[4] फट्ट पासि काम काल वल्लए[5]॥ ११८२
करिस्स[6] कोस कंकणं जु पानिपत्त[7] बंधए[8]।
भावरी सखी सुलज्ज जुज्झ[9] रुज्झ वज्जए[10] ॥१७६॥ ११८३

अचारु दारु[1] देव सद्द[2] दूव[3] पक्ख जंपही[4]।
सु गठि दिड्ढ[5] इक्क चित्त लोक लोक[6] चंपही॥ ११८४
अनेक सुक्ख मुक्ख सीस जंघ[7] संधि[8] लग्गयं।
कंत कंति अंत अंति[9] तमोरि मोर अप्पयं॥१७७॥ ११८५

दूहा

वरि चल्ल्यो ढिल्लिय[1] न्रिपति सुत जैचंद कंवारि[2]।
गंठि छोरि दिच्छन फिरिग प्रान करिग मनुहारि॥१७८॥ १२०६

गाथा

पयंपि[1] पंगुपुत्रीय जयति जोगिनी पुरह।
सरव विधि निसेधाइ[2] तंबूलस्य[3] समादाय[4] ॥१७९॥ १२०८

---

[१७५] १. अश्व २ अग ३ ची ४. रहंत ५. भोर ६. भोर ७. स्याम
[१७६] १. मोजय २. अलक्क ३. हल्लिय ४. मयन्न ५. घल्लियं ६ करस्सि ७. फंद
८. माज ए ९. झुंड १० विराज ए
[१७७] १. चारु २. सब्ब ३. दोउ ४. जपिय ५. दिट्ठ ६. लीक ७ चपिय ८. जुद्ध
९. साध १० अथिता
[१७८] १. ढीली २. कुमारि ३. दच्छिन
[१७९] १ प्रयाने २. निषेधाय ३. ताम्बूलं ४. ददतं नृप

दूहा

रेनु परइ सिरि उप्परहि हय गन गज अच्छार।
मनहु ढग[1] ढग[2] मूल[3] ले रहे[4] ति सव्व मुछार ॥१८०॥ १२४३
मनहु वंध अज हुंति भरे है तिनि जानत थट्ट।
वचन साह भं[1] गुन[2] करहि सहु जोवइ त्रिप वट्ट ॥१८१॥ १८४४
धीरत्तनु[1] ढर ढार सिर[2] वाहु[3] दंतिय उभ रोभ।
त्रिप्पु नयन विअ[4] अंकुरिग[5] मनहु मदग्गज सोभ ॥१८२॥ १२४६
हरखवंत त्रिप भ्रित[1] हुआ[2] मन मज्झहि जुधि राहु[3]।
मिलत हस्य[4] कंकम[5] लखिउ कहहि[6] कन्ह यहु[7] काहु[8] ॥१८३॥ १२४८
•[गगन रेनु रवि मुंद लिय धर सिर छंडि फनिंद।
इहु अपुव्व धीरत्त तुहि कंकन हत्थ नरिंद ॥१८४ अ॥] १२४९

छन्द

वरिय वाल सुत पंगुर[1] राइ।
उहि चितु रक्खि मिल्यो तुम आइ[2] ॥
तजि मुंधइ[3] अब जुद्ध सहाइ।
सु अब दई आवास वताइ ॥१८४॥ १२५२
जिहि तजि चित्त किया[1] तुम्ह पास।
छंडिय कन्ह रुवंत[2] अवास ॥
जे सउ भ्रित[3] मज्झि इक भ्रितु[4] होइ।
त्रिप यूंही हि न मुक्कै कोई ॥१८५॥ १२५३

---

[१८०] १. ठग्ग २. ठग ३. मूरि ४. रहिग
[१८१] १. स्वामि २. भंग न
[१८२] १. धीरत धीर २. ढिल्लेस वर ३. बहु ४. तन ५. अंकुरे
[१८३] १. भ्रत्त २. हुअ ३. चाव ४. हथ्थ ५. कंकन ६. कह्यौ ७. इह ८. काव
[१८४] १. पंगह २. वह व्रत भंग मोहि व्रत जाइ । ३. मुधहि
[१८५] १. कियौ २. रुदंत ३. सुभट्ट ४. भट्ट

हम सउ भ्रित्त[1] सुन्दरी एग[2]।
मुक्कि जाइ[3] ग्रिह[4] बंधइ[5] तेग ॥
जउ अरि थट्ट कोरि दल साज।
ढिल्लिय तखत देहु[6] प्रिथिराज ॥१८६॥ १२५६

इहु[1] त्रिपत्ति बुज्झियै न तोहि।
सुन्दरि तजि[2] जीवन का मोहि ॥१८७॥ १२५४

श्लोक

धर्मार्थेषु च यज्ञार्थे[1] कामकालेषु शोभितं[2]।
सर्वत्र वल्लभा बाला रण कालेसु मोहिनी[3] ॥१८८॥ १२५५

दूहा

चले सूर सहु सत्थि हुअ रन निसंक मन भौन।
सह अचार मुख म्रिग लहि[1] मनहु करे[2] फिरि गौन ॥१८९॥ १२६०

मुडिल्ल

पानि परस अरु द्रिस्टि अलग्गिय।
सा सुन्दरि कामागनि जग्गिय ॥
खन[1] तलप्प[2] अलप्प[3] मनु कीने।
जै वहि[4] वारि गये तनु मीने ॥१९०॥ १२६२

फिरि फिरि वाल गवक्खइ[1] अक्खी[2]।
ता सिख देहि वैन वर सखी[3] ॥
विनु उत्तर मोहन मुख रखी[4]।
जिम चातग पावस ऋतु नखी ॥१९१॥ १२६४

---

[१८६] १. रजपूत २ एक ३. जाहि ४ ग्रह ५. बधहि ६. देहि

[१८७] १. इतनौ २. मुक्कि

[१८८] १. यज्ञकालेषु धर्मेषु २. शोभिता ३. गेहिनी

[१८९] १. मगलह २. करहि

[१९०] १. खिन २. तलपह ३. अलपह ४. वर

[१९१] १. गवख्खनि २ अख्खिय ३. सख्खिय ४. रख्खिय

अंगना[1] अंगह चंदनु लावहि ।
असु[2] लाजनु राजनु समुझावहि ॥
दे अंचल चंचल द्रिग मूंदहि ।
कुल सुहाइ तुरिया जिय खुंदहि ॥१९२॥ १२६३

बहुत जतन संजोग समाए ।
सोम कमल अम्रित[1] दरसाए ॥
उझकि झंकि दिख्ख्यो पुन पत्तिय ।
पति देख्यो[2] मन महि अनुरत्तिय ॥१९३॥ १२६७

श्लोक

गुरु जनो नाम नास्ति तात मात[1] विवर्जितः ।
तस्य काम विनश्यंति जाम[2] चंद्रदिवाकरः ॥१९४॥ १२७२

दूहा

इह कहि सिर धुनि सखिनि सों देखि संजोगि सुराज ।
जिहि पिय[1]जन अंगुलि फिरिय तिहि प्रियजन कइ[2]काज ॥१९५॥ १२७३

सुनि[1] सावंत[2] निसंत[3] कहि पंगु पुत्रि घटि मंत ।
तुम्ह सत्थहि सामंत सुभट ले ढिल्लाह[4] गज दंत ॥१९६॥ १२७८

गाथा

मदन सराल ति विवहा विविहारे देत प्राण प्राणेण ।
नयन प्रवाहि[1] विवहा अहवा[2] कामा कथ दोह ॥१९७॥ १२७९

---

[१९२] १. अगन २. अरु
[१९३] १. दिनयर २. दिष्षत
[१९४] १. मनो २. आशा ३. कार्य ४. यावत्
[१९५] १. प्रिय २. किहि
[१९६] १. ए २. सामत ३. जु सत्त ४. कड्ढै
[१९७] १. प्रवाहति २ अह वामा

कवित्त

मो कंपहि सुरलोक सत्त पाताल नाग नर।
म म कंपि जंपि[1] सुंदरि सपहु चिडिग[2] कोरि[3] काइर[4] रखत ॥
इहि भुवहि[5] ढिल्लि[6] कनवज[7] करउं[8] इह अप्पउं ढिल्लिय तखत ॥१६८॥ १२६५

सुंदरि सोचि समझ्झि गहुग्गह[1] कंठ भरि।
तवहि प्रान[2] प्रिथिराइ[3] सु खिंचिय बाहु करि ॥
दिय हय पुट्ठिय[4] भानु जु सव्व सुलच्छिनिय।
करउ[5] तुरंग सुरंग स पुच्छ नि वच्छनिय ॥१६६॥ १३२२

दूहा

परनि राउ[1] ढिल्लिय समुह[2] रुख कीनी मनु आस।
कहहि चंद त्रिप पंगु रख जुज्झ जुरहि जिम दास ॥२००॥ १३२१

गाथा

सय[1] रिपु[2] दिल्लिय नाथो स एव आला अग्य धुंसनं।
परणेवा[3] पंगु पुत्री ए जुद्ध मंगति भूखनं ॥२०१॥ १३४५

दूहा

सुनि स्रवननि प्रिथिराज कहु[1] भयो निसानह[2] घाउ[3]।
ज्यूं[4] भद्दव रवि असमनह[5] चंपिय वद्दल वाउ ॥२०२॥ १३४६

छंद त्रोटक भ्रमरावली जाति

सलिता जन सत्त समुद्द लियं।
दुइ राइ महा भरयं मिलियं ॥

---

[१९८] १. चंपि २. चढिग ३. कोटि ४. कायर ५. भुजन ६. ठेलि ७. कनवज्ज ८. कौं
[१९९] १. गह गह २ पानि ३. प्रथिराज ४. पुट्ठहि ५. करत
[२००] १. राव २. मुषहि
[२०१] १. सा २. याहि ३. परनेवा ४. मागंत
[२०२] १. को २. निसानन ३. घाव ४. जनु ५. अस्तमनि

करकादि निसा मकरादि दिनं।
वर वर्धति सेन दुवाल भवं ॥२०३॥
दुहु राइ रखत्ति तिरत्त उठे।
विहरे जनु पावस अंभ उठे ॥
निसि अद्ध विधत्त निसान धुरे।
दरिया दिव जानि पहार तुरे ॥२०४॥
सहबाइ फेरि कलाहालियं।
रस वीरह वीर चली मिलियं ॥
ढहनं कित घंटनि घंट घुरं।
कल कोतिग देव पयालपुरं ॥२०५॥
लगि अंबर बबर डबरयं।
बिसरी दिसि अट्ठति धूधरियं ॥
समसेर दुसेर समाह निसे।
दमके दल मज्झि तरायन से ॥२०६॥
चमके चत्तरंग सनाह घनं।
प्रतिबिंबित भित्ति स ऊख वनं ॥
दरसे दल वद्दल ढल्लरिया।
जिनके मुख मुच्छ ति मुंछरिया ॥२०७॥
त्रिप जोइ फवज्जि निवट्टि लियं।
मुह माहिरि कचव करा उदियं ॥
भुज दच्छिन अव्वुअ राउ रच्यो।
सिरि छत्र समेत जु आनि सच्यो ॥२०८॥
भय की दिसि वाम पंडीर भख्यो।
कट कंध कबंध गिरंत लरयो ॥
कूरंमे अरंभ जु अंभ अनी।
सु घरी कवि चंद सुनी सुमनी ॥२०९॥

दल पुट्ठि न मोरिय राउ सुन्यो।
कवियत्तनि संच सुन्यो सु मन्यो॥
निरवाह चदेल ति जहमने।
हय मुक्कि लरे जम सू जुरने॥२१०॥

तिनि मज्झि त संभरि वायु जिसो॥
भुज अर्जुन अर्जुन राउ जिसो॥
भमराउलि छंद प्रवान थियं।
त्रिप जोइ फवज्जइ वंट लियं॥ २११॥

कवितु

जि दिन रोस राठोर[1] चंपि चहुवान गहन कह।
सैं[2] उप्परि सैं[3] सहस वीस[4] अगनित्त लख्ख दह॥
तुटि डूंगर थल भरिग भरिग थल जलनि प्रवाहिग।
सह अच्छर[5] अच्छहि विमान सुर लोग[6] विनाइग[7]॥
कहि चंद दंद दुहं[8] दल भयो घन जिम सर सारह धरिग[9]।
भर सेसु हरी हर ब्रह्म तन तिहु[10] समाधि तिहि दिन[11] टरिग॥२१२॥ १७०६

छन्द

सज्जतं धून धूमे सुनंतं।
कंपयइ[1] तीन पुर जेनि पत्तं[2]॥
डंवरु वर[3] डहकिथं गवरि कतं।
मानयं जोग जोगादि अतं॥२१३॥ १३४७

---

[२१२] १. रट्ठौर २. सो ३. सैं ४ बीह ५. अच्छरि ६. लोक ७ वनाइग
८. दुहु ९. झरिग १०. तिहु ११. तद्दिन

[२१३] १. कपियं २. कपतं ३ डमरु कर

किम किमे सेस सह[1] भार रहियं।
किमे उच्चासु रवि रत्थ नहियं[2]॥
कमल सुत कमठ नहि अंभु[3] लहियं।
जुक्कि[4] ब्रह्मान ब्रह्मंड गहियं ॥२१४॥

राम रावन्न कवि कन्ह[1] कहता।
सकति सुर महिख वलिदान[2] लहता॥
कंस सिसुपाल जुरि मम[3] प्रभुता।
संकियं एन[4] भय लच्छि सुरता ॥२१५॥

चढ्ढियं सूर आजान बाहं।
दुट्ठि[1] वन सिंघ तटह्रीन[2] लाहं॥
गंगजल जमन धर हिल्लिय[3] जूभे[4]।
पंगुरा राय राठोर फोजे[5] ॥२१६॥

उप्परे फोज[1] प्रिथिराज राजं।
मनो वानरा[2] लक लागे हि माजं॥
जग्गिय देव देवा उनिदं।
दुक्खियं दीन इदं फनिदं ॥२१७॥

चंपियं[1] भार पायाउ[2] दुंदं[3]।
उड्डियं रेन आयास मुदं॥
लहै कोनु रखत्त[4] अगणित्त रत्ता।
छत्र छति[5] भार दीसइ[6] न पत्ता ॥२१८॥

---

[२१४] १. सिर २. सहिय ३. अबु ४. सकि
[२१५] १. किन्न २. धन्न ३ जमन ४ एम
[२१६] १. तुट्टि २. दीसत ३. हलिय ४. औजे ५ भोजैं
[२१७] १. फौज २. बादरा ३. गाजं
[२१८] १. चापिय २. पायाल ३. दुंदं ४. रावत्त ५. छिति ६. दीसै

आरंभ चत्रा[1] रहै कौन संता।
वाराह रूपी न कंधे धरता॥
सिरे[2] सन्नाख[3] नव रूप रंगा।
सल्लिवै[4] सीस त्रिन्नयन गंगा॥२१६॥ १३५३

टोप टंकाल[1] दीसै उतंगा।
मनो वज्ज[2] लेखंति[3] बंधी विहंगा॥
जिरह जिग्गीन[4] गहि[5] अंग लायी।
मनो कच्छ[6] रक्खी[7] न गोरक्ख पायी॥२२० १२५४

हत्थरे हत्थ लग्गी पुहायी[1]।
दांव[2] गंजै न थक्कै थकायी॥
राय[3] जल जीन[4] विन्नवन[5] अच्छे।
दिक्खियै मानु[6] नर भेख[7] कच्छे॥२२१॥ १३५५

सब्ब छत्तीस करि कोहु[1] सज्जे।
इत्तने सोर[2] वाजिन्न वज्जे॥२२२॥ १३५६

निसानं निसाहार वज्जे[1] सुचंगा।
दिसा देस दच्छिन्न लद्धी[2] उपंगा॥
तवल्लं तिदूरं ति जग्गी म्रिदंगा[3]।
सु ले नित्ति[4] नारद्द काहे[5] प्रसंगा॥ २२३॥ १३६२

---

[२१६] १. चक्की २. सेन ३. सनाह ४. झिल्ल

[२२०] १. टंकार २. बद्दल ३. थति ४. जगीन ५. बनि ६. कट्ठ ७. कती

[२२१] १. सुहाई २. घाइ ३. राय ४. जरजीन ५. बनि बान ६. जानु ७. जोगिंद

[२२२] १. लोहु २. सूर

[२२३] १. बाजे २. लीनी ३. म्रदंगा ४. नृत्य ५ कडढै

वधं[1] वेस[2] विसातल[3] बहु राग[4] रगा।
जिसे मोहियं सत्थि लग्गे कुरंगा।
वरं वीर गुंडीर तेसे[5] सुमंगा[6]।
नचै इस सीसै धरो जास गंगा ॥ २२४ ॥ १३६३

सिंधु सहनाइ स्रवपे[1] उतंगा।
सुनै अच्छरी अच्छ मज्झे[2] सु अंगा ॥ २२५ ॥ १३६४

नफेरी नवा[1] रंग सारंग भेरी।
मनो त्रित्तनी इन्द्र आरंभ केरी ॥
सिंघ[2] सावज्ज[3] उग्रो[4] न नेरी।
सज्झि[5] आवज्झ[6] हत्थै करेरी ॥ २२६ ॥ १३६५

उच्छरे[1] धाइ चिर घंट टेरे।
चिंत तै नाहि वड्ढी[3] कुबेरी ॥
उप्पमा[4] खंड नव नयन सग्गी।
मनो राम रावन्न हत्थे विलग्गी ॥ २२७ ॥ १३६६

दूहा

सुणिम वयण[1] राजन[2] चढिय[3] बहु पक्खर भर राहु।
मनु अकाल तेडिय सघन पवय छूट पर बाहु ॥२२८॥ १३६७
चढिय सूर सामंत सहु त्रिप धर्मह कुल काज।
सह समूह दिक्खिय नयन त्रिण वरगिन प्रिथिराज ॥२२९॥

---

[२२४] १. बज २. वस ३. विसतार ४. रंग ५. ससे ६. ससगा
[२२५] १. श्रवने २. मजे
[२२६] १. नवं २. सिगि ३. साबद्द ४. नंगी ५. झिंझ ६. आबद्ध
[२२७] १. उच्छरो २. टेरी. ३ बाढी ४. ओपमा
[२२८] १ वज्जन २. रज्जन ३. चाढ्ढिग

....औहि रक्खण बहु बंध।
असिय[1] लाख[2] परसू[3] भिरग धन प्रिथिराज नरिंद ॥२३०॥ १३६८
दल संमुह दंती[1] सघन गणि को कहि अगणित्त।
मनु.... .. .. सहु दिक्खइ मयमत्त ॥२३१॥ १३६९

छंद

दिक्खियहि[1] मंत मय[2] मत्त मत्ता।
छत्र छह रंग अंगे[3] ढुरंता ॥
एमि अ .. जु रंता।
जोवई[4] वहु वेगि झटकंत दंता ॥ २३२ ॥ १३७१
जे सिघली सिंघ मुंडे[1] प्रहारे।
सार सम्मूह धावै पहारे ॥
उज्जये वाण सज्जे हकारे।
अंकुसह[2] कोस नहि ते चिकारे ॥ २३३ ॥ १३७२
मन्न[1] मं गोल चहुं कोद वंके।
भूप वाजूनि वाजून हंके ॥ १३७३
तेह तर जोर पट्टे न[2] हिल्ले[3]।
कंपिये प्रानि[4] ते मेरु ढिल्ले ॥२३४॥ १३७४
रेस रेसम्म पाट नीं रीति भल्ली।
सेस संदेह संदूखि[1] मिल्ली ॥ १३७५
रेख वैरक्ख पति पात वल्ली।
मनो वनराइ ढालेति[2] ढल्ली[3] ॥२३५॥ १३७६

---

[२३०] १. असो २. लक्ख ३. सौ सा
[२३१] १. दंतिय
[२३२] १. देषियहि २ मै ३. चौर ४ वाय
[२३३] १. सुंडी २. हकारे ३. अंकुसु
[२३४] १. मीठ २. ब ३. झिल्ले ४. पानि
[२३५] १. सिंदूर २. द्रुम डाल ३. हल्ली

वंट घोरं न सोरं समानं।
हल्लए मत्त[1] लग्गे[2] विमानं॥
सीधु संबंध बंधइ धुरंगा।
सुर्गा सुग्री[3] न डरि[4] ईद्र[5] संगा॥२३६॥ १३७४

सीस सिंदूर गय[1] झिप्पि[2] झंपै।
दिक्खि सुरलोक सह देव कंपै॥२३७॥ १३७६

दंत मणि मुत्ति जर जटित लख्खे।
वीज चमकंति घन मेघ पख्खे॥ १३७३
इत्तनहि सास घरि[1] वारि रहियो।
जु कहि जु कहि प्रिथिराज गहियो॥२३८॥ १३७७

दूहा

गहि गहि कहि सेनान सब्ब[1] चलि हय गय मिलि एक।
जाणूं[2] पावस चुव्वइ[3] अनिल हलि वद्दल वहु भेक॥२३९॥ १३७८

छंद

हयं गयं नरं भरं उने त्रिये[1] जलद्दरं[2]।
दिसा निसान वज्जए समुद्द सद्द लज्जए॥२४०॥ १३७९
रजाद[1] मिंद[2] अंखुली[3] वियोम[4] पंक संकुली।
तटाक बालु रंगिनी जु चक्क[5] सो वियोगिनी॥२४१॥ १३८०

---

[२३६] १. मंत २. लागे ३. स्वर्ग ३. सगीत ५. करि ६. रभ
[२३७] १. गज २. जंप ३. देखि
[२३८] १. धरि
[२३९] १. सकल २. जनु ३. पुव्वह
[२४०] १. उनम्मिय २. जलद्धरं
[२४१] १. रजोद २. मोद ३. उष्पली ४. सव्योम ५. सु चक्कयो

पयाल पहल्ल[1] पल्लए दिगंत[2] मंत हल्लए। १३८१
अनंदने[3] निसाचरे कु कुंप[4] तुंड साचरे॥२४२॥

भगंत गंग कुल्लए[1] समुद्द[2] सून फुल्लए। १३८२
चरंति छत्त छत्तिए सरोज भोज सत्तए॥२४३॥ ?

अखंड रेण[1] मंडयो[2] डरप्पि इंदु छंडयो[3]।
कमट्ठ पिट्ठ निट्ठुरं प्रसार भार भित्थरं[4]॥२४४॥ १३८३

.... समग्गए समाधि आदि[1] जग्गए।
अपूरवं ति बंधयो[2] जटाल काल भाग्गयो[3]॥२४५॥ १३८४

नरिंद पंग पायसं गसा भुयंति आइसं[1]।
गहन्न योगिनी[2] पूरे जु अप्प अप्प विप्फुरे॥२४६॥ ११८५

दूहा

सह स मान सह छत्रपति सब[1] सम जुध संजुत्त।
गहन मीर बंदन हती जिहि लग्गे लघु[2] भत्त॥२४७॥ १४०१

नाराच

पट्ठिए राइ पंगा सु हीसं।
भखे दोइ दुम्मान हीने न दीसं॥
नीच [कंधं तुछं] रोम सीसं।
उप्परे राय[1] प्रिथिराज दीसं॥२४८॥ १४१२

---

[२४२] १. पाल २ द्रगंत ३. अनंदिते ४. कपि
[२४३] १. कूलए २. समुद्र
[२४४] १. रेन २. मडयौ ३. छंडयौं ४. विथ्थरं
[२४५] १. आधि २. बद्धए ३. लुद्धए
[२४६] १. आयसं २. जोगिनी
[२४७] १. सह २. लहु
[२४८] १. फौज

छन्द जाति नग्नका

कोल पल्लं लखी मेछ[1] सखं भखी।
रोम राहं नखी, वीर चाहू चखी ॥२४९॥ १४१४
सभे[1] नारं लखी मुखी।
वान बाहं पखी संघ सावं धखी ॥२५०॥ १४१५
टंक अड्ढा रखी खंच[1] विम्भारखी।
लोह नारा[2] चखी[3] प्राण जोए लखी ॥२५१॥ १४१६
कूल[1] वाहं[2] चखी दिव्य वाहू नखी।
द्रुम्मसि[3] सामुखी बोलते[4] ना लखी ॥२५२॥ १४१७
पारसी पालखी[1] पंग पारढकी[2]।
स्वामिना चित्तखी ढिल्ल[3] ढाहं भखी ॥२५३॥ १४१८
साठि[1] हजारखी पंग वे पारखी ॥२५४॥ १४१९

छन्द वृद्ध नाराच

हय दल पय दल अग्ग सु डारे।
त्रिपति नछत्तनु लब्भ न पारे॥
मनो विटियं कोट के[1] मुनारे ॥२५५॥ १४२०

छन्द पद्धरी

मोरियं राज प्रिथिराज वग्गं।
अट्ठियं रोस आयासु लग्गं॥

---

[२४९] १. मंस
[२५०] १. सुम्मरे
[२५१] १. खंचि २. नारं ३. जखी
[२५२] १. कोल २. चाहै ३. साहै ४. बोल तैं
[२५३] १. पारखी २. पारढखी ३. ढिल्लि
[२५४] १. सट्टि
[२५५] १. मंके

पंथ पारत्थि[1] हरि हेम[2] जिग्गं[3]।
खोलियं खग्ग खाडयो[4] न लग्गं ॥२५६॥ १४२१

उट्ठियं सूर सामंत ताजे[1]।
रोहिया सिघ सा हत्थ लाजे[2]॥
वाजने वीर रा पंग वाजे।
मनो आगमे मेघ आसाढ़ गाजे ॥२५७॥ १४२२

मिले जोध[1] बत्थै न लग्गे हकारे।
उडे गैन लग्गे सम[2] सार झारे॥
कहे कंध कंवंध[3] संवे ननारे[4]।
परे जंग रंगं मनो मत्त वारे ॥२५८॥ १५११

डरे संभरे राइ संसार सारे।
जुरे मल्ल हल्लै नही ते अखारे॥
जीवे[1] हारि हल्ले नही चोप चारे[2]।
तवे कोपियां कोस[3] मयमत्त मारे ॥२५९॥ १५१२

गये सुंड दंतीनु दंता उपारे।
मनो कंदला कंद भिल्ली[1] उखारे ॥२६०॥ १५१३

परे पंडुरे वेस ते मीर सीसं।
मनो जोगिनी जोट लागंति रीसं॥
वहै वान कम्मान दीसै न भानं।
भमै ग्रिद्धणी ग्रिद्ध पावै न जानं ॥२६१॥ १५१४

---

[२५६] १. पारत्थ २. होम ३. जग्ग ४ खड्ड
[२५७] १. तज्जे २. राजे
[२५८] १. लोह २. सकं ३. कामध ४. निनारे
[२५९] १. जबै २. को पचारे ३. कन्ह
[२६०] १. गहे २. भीलं
[२६१] १. सुरे २. कठी

रुने खेत रत्तं चरंतं करारं।
घुले[1] कंठ संठी[2] न लंगी उभारं ॥२६२॥ १५१७

सरं स्रोन रगी पलं पार पंकं।
वजे मस[1] न सं सु वैसे करंकं॥
द्रुमं ढाल लोलंति हाल[2] मुदेसं।
गये हंस नासं लगे हंस वेसं॥२६३॥ १५१८

परे पानि जंघं धरंगं निनारे।
मनो मत्थ[1] कत्थ[2] तरं तीर[3] भारे॥
सिरं सा सरोजं कचं सा सिवाली।
ग्रहै[4] अंत गिद्धा स सोभैं[5] मुराली[6]॥२६४॥ १५१९

वढं[1] रंभ रंतं भरत पिचारे।
कतं स्याम सेतं कतं नील पारे॥
घरे[2] अंग अंग सुरंगं सुभट्टं।
जिते स्वामि कज्जे[3] समप्पे सुघट्ट॥२६५॥ १५२०

तहां काल जम जाल हत्थी मसाणं[1]।
भयो[2] इत्तने जुद्ध अस्तमित भाणं॥२६६॥ १५२१

गाथा

निसि गत छड्डिअ[1] भानं चक्को चक्काइ सूर सा रयणी।
विधु संजोग संजोगे[2] कुमुदिनि कलि के कते राने[3]॥२६७॥ १५३१

---

[१६३] १. वंस २. लालं
[२६४] १. मच्छ २. कच्छा ३. तिरत ४. गहै ५. सोहै ६. म्रनालो
[२६५] १. तटं २. बरै ३ काजे
[२६६] १. समाणं २. हुअै ३. भान
[२६७] १. वंछिय २. वियोग ३. कुमुद कली कातर नाचं

दूहा

उभय[१] सहस हय गय परिग निसि आगत गत भानु ।
सत[२] सहस्स[३] असि[४] मीर हनि थल विट्यो चहुवान ॥२६८॥ १५३४

कवितु

परथो गज[१] गुहिलोतु[२] राम गोइंद[३] जासु[४] वर ।
दाहिम्मो नरसिंघ पलौ[५] नागवर[६] जासु धर ॥
परयौ चंद पंडीर[७] चंद दिख्यो मारतो ।
सोनंकी[८] सारंग परगे[९] असिवर झारंतो ॥
कुरम्भ राइ[१०] पाल्हंन्न[११] दे बंध्यो[१२] तिन्न[१३] तिहिद्दिया ।
कनवज्ज राडि[१४] पहिलइ[१५] दिवसि[१६] सउमइं[१७] सत्त निघट्टिया ॥२६९॥ १५३२

अध्ध[१] रयणि[२] चंदणी[३] अध्ध अग्गै अंधियारी[४] ।
भोग भरन[५] अस्टमी[६] वार मंगल[७] सुदि रारी[८] ॥
चार[९] जाम जंगली[१०] राउ[११] निसि नींद न घुट्यो ।
थल विट्यौ[१२] चहुवान[१३] रहवो[१४] कंदल[१५] आहुट्यौ ॥
दस कोस कोस कनवज्ज ते कोस कोस अन्तर अनी[१६] ।
वाराह रोह जिम पारधी इम रुक्यौ संभरि धनी[१७] ॥२७०॥ १५४३

---

[२६८] १. उभै २. सत्त ३. सहस ४. अस

[२६९] १. गंजि २. गहिलोत ३. गोयद ४. राज ५. परयौ ६. नागौर ७. पुंडीर ८. सोलकी ९ राव १०. पाल्हन ११. बधव १२. तीन १३. रारि १४. पहिलै १५. दिवस १६. सौमे

[२७०] १. रयनि २. चदनिय ३. अँधियारिय ४. भरनि ५. अष्टमिय ६. सुक्र ७. रारिय ८. च्यारि ९. जंगलिय १०. राव ११. विंटूयौ १२. कमधज्ज १३. रह्यो १४ कंदेल १५. अनिय १६. धनिय

अडिल्ल

मत्त[1] महोदधि मज्झि दीसत गसंत[2] तम ।
पथिक वधू पथ द्रिस्टि अहुट्टिय जग जिम ॥
जिम युव युवतिन गत्त मत्त अंइंगुले[3] ।
जिम सारस रस लुद्ध त मुंध मधुप्प ले[4] ॥२७१॥ १५४८

खरह चारु चै[1] इंदु ज मंदियवर[2] उदय ।
नव विरहिनि नव नेह नवज्जलु नव रुदय ॥
भूखन सुभ्भ समीप न मंडनु मंडि तनु ।
मिलि मुद मंगल कीन मनोरथ सव्व मन ॥२७२॥ १५४९

गाथा

यतो नलिनी ततो नीर यतो नीर ततो नलिनी ।
यत्र गेह[1] गेहिनी[2] तत्र यत्र गेहिनी[2] तत्र गृह ॥२७३॥ १५५०

कवितु

मेलि सव्व सामंत बोलु भंगहि[1] ति नरेसुर ।
अप्पु[2] मग्ग लग्गियइ मग्ग रक्खहि सु महा-भर ॥
एक[3] एक[3] भूझंत[4] दंत दंती ढढोरे ।
जिते पंगुरा भीछ मारि मारि म्मुहु[5] मोरे ॥
हम बोल रहै कलि अंतरे देहि स्वामि पारथ्थियै ।
अरि असी लख्ख को अंगमै परिणि[6] राइ सारथ्थियै ॥२७४॥ १५५१

मति घट्टिय सामंत मरथ[1] भय मोहि दिखायो[2] ।
जिम[3] चिट्ठिय विणु कहन होइ के[4] मोहि कहायो[5] ॥
तुम गज्जुर[6] भट भीम तासु गेरव[7] मैमंतो ।

---

[२७१] १. मित्र २. ग्रसत ३. अनंग लिय ४. लिय
[२७२] १. रुचि २ इंदीवर
[२७३] १. गृह २. गृहिणी
[२७४] १. मांगहि २. आप ३. एक ४. जूझत ५. मुख ६ बिना
[२७५] १. मरन २. दिखावहु ३ जम ४. सो ५. बतावहु ६. गंज्यो ७. गब्बह

मैं व गोरि साहिव्व[८] साहि सारवर[९] साहंतो ॥
मो सरण सरण हिंदू तुरक तिहि सरणागत तुम करो[१०] ।
बुज्भियइ सूर सामंत हुइ इतो बोभ अप्पण धरो[११] ।।२७५।। १५६४

थान[१] रहे[२] ते[३] सिंघ वीह[४] वन रक्खै[५] सिंघह ।
धर रक्खै जु भुवंग धरणि रक्खै जु भुअंगह ॥
कुल रक्खै कुल वधू वधू रक्खै जु अप्प कुल ।
जहु[६] रक्खै जो हेम हेम रक्खै तु सब जल ॥
आब रहै तव लग जियन जियन जम्मु साबुत रहै ।
.... रखत रक्खहि राव तिह ।।२७६।। १५६७

तै रक्खे[१] हिंदुवाण गंजि गोरी गाहंतो ।
तै रक्खे[२] जालोर चंपि चालुक साहंतो[३] ॥
तैं रक्ख्यो पंगुलिय[४] भीम महिय[५] दे मत्थै ।
तैं रख्यौ रिणथंमु[६] राइ जाइदौ[७] सैहत्थै ॥
इहि मरन कीरती[८] पंग की जियण कित्ति रा जंगुली ।
पहु परनि जाहु ढिल्ली लगै जु होइ घरे घरु[९] मंगुली ॥ २७७।। १५७२

सूर मरन मंगली सार[१] मंगली ग्रिह आये ।
वार मंगल मंगली धरण मंगल जल पाये ॥
क्रिपण लोभ मंगली दीन मंगल कछु दीनइ[२] ।
रुत मंगल माहिसइ मंग मंगल कछु लीनइ[३] ॥
मंगली जु वार होइ मरण की पति सत्थै तन खंडियइ ।
खित[४] चड्ढि[५] राइ राठौर सउ मरण सनम्मुख मंडियइ ॥ २७८॥ १५७३

---

८. साहाब ९. सरवर १०. करहु ११. धरहु
[२७६] १. बन २. राखै ३. ज्यो ४. बिभ ५. राखहि ६. जल
[२७७] १. रख्यौ २. चाहतो ३. पगुरौ ४. भट्टिय ५. रनथभ ६. जद्दव ७. किचि
८. घरघ्घर
[२७८] १. स्याल २. धरनि ३. दान ४. दिन्नै ५. लिन्नै ६. खेत ७. चढ़ि

मरन दिजइ प्रिथिराज दसहि छत्रिय करि पयठो।
मीचु लग्गये पाइ कहे धरि आव वइट्ठो॥
पंच घाट[1] सौ कोस कहइ ढिल्ली अस कत्थइ।
इक्क इक्क सूरवा[2] पिक्खि वाहते वत्थइ॥
घर घरणि परणि रा पंगु के पहुचे इहै वडित्तनौ।
जब लग्गि गंग धर चंद रवि तव लगि चलै कवित्तनौ[3]॥ २७९। १५७४

गाथा—

मिट्यो न जाइ कहणो गहणो कवि चंद सूर सांवत।
आली हय गय वहणो रहणो चित्त निदावंत॥ २८०॥ १५८८
सत्रु-भट-किरण समूहे सूरो[1] · · ··· ·· ···
जोगिणि पुर पति सूरे पारस मिसि पंगु राएसु॥ २८१॥ १६२८

छंद त्रोटक

परि पंगु कटक्कति घेरि घनं।
दस पंच ति कोस निसान धुन[1]॥२८२॥ १६४०
गजराज विराजहि[1] मध्य घनं।
जनु वद्दर अभ सुरंग बनं॥
परि पक्खर सार पवंग[2] घनी।
जनु हल्लति हेम समुद्द अनी॥२८३॥ १६४१
बर बंबर वैरख छत्र तणी[1]।
विच माहिय साहिय सिघ रणी[2]॥
हरि पत्थि हिमाउत पीत पनी[3]।
देखिय लिय रेण सरद्द तनी॥२८४॥ १६४२

---

[२७९] १ पच २. सूरिमा ३. बडप्पनौ ४ कविप्पनौ
[२८०] १. सामंत २. सेन पग आएस
[२८२] १. सुन
[२८३] १. विराजित २. तुरग
[२८४] १. तनी २. अनी ३. बनी

भणणकिय भेरि अनेग[1] सयं ।
सरणाइनि[2] सिधुअ पूरि[3] लियं ॥
जनु भावर[4] भाण[5] समेर करयो ॥२८५॥ १६४३

दल सव्व स मोरिय रत्त करी ।
जिन जाइ निकस्सि नरिंद अरी ॥
गत जाम त्रियाम सु पीत[1] परी ।
सय[2] सद्द अयासनु[3] देव करी ॥२८६॥ १६४४

त्रिप जग्गति सव्व तुरंग चढे ।
विणु भाणु पयाणहि लोह कढे ॥२८७॥ १६४७

चहुवान कमान वि कोप लियं ।
मिलि भौहनि खंचि कसीस दियं ॥
सर छुट्टति पंखिण सद्द भयं ।
मद गंध गयंदनि सुक्क[1] गयं ॥२८८॥ १६४८

सर एक सविच्चित[1] सत्त करी ।
दल लिख्यित[2] नय कत ठक्क परी ॥
जहं जानइ सूर न भीर परी ।
ठिल्लइ चहुवान तु अप्प बरी ॥२८९॥ १६४९

ठठक्की सेन समि मीर मिल्ले ।
विड्डरिय सेन सव्वे न कल्ले ॥
वैरि चहुवान राठोर जूरे ।
दिक्खियो पगरे नैन भरे ॥२९०॥ १६९५

---

[२८५] १. अनेक २. सहनाइय ३. राग ४. भावर ५. भान
[२८६] १. खेत २. जय ३. अयासह
[२८८] १. मुक्कि
[२८९] १. विद्धत २. दिख्खत

कुप्पियो वीर विजपाल पुत्तं।
अबद्धं राइ जम भार[1] दुत्त ॥२९१॥ १६९९

संप्परे[1] सेन सइ[2] सदाहं[3]।
नौमि तिथि थलह[4] प्रिथिराज साहं[5] ॥
राजसं तामसं वेग प्रगट्टं।
मुक्कियं अेक सानुक्क वट्टं[6] ॥२९२॥ १७००

सार सपत्त पत्ते तिरत्थं[1]।
मनो आबद्ध रुद्र इद्रा तिकत्थं॥
निड्ढरहि ढाल गय मत्त[2] मत्तं।
पुट्ठि[3] सावंत सामित्त रत्तं ॥२९३॥ १७०१

भूमि भारत्थि ढर सोइ पत्थं।
अत्थि बिअ हत्थ प्रथिराज हत्थं॥
विढे वीर सावंत[1] सा वीर रूपं।
जिसे सयल[2] सादूल सद्दे सजूपं ॥२९४॥ १७०२

उडे विगावाने स भाने उडतं।
जिरे अंकुलाये निकट्टे अनतं॥ १७०३
कपे काइरह लोह रत्ते सरंतं।
जिसो अनल आरंभ पारंभतं[1] ॥२९५॥ १७०२

इसो जुद्ध अनुरुद्ध[1] मध्यान हूवं ॥२९६॥ १७०४

---

[२९१] १. जाल
[२९२] १. सहरी २. सीसन्न ३. दीहं ४. थान ५. सीहं ६. त्रड्ढं
[२९३] १. रच्छं २. कच्छ ३. पत्ति ४. उड्डिय
[२९४] १. सामत २. सैल
[२९५] १. प्रारंभ पत्तं
[२९६] १. आबद्ध

नामिय असि ढिल्ली निसानं।
पुट्ठिरे पंग वज्जे निसानं ॥२९७॥ २१४६
चंपे चाइ चहुवान[1] हरि[2] सिघु नायो।
जिसे सयल[3] ते सिघ गज जूथ पायो ॥२९८॥ २१४७

कवित्त

करि जुहार हरिसिघ[1] नयो चहुवान पहिल्लो।
वरिय अनी सावरी लक्ख सूं लरयो[2] अकल्लो ॥
अगम कया[3] हो[4] फिरयो धरनि तिलतिल खुरखुदे।
इक्क[4] लक्ख सों भिरे इक्क[5] लक्खहि रन रुंधे ॥
तिल तिल तुरयो नही मुरयो मुरि हय हय आयास भउ।
इम जंपै चंद वरद्दिया च्यारि कोस चहुवान गउ ॥२९९॥ २१६१

दूहा

परत धरनि हरिसिंघ[1] कहु[2] हरिख पंगु दल सध्व[3]।
मनुह जुद्ध जोगिन पुरह तन मुक्यो सव गव्व[4] ॥३००॥ २१६२
पुनि[1] प्रिथिराजहि अत्थि दल बल[2] राठोर नरेश।
सिर सरोज चहुवान के भंवर सार[3] त्रिस[4] भेस ॥३०१॥ २१६३

कवितु

देखि[1] सुनहु[2] प्रिथिराज कनिक नायो वर[3] गुज्जर।
हम तुम्ह दुस्सह मिलनु स्वामि हुइ जाइ अपन[4] घर ॥
मो[5] रविमंडल भेदि जीव लगि सत्त न छंडउं।
खंड खड हुअ[6] रुंड मुंड हर-हार ज मंडउं ॥

---

[२९८] १. चौहान २. हर ३. सेन
[२९९] १. नरसिघ २. भिर्यो ३. काय ४. हुअ ५. एक
[३००] १. नरसिघ २. कहुँ ३. सब्ब ४. ग्रब्ब
[३०१] १. फुनि २. बर २. सब्ब ४ सम
[३०२] १. भौ २. आयस ३. वड़ ४ अप्प ५ हों ६. करि

इह[७] वंस भाजि[८] जानइ न कोइ हो पति पंक अलुज्झयउ।
इम जंपइ चंद वरद्दिया खट[९] सु कोस चहुवान गउ ॥३०२॥ २१६४

दूहा

वड हथ्थहि वड गुज्जरउ[१] जुज्झि गयउ वैकुंठ।
भीर सघन स्वामिहि परत चख कमधज्ज[२] अरि व्रंद[३] ॥३०३॥ २१७८

कवितु

धर तुट्टइ[१] खुर धार लाल[२] फुट्टे[३] सिर उप्पर।
तव नायो राठोर न्रिपति प्रिथिराज स्वामि छर॥
खग्गह सीसु हनंत खग्ग खुप्परिव खरक्खर।
स्रोनित बुंद परंत पंक विद्धिय[४] गयंद धर[५]॥
वि रचि लोह वरसिघ सुभ्र खंड खंड तन खंडयउ।
निडर[६] निसंक जुझंत रन आठ[७] कोस चहुवान गउ ॥३०४॥ २२०८

दूहा

समर[१] रठोर[२] निराठ[३] वर निडरु[४] जुज्झ गिरि जाम।
दिनयर दल प्रिथिराज कूं[५] चंपिउ पंग सम ताम ॥३०५॥ २२०७
चंपति पिछोरिय[१] गति[२] चखह हय पट्टन तनु देख।
तन तुरंग तिल तिज[३] करन भयो कन्ह मनु भेख ॥३०६॥ २२१२

कवितु

सुनहि[१] बात[२] विख रे त[३] लेहि बइठो दल रक्खिउ।
चिहुरे होइ[४] चंपंत स्वामि अदबुद[५] इहु पिक्खिउ॥

---

[२०२] ७. इन ८. भग्गि ६. षट्ट
[३०३] १. गुज्जरह २. निढढुर ३. दिट्ठ
[३०४] १. फुट्टै २. लार ३. तुट्टे ४ किद्धीय ५. धरघ्घर ६. निड्ढुर ७. अट्ठ
[३०५] १. सम २. रट्ठोर ३. रट्ठ ४. निड्ढुर ५. कौ ६. भय
[३०६] १. अच्छरि २. रिढ लगि ३. तिल
[३०७] १. सुनहु २. बत्त ३. पखरैत ४. चहूँ ओर ५. ओटह

पहु पट्टन पल्लानि कटक[६] उह हने गयंदह।
समर धीर संघरउ भीर बहु परी नरिंदह ॥
रुक्क्यो सु छगन जइचंद दलु सिर तुट्यो असिवर कढ्यो।
जब लगिग सहु[७] दल रुक्कियो तब सु कन्ह हयवर चढ्यो ॥३०७॥ २२१३

दूहा

चढन कन्ह सामंत हय जय जय कहै[१] सहु देव।
मनो कमल करि वर[२] किरन[३] कुइर पंग दल सेव ॥३०८॥ २२१७

कवितु

तव कान्हो चहुवान तुरिय पट्टनु पल्लान्यो।
हंस किरन कित उट्ठि मरन अप्पही पिछान्यो[१] ॥
कह करि असिवर लयो[२] गहव[३] गय[४] कुंभ उपट्टइ।
उह मारइ इहु धाइ देखि अरि दंतह[५] कट्टइ ॥
वह नर निसंक हय वय[६] सधर पिक्खहु चित्त कुचित्तयो[७]।
वह रुंड माल हर संठयो वह रवि रथ ले जुत्तयो ॥३०९॥ २२४७

दूहा

धरनह कन्हह परत ही प्रगट पंगु त्रिप हंक्क।
मन अकाल [संकरह हँसि गहिय तुट्ठि निधि] रंक ॥३१०॥ २२८३

कवितु

सिर तुटै रुंधयो गयंद कड्ढयो कट्टारो।
तिह समरी महामाइ देवि दीन्हो हुंकारो ॥

---

[३०७] ६. हटकि ७. सु तास

[३०८] १. करहि २. सु ३. कलिमल ४. भ्रमर

[३०९] १. पहिचान्यो २. लह्यौ ३. गहिब ४. गज ५. दतन ६. वर ७. कवित्तयो

अमिय कलस[1] आयास लिया अच्छरिउ उछ्गह।
भयो परत तिहि सद्द सद्द जय जय सु कहक्कह॥
अल्हन कुमार विभ्रम सुभो रन कवि मानहि[2] मनु मन्यो।
तिम थहि सो लोयन[3] गंगधर तिम तिम सकर सिर धुन्यो॥३११॥ २२९७

दूहा

धुनि सीस ईस सिर अल्हनह धन धन कहि प्रिथिराज।
सुनि कुप्यो अचलेसु[4] वर मही वरन दिवि राज॥३१२॥ २२९९

कवित्त

करि सु पैज अचलेसु भुकति चहुवान खग्ग गह।
अरि दल बल संप्परिग[1] पूरि धर भरति[2] रुधिर दह॥
मच्छ ति हय वर फुरहि[3] कच्छ गज्ज कुंभ विराजहि।
उवर हंस उड चलहि हंस मुख कमल विराजहि[4]॥
चउसट्ठि सद्द जय जय करहि छत्रपतिय परि संचरिग[5]।
वोहित्थ वीर बाहर भरिउ ढिल्लिय पति[6] चढियउ तुरिग॥३१३॥ २३१२

दूहा

अचल अचेत जु खेत हुव परिग पगु वहु राइ।
पट्टन वइ[1] पहु पट्ट छर विवु[2] विरवर धाइ[3]॥३१४॥ २३१४

कवित्त

दिनियरु सवि[1] दिन जुद्ध जूह चंपइ सावंतहि[2]।
पर उप्परि सर परइ परहि उप्परि धावंतहि[3]॥
दल दंती विच्छुरहि हय जु हय हय किन नंकति।
अच्छरि पर[4] हर हार धार धारनि झननंकति॥

---

[३११] १. सद्द २. रन क विमानह ३. लोचन
[३१२] १. संहर्यौ २. भरित ३. तिरहि ४. ति राजहि ५. संचरेय ६. दिल्लीपति ७. तुरिय
[३१४] १. छर २. उठे विझ ३. विरुझाइ
[३१५] १. सुत्र २. सामंतन ३. धावंतन ४. वर

जय जय जु घंट जुग्गिनि करह कलि कनवज ढिल्लिय वयर ।
सामंत पंच खित्तहि खपिग भिरत भंति भइ विक्खहर ॥३१५॥ १७३३

गाथा

विखहर पहट्ट परयं हय गय नर भार सार हत्थेन ।
रह रोस पंगु भरियं ओघरियं वीर बिबेन ॥३१६॥

कवित्तु

परयो माल चदेलु जिन्ह[1] धवली धर गुज्जर ।
परयो भान[2] भट्टी भुवाल घंटा[3] घर अग्गर ॥
परयो सूर सावरो[4] जेन वानो[5] मुख मुच्छहि ।
हसे जेत पावारु जेन विरदावलि अच्छहि ॥
निर्वान वीर धावर धनुह नव तर एक नरिंद दल ।
ए परत पंच भउ जुग पहर[6] अगनित भंजिअ पंग बल ॥३१७॥ १७१८

चढ्यो सूर मध्यान्ह पंग परतंग गहन किय ।
खभिर खेह खह मिलिय स्त्रवन इह सुनिय लीजु लिय ॥
तब नरिंद जंगली कोह काढीय[1] चंक[2] असि ।
घीर[3] घुम्मिलि घुंघरिय मनहु दल मंझ दुतिय ससि ॥
अरि अरुन रत्त कोतुक कलह[4] भयो न भवह भिरंत भर ।
सामंत निघट तेरह[5] परिग न्रपति सु पट्ठिअ पंच सर ॥३१८॥ १७१९

दूहा

दुइ सर[1] अस्व सि[2] पक्खरह दुइ न्रिप इक संजोगि[3] ।   १७७१
जुरि घर[4] अत्थि[5] न रत्थि[6] करि अब जगलवै भोगि ॥३१९॥ १७२३

---

[३१७] १. जेन २. मान ३. थट्टा ४. सामलौ ५. वानै ६. विप्पहर
[३१८] १. सुरनि २. कड्ढी ३. बक ४. घर ५. घुम्मरिय ६. कलस ७. पंचह
[३१९] १. वर २. नि ३. संजोइ ४. घर ५ अद्ध ६. निरद्ध

कवित्त

रयन[1] रास रावत[2] रनह रन रंग[3] रंग[4] रस।
उठत एकु धावत्त पंच वाहत्त वीर दस॥
वलि चालउ[5] मोहिल्ल मयंदु मारुव मुह मंधउ[6]।
अरुन अरि लंधिया पंग पारस दल खंधउ[7]॥
नारयन[8] नीर बंधउ वरन दिव दिवान[9] गो देवरउ।
कलहंत जीव[10] सामंत मुअ रहिउ स्वामि सिर सेहरउ॥३२०॥ १७७५

दूहा

संझ सपत्तिय त्रिपति रन द्विय[1] पारस परि कोटि[2]।
रहे सूर सामंत जकि दिखिय[3] त्रिपति तन चोट॥३२१॥ १७७०

कवित्तु

निसि नवमी सिरि चंदु हक्क वाजी चावदिसि।
भर[1] अभंग सावंत[2] वीर वरखंति मंत्र असि॥
अजुत[3] जुद्ध आवद्ध इस्ट आरंभ सत्त वर।
इक जीव दस घटित दस त ठिल्लहि सहस भर॥
दिट्ठउ न देव दानव भिरत सुहर[4] रत्त रत तिय[5] सु पल[6]।
सामंत सूर सोलह[7] परिग गन्यो न[8] पंग अभंग दल॥३२२॥ १९२६

छंद भुजंग प्रयात जाति

भयी शरीर टूकंक अंके प्रमानं[1]।
परे सूर सोलह तिके नाम आनं॥
परे मंडली राउ माल्हंत हंसो।
जिने हंकिया[2] पंग रा सख न गंसो॥३२३॥ १९२७

---

[३२०] १. रेन २. रावत्त ३. जंग ४. अंग ५. बारड ६. मघ्ये ७. खद्धे ८. नारेन ९. देवान १०. बीज

[३२१] १. बिय २. कोट ३. देखि

[३२२] १. भिरि २. सामंत ३. अयुत ४. जूह ५. रत्तिय ६. थल ७. सोरह ८. मोरे

[३२३] १. भये राय दुअ कंक इक्कै समान २. पारिया

परयो जावलो जाल्ह सावंत भारो।
जिने पारियै पंग खंधार सारो॥
परयो वारी[1] वाघ वाहे दुहत्थं।
भिरे पंगु[2] भग्गे भरे हत्थ वत्थं॥३२४॥ १९२८

परयो वीर जंदावली[1] राउ वाना[2]।
जिने नाखिया[3] नैन गयदंत नाना॥
परयो साह जो सूर सारंग गाजी।
दुहं सत्थ भख्यो भले हत्थ माझी॥३२५॥ १९२९

परयो पाधरी[1] राउ परिहार राना।
खुले सेरु[2] सारंगु ले पंग वाना॥
जवे उप्पटे पग्ग[3] आवद्ध नीरं।
तहां सांखुला सीह[4] भुज पारि भीरं॥३२६॥ १९३०

परयो सींघ सिघास सादूर[1] मोरी।
जगी[2] लोह अगी[3] छगी[4] जानु होरी॥
भिरयो भोजु अगो[5] नही सार जग्गे।
ढरयो पंग[6] मानो नही जूर[7] लग्गे॥३२७॥ १९३१

परयो राउ भोहाउ भो[1] चंद सक्खी।
इके कुसम नखो[2] इके कित्ति भक्खी[3]॥३२८॥ १९३२

दूहा

म्रित घर कुसल न जेतु सह लब्भ सु कित्तिय भूर।
तिहि मुख प्रगट सु पिड किय तिहि संघरि गय सूर॥३२९॥

---

[३२४] १. वग्गरी २. खग्ग
[३२५] १ जादौ २. वान ३ नषिया
[३२६] १. पद्धरी २. सेल ३. पग ४. सिह
[३२७] १. सादल्ल २. लगे ३. अंगं ४. लगे ५. भग्गै ६. मल्ल ७ जूह
[३२८] १. मोंहा उभै २. साखी ३. नषै ४. माखी

कवित्त

कलिन कल्यउ अरिजननु मिलिउ भर हर विनु भग्ग्यो।
अजस न लिय जस हीन भग्ग यो अगम न लग्ग्यो॥
पहु न लिअउ जीवंत गह्यो[1] अपजस नहि सुम्यो[2]।
कायर[3] जिम दबरि न रह्यो
चलि गयो न मंदिर रह्यो[4] मरन जानि झुक्यो अनिय।
.... भग्गुल धविय॥३३०॥ २३४९

दूहा

परत देखि चालुक्क धर करिय पंग दल कूह।
इम सु देव इंदहि[1] परस[2] रहे विरि[3] अरि जूह॥३३१॥ २३४३

कवित्त

राह रूप कम धज्ज गज्जि लग्ग्यो आयासहि[1]।
धारि तत्थ डर जानि फिरिउ[2] पांवारु[3] नन्ह[4] तहि॥
रुधि[5] मधु[6] जव करि जीव तनु तिलिमिलि पिउ[7] डसि।
रत्तु सीस अरि गहिग पानि सुद्धियइ[8] केस कुसि॥
करि त्रिपति सारु त्रिप पंगु दल अब्बुय पति जय सब्बु किय।
उग्गह्यो ग्रहति प्रिथिराज रवि सलख अलख भुजदान दिय॥३३२॥ २३६२

---

[३३०] १. गयौ २. सुन्या ३ ओर ४ दिसह

[३३१] १ करिग २. इन्द्रह ३. परसि ४. वीटि

[३३२] १. आकासह २. फिरयौ ३. पम्मार ४. न्हान ५. रुधिर ६. मद्ध ७. खंड ८ सोभियइ

जिते[१] समर लक्खन बघेल आहनति खग्गवर।
तिधर [तुट्टि धरनहि धुकंत निबरंत] अध धर ॥
तहाँ गिद्ध [रव रुरिग अंत गहि] अंतरु लग्ग्यो।
तरुन[२] तेज सब्बासु पमुकि[३] पावन घन चग्ग्यो ॥
तिहि सह[४] सीस[५] संकर धुन्यो अमिय बिंदु [ससि] उल्हस्यो।
विड्डुरयउ धवल संकिय गवरि डरिग[६] गंग संकर हस्यो ॥३३३॥ २३७२

दूहा

दीउ[१] दान पावार[२]जब अरि पंगह सब खेल।
मरन जानि मन मज्झ रिउ गिरि[३] लक्खिनह[४] बघेल[५] ॥३३४॥ २३६३
परत बघेल सुभेल[१] किय रठि[२] राठोर सुभार[३]।
जब दस कोस दिली रहिय फिरि तोंवर त पहार ॥३३५॥ २३७६

कवित्त

दल पंगनि राठोर आनि आनि चंपी ढिल्ली[१] धर[२]।
तब जंप्यो प्रिथिराज पंगु वंसह पहुरण हर[३] ॥
हरि हत्थहि हरि गहहि वान रक्खहि इनि बारह।
सेस सीसु कंपियउ दाढ दिल्ली भई भारह ॥
कहै चंदु इस अपुव सुनि त्रिप रक्खहि विंहु भुव भरयो।
फिरि कंपि संकि जयचंद दल तोंवर सिरि टट्टुर धरयो ॥३३६॥ २३८३

---

[३३३] १. जीति २. तरनि ३. पवन ४. नाद ५. ईस ६. टरिग
[३३४] १. दियौ २ पम्मार ३. लरि ४ लक्खन ५. बघ्घेल
[३३५] १. मेल २. रन ३. मार
[३३६] १. दिल्ली २. भर ३. नर

वेद कोस हरि सिघ उभय तिअ तिहि वडगुज्जर ।
इक्क बान हरनयन निडर नीडर भुइ मज्झर ॥
छगतु पत्तु पल्लानि कन्ह खचिय द्रिगपालह ।
अल्हवाल द्वादसनि अचल विद्या गनि कालह ॥
सिगार विंभ्क सालक्ख दिय पंगु राउ फिरि गेहु गउ ।
सामंत सत्त[1] जुज्झे प्रथम ढिल्ली पति[3] पिथिराज भउ[4] ॥३३७॥ २४०३

मुडिल्ल

ढिल्ली पति ढिल्लीय संपत्तउ ।
फिरि पहु रंग राउ ग्रह जत्तउ ॥
जिम राजन संजोगि सु रत्तउ ।
सुह दुह कहन चंद मनु रत्तउ ॥३३८॥ २४८७

दूहा

दिव मडन तारक सयल सर मंडन कमलानु ।
जस मंडन नर भर सयल[1] महि मंडन महिलानु ॥३३९॥ २४९२
पहिलहि[1] मंडन त्रिपति ग्रिह कनक कंति ललनानि ।
तिहि उप्परि संजोग[2] नग धरि रख्यो वलि वानि[3] ॥३४०॥ २४९३
राजन तिन सह प्रिय प्रमद तन कामिनि गिनि भोग ।
सरइ नि खलु लग्गत पलिनि त्रिग नयनन नि संजोग ॥३४१॥ २४९४
सुभ हरम्य मंडिम त्रिपति दिपति दीप दिव लोक ।
सुकल मुक्ख अग्रितु झरहि करहि जु मनुह असोक ॥३४२॥

छंद

अगर धूम[1] मुख गोउख[2] उन्नए[3] मेघ जनु ।
मोर मराल[4] निरत्त हिरन्नहि मित्तु[5] धनु[6] ॥
सारंग सारंग रंग पहुक्कहि पंखि रसि ।
विज्जल काक लमंति[7] झमक्कहि जासु मिसि ॥३४३॥ २५५२

[३३७] १. द्रग २. सथ ३. सोरो पुर ४ अय
[३३९] १. सु भर
[३४०] १. महिलन २. सजोगि ३. वलवान
[३४३] १. धुम्म २. गौखह ३. उनयो ४. मल्हार ५. मत्त ६. घन
७. काकल सानि

दादुर सोर.. .. जु नूपुर नारि घन
मिमिलिसुर[1] मध व्रत माधुर मंजु मन ॥
सालक पंच पचीस प्रजंक तदून तस ।
तह तह अथि सुर चीन्ह प्रर्वाण ति दासि दस ॥३४४॥ २५४३

कैव्र युव[1] यूथ[2]ति वाद[3] प्रमादति मंद गति ।
के चल अचल वायु निरुप्पहि सद[4] रति ॥
के वर भाखि पराक्रिति संक्रिति देव सुर ।
के गुन[5] ग्यान[6] सुजान विराजहि राज वर ॥३४५॥ २५४४

इह विधि विलसि विलास असार ति सार किय ।
दिव्र[1] सुख जोग संजोगि प्रिथी प्रिथिराज जिय[2] ॥
अहनिसि . ... जान न मानिनि प्रौढ रति ।
गुरु बंध धव भूति लोइ भई विपरीत गति ॥ ३४६॥ २५४५

लघुतम रूपान्तर की पुष्पिका

संवत् १६६७ वर्षे शाके १५३२ प्रवर्तमाने आस (I) ढ मासे
शुक्लपक्षे पंचमी तिथौ महाराजाधिराज महाराजा
श्रीकल्याणमल्लजी तत्पुत्र राजा श्रीभाणजी तत्पुत्र
राजा श्री भगवानदास जी पठनार्थं ॥
श्रेय कल्याण श्री शूभं भवतु ॥

आ रासो धारणोज गामना बारोट पथु वजानो छे आने ते धारणोज वाला कीशोरदास हेमचंद शाह मार्फत कॉपी करवा मलेल छे.

---

[३४४] १. मिलि सुर
[३४५] १. जुव २. जूथ ३. जवादि ४. सरद ५. वर ६. बीन
[३४६] १. दै २. प्रिय

शब्द-कोश

अ

शब्द	स्थान	अर्थ
*अकन	७६ ३	
अके	३२३ १	अ का
अकुरिग	१८२ २	अकुरित
अंकुरे	११२·१	
अकुलाये	२६५·२	अकुलाये
अकुसह	२३·४	अकुश का
अखुली	२४१·१	अकुर
अखिय.	१२०·३	(आख्या) कहा
अखी	१५६ १	चाहना (आकांक्षा)
अग	६०·३, ६७·४, ६८·४, १३०·४, १६७·३, १७१·२, २६५ ४	
*अंगना	१६२·१	नारी
अगमै	२७४·६	अंगीकार करना
अंगह	६१·१, १६२·१	अंग का
अगा	२२५·२	अंग
अंगीक्रित	६१·१	अगीकृत
अगे	२३२·२	अग मे
अंगु	१३२·४	अंग
अगुरी	३३·१	अगुलि
*अगुलि	७८·३, १६५·२	
अंग-रंग	६८·३	अंगराग
*अंचल	३७·१, १६२·३, ३४५·२	अचल
अंगुलिय	१७०·३	अंजलि
अजुलीय	१७१·१	अंजलि
अडंगुले	२७१·३	अनंग
*अत	७५·४, १७७·४, २६४·४, ३३३·३	
*अतर	२७०·५	दूरी
अतरे	२७४ ५	मे
अदोलिता	६५ १	आन्दोलित
अध	१७०·४	अधा
अधियारी	२७०·१	अधकार
*अब	२२ ४	माँ
†अबर	५६·१, २०६·१	आकाश
अभ	२०४·२, २०६·३, २८३·२	अभ्र
†अभसु	२५·२	जल
*अभोरुह	८८·१	कमल
असु	७६·१	अश्रु
अकल्ले	२६६·२	अकेला
अकाल	१५३·२, २२८·२, ३१०·२	असमय
अकुल्ल	१६२·१	अकूल
*अखंड	२४४·१	
अखारे	२५६·२	अखाड़ा
अख्खी	१६६·२	देखा
अगणिन्त	२३१·१	अगणित
अगन्नित	३१७·६	अगणित
अगम	७०·१, ३३०·२	अगम्य
अग्ग	२५४·२	अग्र
अगर	१२६·१	अगरु

* तत्सम † फारसी

अगार	७१·४	अंगार
अग्गलउ	१०७·२	अग्रिल, अगला
अग्गे	८४·२	अग्रे
अग्गैं	२७०·१	अंगे
अगार	३१७ २	अग्र
अगी	३२७ २	अग्नि
अगो	३२७ ३	अग्रे
*अघ	२६·२	पाप
अचल	३१४·१, ३३७·४	स्थिर
अचलेसु	३१३ १	अचलेश, राजा
अचलेसुवर	३१२·२	अचलेश्वर, राजा
अचार	१८६ २	चारा
अचेत	३१४ २	अचेतन, बेहोश
*अच्छ	२२५·२	स्वच्छ
अच्छइ	१६८·४	अच्छे
अच्छरि	३१५ ५	अप्सरि
अच्छरी	१७३·२, २२५ २	अप्सरा
अच्छहि	१६२·२, ३१७·४	स्वच्छ
अच्छहु	१५०·२	अस्ति
अच्छारिउ	३११·३	अप्सरा
अच्छि	३२ २	अक्षि
अच्छे	१६·३	अच्छे
अछार	१८०·१	छार
अज	१८१·१	आज
अजुत	३२२·३	अयुत, अयुक्त
अट्ठति	२०६·२	अष्ट इति
अट्ठिय	२५६·२	अस्थित
अड्ढा	२५१·१	आधा, अर्ध
*अति	१४६·२	
अती	२६२·२	अति
अत्ती	५६·२	अति
अत्थ	११३·१	अस्त्र
अत्थि	२६४·२, ३१६·२	अस्त्र
अदब्बुद	३०७·२	अद्भुत
अद्ध	३८ १, २०४·३	अर्ध
अद्रिष्ट	६३·२	अदृष्ट
अध	३२३ २	अर्ध
*अधर	३८·१, ५०·३	
अध्ध	२७०·१	अर्ध
*अनल	२६५·४	
*अनिल	२३६·२	
अनी	२७०·५, २८३·४	सेना
अनु	१५१·२	अन्यथा
अनुरत्तिय	१६३·४	अनुरक्त
अनुसरहि	११०·४	अनुसरण करना
अनुसरिग	११२·४	अनुसरण किया
अनुरुद्ध	२६६·१	अनिरुद्ध
*अनुहार	११०·६	
*अनूप	१२१ १, १४२ १	
अनेक	३५·२, ६७ २, ८७ ३, ११५ २, ११९ २, १७३·१, १७७ ३	
अनेग	२८५ १	अनेक
अन्नोन्न	६१·४	अन्योन्य
*अनग	३६·१, १७१·२	
*अनंतं	२६५·२	
अनंदने	२४२ २	आनद (न)
अपजस	३३०·३	अपयश
अपन	३०२·२	अपना
*अपर	३१५·६	
अप्प	२४६·२, २७६·३	अपना
अप्पण	२७५·६	अपना
अप्पतं	१९·१	अर्पित
अप्पयं	१७७·४	अर्पितं

शब्द	संदर्भ	अर्थ
अप्पहो	३०६ २	अपना
अप्पउं	१६८·३	अर्पित करूं
अप्पिग	१२३·१, १४८·१	अर्पित किया
अप्पिया	१४८·२	अर्पित किया
अप्पु	४८·४, २७४ २	अपना
अप्पो	१०० ३	अपना
अपा	१३८ २	अपना
अपु	२७ ३	अपने आप, स्वयं
अपुब्ब	७४·३	अपूर्व
अपुव	३३६·५	अपूर्व
अपूरव	२४५·२	अपूर्व
अपति	१७१ १	अर्पित
अब	१८४·३, ३१६·२	अब
अब्बीर	६४·३	अबीर
अब्बुय	३३२·५	आबू
अब्बुअ	२०८ ३	आबू
अब्भ	१२६·२	अभ्र
*अभिमान	६६·१	
अभंग	३२२·२, ३२२·६	अभग्न
अमग्ग	७१·१	
अम्महि	१६८ २	
अमरच्छरि	२६·२	
अमलत्तिन	२६·३	अमलत्व
अमिय	३११·३	अमृत
अम्रित	१६३ २	अमृत
अम्रितु	३४२·२	अमृत
अमीलि	६५ २	
अयास	१६५·२, २८६·४	आकाश
*अर्क	१५·१, ४६·४, ५८ २, ६५·२	सूर्य
अरंभ	२०६·३	आरम्भ
अरधंगे	२६·३	अर्धांग
अरप्प	१३४·३	अर्प
अरब्बी	१६०·१	अरबी
*अरविंद	५६·४	
*अरि	३०·१, ६४·४, १८६·३, २७४·६, ३३०·२, ३३१·२	
अरिजननु	३३०·१	
*अरिदल	३१३ २	
अरिन	८८·२	अरि (बहुवचन)
अरिय	१३ २	अरि
अरी	२८६·२	अरे
अरु	२·२, ८०·२, १६०·२	और
अरुन	३१८·५	अरुण
अरुनै	५०४	अरुण
अरोह	५१ २	आरोह
*अलक	४२ १	
अलक्कं	५१·२, ११८·२	अलक
अलक्ख	१३८ ३	अलक्ष्य
अलख	३३२·६	अलक्ष्य
अलग्गिय	१६०·१	अलग्न
अलप्प	१६० ३	अल्प
अलाप	१२२·१	आलाप
*अलि	२८·२	
अलिय	१२८·१	अलि
अलुज्झ	५२·२	अलुब्ध, उलझ ?
अलुज्झउ	३०२·५	अलुब्ध
अल्हर	३११·५	अल्हड
अल्हन्यो	३३३·५	अल्हड़पन किया
अल्हवाल	३३७·४	अल्हपाल
अवद्ध	४०·२, २६१·२	आबद्ध
अवन्न	११८·२	अवर्ण्य
अवास	१६५·१, १८५ २	आवास

अवासि	४४·२	आवास में
अवासन	१६४·२	आवासो
अवरेख	४८·३	अवलेख°
अस	२७६·३	ऐसा
असनान	१०१	स्नान
†असमनह	२०२·२	आसमान
असाढ़	११५ २	आषाढ़
*असार	३४६·१	
*असि	१०८.१, १२५·१, १६६·२, २६८·२, ३१८·३	
असिय	२३०·२	असी (अशीति)
*असिवर	२६६·४, ३०६·३ ३०७ ५,	
अस्सि	२६७·१	असि
असी	२७४·६	अशीति
असु	१६१·२	अस, ऐसा
असोक	३४२·२	अशोक
अस्टमी	२७० २	अष्टमी
*अस्तमित	२६६ २	
अस्व	१७५·१, ३१६·१	अश्व
अह	३४६ ३	अथ
अहवा	१६७·२	अथवा
अहिह	६४·३	अस्ति, है
अहारे	१५४·१	आहार में
अहुट्ठिय	२७१ २	अधिस्थित

आ

आइ	८७·१, ८६·१	आकर
आइस	१२५.५, १७०·१, १४४·१	आदेश
आउ	१०६·१, १४५·३	आओ
आकास	६०·१, १५६·४	आकाश
*आगत	२६८ १	
*आगमे	२५७ ४	
आचरे	१७३·४	आदरे, आदर किया
आठ	६७·२	अष्ट
*आडंबर	५५·३	
आदरु	१०६·१	आदर
*आदि	२४५·	
आनि	२०८·४	ले आकर
आने	१५४·२	ले आए
आनं	३२३·२	अन्य
आपए	१७१·४	अर्पित किये
आपस	२३·२,	परस्पर
आभरनं	२४ २	आभरण
आयान	१५१ १	अजान, अज्ञानी
आयास	२६६·५, ३११·३	आकाश
आये	२७८·१	
आरोहि	५५ १	चढकर
*आरंभ	२२६·२, २६५·२, ३२२ ३	
आलमी	३८ २	
आलापु	१४५·३	आलाप
आली	२८०·२	अलि
†आव	२७६·५, २७६·२	आम्र
आवज्झ	२२६ ४	आबद्ध
*आवद्ध	२६३ २, ३२२·३, ३२६·२	
आवध्य	१२·२	आबद्ध
आवधे	१५५·२	आबद्ध
आवज	१३४ २	आबद्ध
आवहि	१६८·४	आता है
*आवास	१८४ ४	

आवि	६७·२	आकर
आवै	१०४·१, १५६·४	आता है
आस	१५६·२, १७५·३	
*आसने	६८·१	
आसाढ़	२५७·४	
आहनंति	३३३·१	
*आहार	४७·३	
आहि	८४·२	है
आहुट्यौ	२७०·४	अधि+√ स्था-
आंगमइ	३ ६	
आंतिकि	६५·४	अन्त्य

इ

इंद	८०·१	इंदु
इंपाई	३३१·२	
इंदाति	२६३·२	
*इंदु	११·४, ३२·२, ४८·२, ६३·४, १२६·४, १६६·१	
इंदुराज	६ ३	
इंदो	८८·४	
इक	३·६, ६·३, १०२·१, ३२२ ४,	एक
इक्क	६ २, ११०·४, १७७·२, २७६ ४, २६६·४, ३३७·२	
इक्कावनइ	१·१	
इक्कन्त	१६०·४	
इक्कु	३·६, १६०·४	
इक्के	३२८·२	
इच्छु	१२३·२	इच्छा
इत्त	६६·२	इतना
इत्तनहि	२३८·३	इतना
इत्तनउ	१४६·५	इतना
इत्तने	२६६·२	इतने
इत्तु	११·२	अत्र
इते	१६·२	इतने
*इतो	२७५·६	अत्र
इनिहरि	१०६·२	अनुहार
इनि	१२२·२, १६६·३, ३३६·३	इन्हें
इम	५५·३, ११०·२, २७०·६, २६६·६, ३३१·२	ऐसा
इसो	२६६·१	ऐसा
इस्ट	३२२·३	इष्ट
*इह	१४·१, ३२·२, १०६·२, १२२·१, १४५·२, १६५·१, ३१८·२	यह
इहति	१४६ १	यह
इहि	११०·६, २७७ ५	इसे
इहे	१६१·३	इसे
इहै	२६६·५	यही
इहु	१६६ २, ३०७·२	यह

ई

ईस	२५·१, ५१ ४, ३१२ १	ईश
उंक	११८·२	
उखारे	२६०·२	
उग्रलो	३३२·६	
उग्रो	२२६·२	
उच	२७·२	उच्च
*उच्च	३७·२	
उच्चरे	६१·४, ६४·१	उच्चारण किया

*उच्चार	६० १	उच्चारण	*उत्तर	१३.२ १४ २, १६१ ३	
उच्चारहि	८६ ४	उच्चारण करता है	उत्तरयो	१०० ४	उतरा
उच्छु	१४१ २		उत्तरिय	६'१	उतरो
उच्छुरे	३६·१, २२७' १	उछले, उछाले	*उदय	२७२·१	
उछंग	१७३ २	उत्सग	उद्दगह	३११ ३	उर्ध्व अंग
उछिये	११·५		*उदित	११ १	
उजग्गे	६४'१	जगे	उदै	४६ ४, १४६ २	उदय
उज्जले	३७ २	उज्ज्वल	उद्धरे	६६ १	उद्धार किया
उज्जेये	२३३ ३		उन्नये	३४३ १	झुके
उझकि	१६३ ३	उचक कर	उन्नयो	६४ २	झुका
उटकि	६४.४		उनरोह	१३७'१	
उट्ठयइ	६७ १	उठता है	उनिहारि	१४६·२	अनुहार
उट्ठि	१६४ २, १८४ २, ३०६.२	उठकर	उने	२४० १	उन्हे
			उपट्टइ	३०६'३	उत्पाटित होता है
उट्ठियं	१४६ १, २५७'१	उठा	उपारे	२६० १	उखाड़े
उठति	११६·१	उठते है	उपंग	६८·२	ऊपरी अग
उठत	३२० २	उठता है	उपगा	२२३ २	
उठिग	११२·३	उठा	उप्पज्यो	१२ २	उत्पन्न हुआ
उठित	८४'१	उठा	उप्पमा	१५४'४, २२७'३	उपमा
उठिते	१७ ३		उप्पमे	५२ ३	उपमित किया
उठे	२०४३		उप्पर	३०४ १	ऊपर
उठ्यौ	१४६५	उठा	उप्परहि	१८० १	ऊपर
उठति	३७'१		उप्परि	३१५ ३, ३४० २	ऊहर
उडंतं	२६५'१	उड़ते हैं	उप्परे	१५१·४, २८४ ४	ऊपर
उड	८'१, ३१३'४	उडा, उड़कर	उप्पटे	३२६ ३	
उड्डु	१३४ २	उडकर	उभ	१८२ १	उभय
उडिय	३'५	उड़ा	उभद	१६७·३	
उडे	२५८ २, २६५'१		*उभय	३१ १, १६७ १, २६८ १ ३३७ १	
उड्डुं	६४'३				
उड़ि	४८ ४				
उतंगं	५३·३	उत्तुग	उभार	२६२ २	
—गा	२२५ १		उभै	५१ ४	उभय

उभ्री	१४०३	उभरी
उवर	३१३ ४	उबरना
उये	१५ २	उगे
*उर	४८ २	उर की
उरक्की	१५६ ३	
उरद्ध	१३७ १	ऊर्ध्व
*उरमाल	२८ १	
उरिल	३१.३	
उलट्टि	१३६ १	उलट कर
उलिच्चि	७१ ४	
उवंत	७६ २	उगते हैं
उव	११० ३	उगा
उवै	१०७ १	उगता है
उस	५४ २	
उह	३०७ ३ ३०६ ४	वह
उहइ	१४.१	वही

ऊ

ऊखवन	२०७ २	
ऊघट्ट	१५७.१	उघरा
ऊनी	२०६ ३	ऊन
ऊयो	१२६ २	उगा

ए

ए	६८ ३ ८८ ४, १४० ४, १४५ ४ ३१७ ६	ये
*एक	१० १, ८७ ४, ६६ ४, १२२.१, १३६ १ २२६.१ २७४ ३ २६२ ३, ३१७ ५	
एकइ	११३ १	एक ही
एकइ	११३ १	
एकु	३२० २	एक
एग	१८६ १	एक
एडि	५५ ३	एड़ी
एम	१७४ १	ऐसा
एमि	२३२ ३	ऐसा
*एव	२००.१	ही

ऐ

ऐन	४६ १	नयन
ऐराव	१६.२	ऐरावत

ओ

ओउ	६८ ४	वह
*ओप	७७.४	
ओर	४० २	
*ओस	१५६ ४	

अ

ओहि	२३० १	

क

*कंकण	१७६ २	
क[illegible]न	७६ ३	
ककम	१८३ २	कुङ्कुम
*कचन	३२ ४, ४२ २	
कचू	५२ १	कञ्चुक
कटा	१४० २	
कंठ	२० १, १६० २, १६३ ३ १५५ २ १७१ ४	
कंठाव	३१.१	[illegible]
*कठि	६८ १	कठ में
कंटोल	१६० २	कंठ का
कंठै	६५ ३	कठ में
कंड	२० १	कांड

कन्हह	३१०·१	कृष्णका
*कपट	१२१·२	
*कपोलं	५१·१	
*कपोल	३७·२	
कब	५७·२	
कव्व	४३·१, ८६·३	काव्य
कबंध	२०९·२, २३८·३	
*कमल	३१ १, ९४·२, १७०·३, १९३·२, ३०८ २, ३१३·४	
कमलिनि	१६७·२	कमलिनी
कमठ्ठ,	२४४·२	कमठ
कमधज्ज	३०३·२	कामध्वज
कमंडलु	३३९·१	कमंडल
कमडले	१८·१	कमंडल में
कमान	२८८·१	
कम्मान	२६१·३	कमान
कया	२९१ २	काया
कर्न	७६·२, १०१·१	कर्ण
*कर	५२ १, १४५·५	हाथ
करइ	१६२·२, ३१५·६	करता है
करउ	१९८ ३	करूँ
करकं	२६३·२	हड्डी
करक्कसं	१३४ ३	कर्कश
करकादि	२०३·३	
करज	२९·२	
करति	६५·३, १२१·२, १२२·२	करते हैं
करतार	४५ २	कर्तार
करन	३०६·२	करना
करन्नु	१७१·२	
करने	१६७·२	

करयो	२८५·३	किया
करस	३२·४	
करहि	४३·१, ८९·२, १४२·२, १४५·५, ३४२·२	करते हैं
करहि	५·२	करते हैं
करहु	८२·१	करो
कराउदिय	२०८·२	कला उदितं
करारं	६·१, २६२·१	कड़ा
करि	४८·४, ७६·३, ११२·१, १४६·१, २९२·१, ३०९·३	कर में, करके
करिउ	८६·२	किया
करिक्क	८१·२	
करिग	१६२·१, १७८·२	किया
करिब्ब	३५ १	कृ+तव्यत्
करिमल	३०·१	
करिय	३३१ १	किया
करिस्स	१७६ ३	करि स
करिस्सु	१७६·३	करि सु
करी	२८६ १, २८६ ४, २८९ १	
करु	१६८ ४	करो
*करुणा	२९ ४	
करे	१८९ २	
करेरी	२२६ ४	
करो	२७५ ५	
*कल	२३ १, १६७·२, २०५ ५	
कलऊ	८८ २	कलियुग
कलक्कला	१३३ १	कलकल
कलंगी	५१ १	

कलस	१५ २, १२४ १, ३११ ३	कलश
कलह	३१८ ५	
कलहंत	३२० ६	कलह करते हुए
*कला	१४० १	
कलाहासियं	१०५ १	कल हास करनेवाली
कलिंदी	५१ १	कालिंदी
*कलि	२६७ २, २७४ ५, ३१५ ६	
कलिकार	५९ ४	कलिकाएँ
कलिन	३३० १	कलियाँ
कलिमले	२० १	कलि-मल मे
कल्लि	१२३ २	कल
कल्ले	२९० २	
कल्यउ	४३० १	
*कवि	८७ १, ८९ १, ९० ३, १२३ १, २८० १, ३११ ५	
*कविता	१२६ १	
कवित्तनौ	२७९ ६	कवित्व
कवियन	३२ १	कविजन
कवियहि	८७ १, ८९ १	कवि को
*कविराज	८३ ४	
कसत	७५ ३	कसा हुआ
कसिक्कसि	७६ १	कसा-कसाया
कसीस	२८८ २	कौशीष
कह	४७ ३	को, के लिए
कहत	३८ २	कहता है
कह	२७ ३, ३०९ ३	कहा
कहइ	३२ १, ८५ ५, १८८ २, ३०९ ४	कहता है
कहक्कह	३११ ४	कहकहा
कहणौ	२८० १	कहना
कहत	१४९ ५	कहते हुए
कहतु	३१५ १	कहता है
कहन	२७५ २, ३३८ ४	कहना
कहहि	९ ३, १४९ ६	कहते हैं
कहारो	३११ १	
कहायो	२७५ २	कहलाया
कहि	८७ ४, १०७ २, १२० ३, १२१ १, ३१२ १	कहकर
कहिग	१३ १	कहा
कही	४३ २	
कहु	१५२ २, २०२ १, ३०० १	का
कहु	१६८ २	का
कहू	१६ १, ३५ २, ९१ ३	
कहे	७४ २, ८२ १, २७९ २	
कहेस	१३ २	कहा
कहै	१४९ ३, ३०८ १	कहता है
कह्यो	८१ २, १०६ १	कहा
काइर	१९८ २	कायर
काइरह	२९५ ३	कायर का
कांतिहर	२० १	
कांता	१४१ १	
काज	९ ४, २९ १, ५९ २, २२९ १	कार्य
काढीय	३३८ ३	काढ़ लिया
कान्लकलि	१४१ २	
कान्हौं	३०९ १	कान्ह
कामकला	१४० २	कामकला
काम	४० १, ४२ ४, ११६ २, १३२ २, १७६ २, १८८ १ १९४ २	

कामसी	१७५·४	
कामहर	१६५ २	काम को हरने वाला
कामा	१९७ २	
कामागनि	१९० २	कामाग्नि
*कमिना	१३९ २	
कायर	३३० ४	
कारणइ	१·२	कारण
कारन	४५·२	
कारा	१५५ ३	
काल	१७६ २, २४५·२, २६६१	काल का
कालह	३३७ ४	
कालेषु	१८८ १	कालों मे
कालेसु	१८८ २	कालों मे
कि	९५ १	क्या
कि	१६५·२	
किउ	१०५ १	किया
कित	३०९·२	कहाँ
कितकु	१०७·१	कितना
कित्ति	२७७·५, २२८·२	कीर्ति
कित्तिय	३२९·१	कीर्ति
कितोकु	१०७·२	कितना
किननंकति	३१५·४	
किनहि	८१·२	किन्हें
किनि	९२ ३	किन्हें
किन्हौं	३·५, ९०·१, १४९·५	किया
किधौं	८६·३	या
किधुं	१६५·२	या
किमि	९२·२	क्यों
किय	८३·२, ९८·२	किया

किय	१०३ २, १२६·१, २८५ १, ३१८ १, ३३२·५	किया
कियो	४६ २, ८५ ४	किया
कियउ	१४५·३	किया
किरक्कि	१३६·१	
किरण	१५ १, २८९·१	
किरन	३०८·२, ३०९ २	किरण
किरनीन	११·४	किरणों
किस	२५ ५	कैसा
किहु	१३९·२	किसे
की	२०९ १, २७७ १	
*कीच	७१·४	
कीजइ	६० ४	कीजिए
कीत	५६·२	किया
कीन	२७२·४	किया
कीने	१९०·३	किए
कीयो	८८ २	किय
*कीर	३८·१, ६५·१, ७४·२, ७८·४, ९४·६, १२९·२	
कीरती	२७७·५	कीर्ति
*कुंकुम	१२४·१	
कुंडली	१३७·३	
कुंडोनु	५४·४	
*कुंद	२४२·२	
*कुंभ	१४१·२, ३०९·३, ३१३·३	
कुंभर	१४१·३	हाथी
कुकुम्भ	५४·४	कुकुम
कुच	३६·१	कुच
कुचित्तयो	३०९·५	कु+चित्त०
कुछु	१२३·२	कुछ

कुड्ढ्यो	३११·१	कुढ़ा
कुप्पियो	२६१·१	कोप किया
कुप्प्यो	३१२·२	कोप किया
❀कुमार	८२·१, ३११·५	
कुमुदिनि	२६७·२	
कुरंग	१६·४, ६६·२, २६४·२	
कुरम्म	२६६·५	
कुल	५२·४, १५२·१, १६२·४, २७६·३	
कुल्लये	२४३·१	कूल में
कुलि	१७६·३	कूल
❀कुवलय	४६·१	कमल
कुवेरी	२२७·२	
कुसम्ह	१३४·२	कुसुम
कुसल	३२६·१	कुशल
❀कुसुम	६५·१, ३२८·२	
कुसि	३३८·४	
❀कुसुमित	२८·२	
❀कुहर	३०८·२	
कू	३०५·२	का
कूरंभ	३·५	(नाम विशेष)
कूरंभे	२०६·३	(नाम विशेष)
❀कूल	२५२·१	
कूह	३३१·१	क्रोध
के	६१·३, ८८·३, ११६·२, २५५·२, ३०१·२	
केम	१०·४	कैसा
केरी	२२६·२	की
❀केलि	२३·१, ५२·४, १७०·३	
केस	३३२·४	केश
❀केसरी	३५·१	
केहइ	२७६·३	कैसा

केहरीन	१७४·२	केसरियो को
कै	२·२, ६१·१, १०१·२	या
कैव	३४५·१	या
को	६०·३	कर्म परसर्ग
को	६४·६	कौन
कोइ	४०·१, ३०२·५	कोई
कोकनंदं	५२·१	कोकनद
❀कोकिलं	१२०·१	
कोकिले	११६·१	
❀कोट	२५५·२	
❀कोटि	५८·२, ६१·२, १६६·२, ३२१·१	
कोतुक	३१८·५	कोतुक
कोतिग	२०५·४	कौतुक
कोद	२३४·१	कोना, कोर, ओर
❀कोप	२८८·१	
कोपिया	२५६·४	कुपित
कोपीन	६१·२	कौपीन
❀कोमल	१७०·३	
कोरि	६६·२, १८६·३, १६८·२	कोर
❀कोल	२४६·१	
कोस	१७६·३, २३३·४, २५६·४, २७०·५, २७६·३, ३०२·६, ३३५·६	क्रोश
कोह	३१८·३	क्रोध
कौन	२१८·१	
क्यूं	१५४·४	क्यों
क्रितचंगे	२६२·२	चंग करने वाली
क्रितभगे	२६·२	भंग करने वाली
क्रियरण	२७८·३	क्रिया

*क्षात्र	६६·१	
*क्षिति	७८·२	पृथ्वी

ख

खंच	२५१·१	खींचना
खंचि	२८८·२	खींचकर
खंचिय	३३७·३	खींचा
*खड	६८·३, २२७·३, ३०२·४, ३०४·५	
खंडयउ	३०४·५	खंडित किया
खंडियउ	२७८·५	खंडित किया
खंधउ	३२०·४	स्कंध
खधार	३२४.२	कंधार, स्कंधावार ?
खंभ	४२·२	खम्भा
खग्ग	२५६·४, ३१३·४	खड्ग
खग्गवर	३३३·१	खड्गवर
खग्गह	३०४·३	खड्ग का
खट	३०२·६	षष्ठ
खत्त	६५·३	क्षित, क्षेत्र ?
खत्ति	१७३·२	क्षेत्र
खन	१६०·३	खोदना
खपिग	३१५·६	खप गया
खमिर	३१८·२	
खरब्भर	३०४·३	खलबली
खरह	२७२·१	तेज
खह	३१८·२	खेह, छार
खाडयो	२५६·४	खंडित किया
खिच्चिय	१६६·२	खींचा
खिणि	४·२	क्षण
खित	*१५·२ २७८·६	क्षेत्र
खित्तहि	३१५·७	क्षेत्र में
खीन	५३·४	क्षीण
खुद	१६२·४	खूंद
खुद्ध	१३३·४	क्षुब्ध
खुदत	१६०·३	खूंदना
खुपरिव	३०४·३	खप्पर
खुले	११६·१, ३२६·२	
खुरखुदे	२३६·३	खुर मे खोदना
खुरति	४·२	खुर
†खुरसान	१०३·३	खुरसान
खुत	२६२·१, ३१३·१	क्षेत्र
खेत	३१८·२	
खेध्यो	१०१·२	खेदना, भगाना
खोलत	६२·१	खोलना है

ग

गग	१६२·१, १७३·२, २४३·१	गंगा
गंगह	३२·४	गंगा मे का
गंगधर	२७६·६, ३११·६	गंगाधार
गंगधार	५१·४	गंगा की धारा
*गंगा	१४३·४, २२४·४	
*गंगामुख	६६·३	
गंगे	२६·१	हे गंगा
गंज	३६·२	नष्ट करना
गंजन	३०·१	नष्ट करना
गंजहु	६२·२	नष्ट करो
गंजि	२७७·१	नष्ट करके
गठही	१७४·	गाठ देना
गंठि	१७७·२, १८७·२	ग्रंथि
*गडस्थली	१४१·१	
गडीर	२२४·३	
गंदे	२७·३	
*गध	११७·१, २२२·०	

गंध्रव	२२·१, २७·१	गधर्व	गयंदा	१६·१, ३०४·४,	
❋गंभीर	२२·४			३११·१	
गम्मो	३२३·४	ग्रस्त	गयदनि	२२२·४	
गउ	२९६·६, ३०२·६		गयदह	३०७·३	गजेन्द्र का
	३७७·५	गया	गयउ	३०३·१	गया
गगन्न	६८·३	गगन	गये	१६०·४, २६३·४,	
❋गज	१४१·१	गज		३६०·१	
❋गज	६४·४, १५७·२,		गयो	७९.४, ८३·१,	
	१८०·१ १८२·१			१४५·४	
	१९६·२, २६८·१		गयदंत	३२५·२	गजदत
	२१३·३		गरु	८५·३	गुरु
❋गजपति	६२·२		ग्रवरि	३३३ ६	गौरी
❋गजराज	२८३·१		गव्व	३००·२	गर्व
गज्जि	३३२·१	गर्जना करके	गसन	२७१·१	ग्रसते हैं
गज्जुर	२७५·३	गुर्जर	गह	११०·२, ३१३·२	ग्रह
गड्ढे	१५५·१		गहग्ग	३९·१	गहगह
गणि	२३१·१	गिनकर	गहणो	२८०·१	ग्रहण
गणै	११०·२	गिनता है	गहन	२४७·२, ३१८·१	ग्रहण
❋गत	२७·२, २६७·१,		गहनी	२०·२	ग्रहण करने वाली
	१६८·१, २८६·३	गया	गहब्ब	३०९·३	ग्रह्+तव्यत्
गत्त	२७१·३	गात्र	गह्यो	७९·२, ८१·२,	
गत्ते	६२·४	गात्र मे		३३०·३	गहा
❋गति	२७६·२, ३०६·१		गहरन	८४·२	रण में गहा
	३४६·४		गहहि	११०·४, ३३६·३	गहता है
गन	२७·१, १८०·१	गण	गहि	११०·४, १३५·६,	
गनि	३३७·४	गिन कर		१४८·२, ३३३.३	ग्रहण करके
गन्यो	३२२·६	गिन कर	गहिग	३३२·४	गहा
गब्भ	५२·४	गर्भ	गहिय	३१०·२	गहा
गय	५७·१, ८१·१,		गहियो	२३८·४	गहा
	३२२·४, २४०·१,		गहुग्गह	१९९·१	गह गह
	२८०·२, ३०९·३	गज	गहो	८८·२	ग्रहण किया
गयंद	५३·३	गजेन्द्र	गाइ	७४·२	गाकर

शब्द	संदर्भ	अर्थ
गाजनै	१०२·३	गर्जना
†गाजी	५६·४, ३२५·३	
गाजे	२५७·४	गरजे
गावही	६८·१	गाते हैं
गाहंतो	२७७·१	अवगाहन करते हुए
गाह	१५७·२	गाथा
गिनि	३४०·१	गिन कर
गिनै	५७·२	गिनता है
गिद्ध	३३३·३	गृद्ध
गिद्धी	२६४·४	गृद्धिनी
गिरंत	२०६·२	गिरता है
*गिरि	२६·४, ६४·५, १०१·२, ११०·४, ३०५·१, ३३४·२	
*गीत	१३५·१	
गुंजारया	१४१·३	गुंजार किया
*गुंजार	१४१·३	
*गुंड	१०२·१	पराग
गुंथिय	७२·३	गूंथा, ग्रथित
गुज्जर	३०२·१, ३१७·१	गुर्जर
गुज्जरउ	३०३·१	गुर्जर
गुन	८७·३, ९०·१, १६८·४, १८१·२, ३४५·४	गुण
गुनि	६२·३	गुन कर
गुनियन	८६·१	गुणिजन
गुना	१४०·३	
*गुरु	११·१, १३१·१, १६४·१, ३४४·४	
*गुरुजन	१६८·१	
गुहिल्लय	३·३	गहलोत
गुहिलोतु	२६६·१	गहलोत

शब्द	संदर्भ	अर्थ
गून	५२·३	
गेरव	२७५·३	गौरव
गेह	५८·३, ६६४·४, ९२·२, १७३·३, २७३·२	गृह
गेहिनी	२७३·२	गृहिणी
गैन	२५८·३	
गो	३२०·५	गया
गोल	२३४·१	
गोवल्लकुंड	१०१·४	गोपालकुंड
गोरि	२७५·४	गोरी
गोरी	२७७·१	गोरी
गौन	१८६·२	गौण
ग्यान	३४५·४	ज्ञान
ग्यारह	१·१	
ग्रह	३३२·२	
ग्रहनि	३३२·६	ग्रहण
ग्रहै	२६४·४	ग्रहण करता
ग्रिद्ध	२६१·४	गृद्ध
ग्रिद्धणी	२६१·४	ग्रिद्धनी
*ग्रह	२·१, ६·२, १३७·२, १३७·२, १८६·२, ३४०·१	गृह

घ

शब्द	संदर्भ	अर्थ
घंट	२२७·१, २३६·१, ३१५·६	घंटा
घंटनि	२०५·३	घंटे
*घंटा	३१७·२	
घंटी	३१·३	
घटि	१३६·१	घट कर
घटिग	१२·३	घट गया

चड्ढि	२७८·६	चढ़कर
चढंत	३०८·१	चढ़ता है
चढंति	१६३·१	चढ़ता है
चढ्यो	१६४·१, ३०७·५, ३१८·१	चढ़ा
चढिय	२२८·१, २२६·१	चढ़ा
चढियउ	३१३·६	चढ़ा
चढिउ	१३·४	चढ़ा
चढ़ी	६४	
चढ़े	२८७·१	
चढ़ै	४२·२	चढ़ता हैं
*चतुर	११०·५	
चत्तरंग	१०७·१	चतुरंग
चण्डिय	१४७·२	चण्डी
चम्पि	१५६·२	चाँपकर
चमकांति	२३८·२	
चमकि	१६५·१	
चमके	२०७·१	
चरन्तं	२८·३	चरते हुए
चरंति	२४३·२	
चरताल	२८·३	
चरन	२४·१	
चरन्न	१७४·४	
चरहि	४·२	
चरित्त	५७·२	चरित,
चरित्तनु	१६२·२	चरित्र
*चल	३४५·२	
चलउ	५७·२	
चंलंत	४०२	
चलंति	११५·१	
चलहि	३१३·४	
चलि	१२५·१	

चली	११३·१, २०५·२	
चलु	८८·२	
चले	१८६·१	
चलै	२७६·६	
चल्लै	१७·३	चलता है
चल्या	१५३·२	चला
चल्यो	३·१, १४.२ १७८·१	
चवना	१४०·३	
चहुं	११०·५	
चहुंवान	४२·१, ५६·४, १०४·२, १०६·३··· ११०·५, १२०·१, २७०·४···	चौहान
चाइ	१३१·२, २६८·१	चाव से
चाउ	१३·४	चाव
चातग	१६१·४	चातक
*चामर	२६·२	
चार	६८·१, २७०·३	
चारा	१५६·१	
चारि	६०·१	
चारित्त	१६·३	चरित
*चारु	१६ ३, २७२·१	
चारे	२५६·३	चले
चालं	२८·२	
चालउ	३२०·३	चला
चालक्य	१०१·२	चालुक्य
चालि	६८·२	
चालिउ	१·२	
चालिनं	१३७·१	
चालु	८८·२	
चालुक	२७७·२	चालुक्य
चालुक्क	३३१·१	चालुक्य

शब्द	संदर्भ	अर्थ
चावद्दिसि	३२२·१	चतुर्दिक्
चाहंति	६३·२	देखते हैं
चाहनं	१३६·१	देखना
चाहिति	७६·१	
चाहियं	१७२·१	
चाहुवान	३·३	चौहान
चाहू	२४६·२	
चाह्यो	८६·१	
चिकाये	२३३·४	ललकारे
चिट्ठिय	२७५·२	
चिडिग	१६८·२	चढ़े
चितु	१८४·२	चित्त
चित्त	६·१, ३४·१, ३६·२, १७७·२	
चित्तखी	२५३·२	
चित्तनि	२८०·२	
चिंत	८५·३, १३१·२, २२७·२	चिंता करना
चिंता	६·१	
चिहुरे	३०७·२	चिकुर
छचीर	६६·१	
चुक्को	६६·२	चुक गई
चुनहि	६४·७	चुँगता है
चुब्बइ	२३६·२	चूता है
चुवरेण	६५·१	
चै	२७२·१	
चैत	१·१	
चोट	३२१·२	
चोप	६१·३, २३६·३	प्रेम
चोर	७३·४	
च्यारि	२६६·६	चार

शब्द	संदर्भ
छंडणे	२४४·१
छंडनि	१६२·२
चंडउ	३०२·३
छंडि	७६·२
छंडिय	१८५·२
छंडियो	१०२·१
छंदी	८८·४
छंदे	२७·१
छगन	३०७·५
छगनु	३३७·३
छगी	३२७·२
छछोरी	५४·३
छट्टिय	२६७·१
छत्त	२४३·२
छत्तपति	८५·२
छत्तिया	३५·२
छत्तीस	१०४·१
छनि	१३६·१
छने	१०३·१
छब्बि	३५·२
छर	३०४·२, ३१४·२
छह	११०·१, ११३·१
छत्र	१७५·४, २०८·४, २२१·२, २८४·१
छत्रपतिय	३१३·५
छत्रीस	६५·३, ११०·१
छाँडि	१४५·५
छिति	२८·१
छित्त	५८·४
छिनि	१६६·३
छिपे	१०२·२

छीर	१७३·३	छीर
छूटि	१५३·२	
छुट्टति	२२८·२	
छुट्टियं	१५५·३	
छुट्टे	१,२·३	
छुट्टै	५१·३	
छेह	५८·४	खेह, छेक, छेद
छेलु	६२·३	
छोडि	१७३·४	
छोरि	१७८·२	छोड़कर

ज

†जंग	२५८·४	युद्ध
जंगली	२७०·३, ३१८·३	
जंगलवै	३१६·३	जंगलपयि
जंगुली	२७७·५	जंगली
जंघया	३४·२	
जंघं	२६४·१	
जंघ	१७७·३	
जंजाले	२०·२	
जंजरि	२६·३	जजीर
जंदाबली	३२५·१	
जंदे	२७·३	
जंपइ	११०·६	कहता है
जंपि	८५·१	
जंपही	१६७·१	
जंपै	२६६·६	
जंबु	२३·१	जंबुक
जंबुयदीप	२५·४	जंबू दीप
जंभीर	२२·४, ५०·१	जंभीरो नीबू
ज	७७·३, ८७·२, ३०२·४	जो
जइ	१४१·४	यदि
जउ	६०·२, १५०·२	
ज.कि	३२१·२	जककर
जक्कि	१५८·२	
जके	१५६·२	
जकै	६२·५	
जाख	१४९·२	
जग्गं	४७·१	
जग	२७·१, २७१·२	
जग्गति	२७७·१	
जग्गये	२४५·१	जागे
जग्गिजे	१८·१	जागिए
जगि	४८·१	जगत में
जग्गिय	१६०·२	जागा
जगो	३२७·२	जागि
जग्गी	२२२·३	जागी
जग्गे	३२७·३	जागे
जज्जुरी	३३·२	जाज्वल्य
जटन	२६·३	जटाएँ
जटाल	२४५·२	जनिल, जटावाला
जटित	२३८·१	
जतन	१६३·१	यत्न
जत्तउ	३३८·२	यत्र
‡जन	२०३·१	
जनहित	३०·१	
जनि	१४६·४	नहीं
जनु	२०४·२, २८३·२	मानो
जप	३१५·६	
जब	१०८·२, २७६·६, ३३४·१	
जम	२७·२, २६१·२	यम
जमजाल	२६६·१	यमजाल

जि	२१·२, ४३·२	जो
	६८·१	जिनके
जिके	६२·३	
जिग्गं	२५६·३	
जिते	२६५·४, २७४·४	
	३३३·१	जितने
जिन	२८६·२	नहीं
जिनके	२०७·४	
जिने	३२३·४, ३२४·२	
जिनै	६६·१	जिन्होंने
जिन्यो	१४५·४	
जिन्ह	३१७·१	
जिम	११०·२, १६१·४,	
	२२५·२, २३०·४	जैसे
जिय	३४६·२	जीव
जियण	२७७·५	जीवन
जियन	२७६·५	जीवन
जिवन	६·४	जीवन
जिह	८२·२, १२१·२	
	१२२·२	जहां
जिस	२६५·२	जैसे
जिसे	२२४·२, २६४·४,	
	२६८·२	जैसे
जिसो	१०८·१, २६५·४	जैसे
जिही	८·३, ८५·५,	
	१०६·२, ११०·२	जिस
जीति	६८·२	जीतकर
जीरा	१०२·१	
जीव	३०२·२, ३२०·६,	
	३२२·४	
जीवन	१८७·२	
जीवंत	३३०·३	

जु	३५·३, ३४·१.	
	६७·१, ७३·३, १२१·१	जो
जुग	२६·१	युग
जुगिति	२१५·६	योगिनी
जुज्झ	१७६·४, ३०५·१	जुझकर
जुज्झि	३०३·१	जूझकर
जुत	१३६·२	
जुतो	१६६·२	युक्त
जुत्तयते	३०६·६	
जुद्ध	१०१·३, १८४·३,	
	६६·२, ३६६·१	युद्ध
जुध	२४७·१	युद्ध
जुधि	१८३·१	युद्ध में
जुध्ध	१२·२	युद्ध
जुय	७८·१	युगल
जुरंता	२३२·३	जुड़ते हैं
जुरि	३१६·२	जुड़कर
जुरे	५३·३, १३८·४,	
	२५६·२	जुड़े
जुव	७७·१	युवा
जुवान	३५·१	जवान
जुहार	२६२·१	
जुहि	४२·१	जुही
जूथ	६१·१, २६८·२	यूथ
जूप	६१·३, १७३·१	यूप
जूर	३२७·४	
जूरे	२६०·३	जुड़े
जूह	३१५·२, ३३१·८	यूथ
जे	५७·१, ६१·१–३,	
	६२·१, १५४·१	जो
जेते	४७·१	जितने
जेन	३१७·३, ३१७·४	जिनके द्वारा

जेहरी	३३·२	
जै	१६०·४	जय
जैचंद	८२·२	जयचंद
जैराम	१४०·४	जयराम
जो	२६·१, ६३·१, ११६·१	
जोइ	८८·१, २०८·१	देखकर
जोए	२५१·२	देखं
जोग	१३५·२, ३४६·२	योग
जोगिनपुर	३००·२	योगिनी पुर (दिल्ली)
जोगिनीपुर	१७६·१, २६१·२, २८२·२	
जोट	२६१·२	जोड़ा
जोड़ि	८५·१	जोड़कर
जोति	४८·१, ४६·२, १३२·४	ज्योति
जोध	८०·२, २५८·२	योद्धा
जोप	७७·३	
जोद्धं	५०·१	
जोवइ	१२१·२, २३२·४	देखता है
ज्यं	५·२	ज्यों
ज्यूं	१०६·२, २०२·१	ज्यों
ज्वालाहवी	२०·३	

झ

झंकि	१३३·२, १६३·३	झाँकना
झंपै	२३७·१	ढकना
झरंत	१६३·४	झरता है
झननंकति	३१५·५	झनझनाना
झरइ	३०६·४	झरता है
झरहिं	३४२·२	झरते हैं
झनं	१३३·२	ध्वनि
झलकंत	१२·४	झलकता है
झटकंत	२३२·४	
झखी	२५३·२	
झकोलति	३२·४	
झाग	१५६·२	
झारंतो	२६६·४	
झरि	२५८·२	
झिप्पि	२३७.१	
झिलमिलिग	११·३	
झेले	१५४·३	
झुक्क्यो	३३०·५	
झुल्लंति	१५७·२	
झुकित	३१३·१	
झूंझत	२७४·३	
झूसे	३१५·१	

ट

टंक	२५१·१
टखी	२५१·१
टट	२८·२
टट्टुर	३३६·६
टुट्टिय	२५·३
टामक	१५३·१
टारे	१०४·२
टुस्यो	३०७·२
टूकंक	३२३·१
टेरे	२२७·१

ठ

ठक्क	२२६·२
ठठुक्की	६६·१
ठिल्लइ	२२६·४

ड

डंडियं	१३२'२	
डंब्ररयं	२०६'१	डाबर, मटमैला
डरप्पि	२४४'१	डर कर
डरि	२३६'४	डर कर
डरिग	३३३'६	डरे, डरा
डरे	२५६'१	
डसि	३३१'३	दंशित करके
डारे	२५४'२	डाल दिया
डाहाल	१०१'१	
डिठि-वंक	१४६'१	वक्र दृष्टि
डींभ	८६'३	डिम्भ
डुल्लै	६३'३	डोलता है
डोर	११७'२	
डोलं	४६'३	दोल

ढ

ढंढोरे	२७४'३	ढिंढोरा
ढंकिय	१२'४	ढाँकना
ढग	१८०'२	
ढग्यो	४८'३	
ढर	१८२'१, २६४'१	
ढन्यो	३२७'४	
ढहनंकित	२०५'३	ढलता हुआ
ढहाइ	७२'४	
ढार	१८२'१	ढाल
ढाल	२६३'३, २६३'३	
ढालेति	२३५'४	
ढाह	२५३'२	
ढिल्ल	२५३'२	दिल्ली
ढिल्लहि	१६६'२	दिल्ली को
ढिल्लि	१६८'३, ३३६'१	दिल्ली
ढिल्लिय	४२'१, १००'१, १८६'४, १७८'१	दिल्ली
ढिल्लियपति	३१३'६, ३२७.६	दिल्लीपति
ढिल्ले	१६८'३, २३१'४	ढीले
ढील	५०'२	
ढुरंता	२३२'२	ढुरता है, ढलता है
ढयो (ठयो)	१४५'२	

त

तंबूलस्य	१७६'२	ताम्बूल का
तंबोल	१४८'२	ताम्बूल
त	१२७'२	तो
†तखत	१८६'४, १६८'४	तख्त
‡तट	२१'३, ३४'१	
*तटाक	२४१'२	
तडित्तह	७७'४	तड़ित का
तणी	२८४'१	की
ततंग	१३२'१	नादानुकृति
ततु	१३०'१	तत्व
तत्ते	८७'२	
‡ततो	२७३'१	ततः
तत्तथे	१३२'१	नादानुकृति
तत्तथेइ	१३२'१	नादानुकृति
तत्थ	३३२'२	तत्र
तदून	३४४'३	
*तन	२६'३, ३२'३, ८६'१, ३०४'५, ३४०'१	
तनरंग	१६७'२	
तनी	१६०'४, २८४'४	की
‡तनु	७४'३, १६०'४, २७२'३, ३०६'१, ३३२'३	

❀तत्र	१७३·१	
तब्र	९०·१, १०८·२	
तब्रल्लं	२२३·३	तबला
तब्ब	१६९·३, ३३६·२	तब
❀तम	२७१·१	
तमालह	२२·३	
तमि	२६·२	तिमिर
तमीर	१२९·१	
तमूल	१४६·१	ताम्बूल
तमोर	१६३·३	ताम्बूल
तमोरि	१७७·४	ताम्बूलवाहिनी
❀तर	११·३	
तरनि	१६१·४	तरणि
❀तरल	२६·२	
त रं	२६४·२	
❀तरंग	१६२·१	
तरंगे	२६·२	
तरप्प	१७२·२	तड़प कर
तराजन	७७·३, २०६·४	तारा जन
तरिऊ	१२५·२	तारने वाला
तरुन	४६·२, ३३३·४	तरुण
तरुनि	१३१·२	तरुणी
तरुने	१४१·४	
*तल	२२·३	
तलप्प	१९०·३	तल्प
तलत्तलसु	१३८·१	ताल
तव	८५·१, ८५·४, २७६·५, ३०४·२	तब
तबे	२५९·४	तभी
तवोरह	१४७·२	ताम्बूल का
तस	३४४·३	तैसा, वैसा
❀तस्य	१९४·२	उसका

तहां	२६६·१, ३२६·४, ३३३·३
तहि	१४५·४, ३३२·२
ता	४९·३, ६०·४, ६८·२, १९१·२
ताजी	१६०·४
ताजे	२५७·१
❀ताटंक	४९·३
❀तात	१९४·१
तान	७५·१
तानी	४७·३
तानु	१३२·४
तानुक	७५·१
तापते	१८·३
तापसा	१८·३
ताम	१७५·१, ३०५·२
❀तामसं	२९२·३
❀तार	११·६, ६६·२, ७३·२, १२२·२ १३०·२, १४०·१
*तारक	३३९·१
तारत्त	५०·३
तारए	१२२·२
तारया	१३४·१
❀तारा	१५६·४
❀ताल	२२·३
तालिना	१३७·१
तासु	६८·२, १७३·४, २७५·३
ति	३१·१, ३२·३, १७०·३, १७३·३ २०७·४, २७४·१

तिश्र	३३७.१	स्त्री
तिके	६१.४, १५४.२, ३२३.२	तिनके
तिकै	६२.२	तिनके
तिज	३०६.२	तीज
तिडिय	१५३.२	
तित्थराय	५२.१	तीर्थराज
*तिथि	८२.२, २६२.२	
तिदरं	२२३.३	
तिदंड	११०.३	त्रिदंड
तिंदु	११६.१	
तिधर	• ३३३.२	
तिन	१६७.३, ३४१.१	तिन्हें
तिनके	३१५.१	
तिन्न	७.१, २६६.५	तीन
तिनै	१८४, १५४.४	तिन्हें
तिनि	६१.१, १८१.१	
तिप्प	१३४.४	
तिम	८.१, ३११.६	तैसे, वैसे
तिय	१२४.२, ३२२.५	स्त्री
तिरप्प	१३४.४	
तिरत्थ	२६२.१	तीर्थ
तिरहुत्ति	१००.२	तीरभुक्ति
तिल	२६६.५, ३०६.२	
तिलक	४८.१	
तिल्लन	१२५.२	
तिलिमिल	३२२.३	
तिलतिल	२६६.३	
तिरत्त	२०४.१	
तिह	१५३.१, २७६.६, ३११.२	तहाँ
तिहाँ	५२.२	तहाँ, वहाँ

तिहि	६४.३, १६८.४, १६५.२, ३११.४, ३३३.४, ३४०.२	
तिहद्दिया	२६६.५	तीनों हद
तीज	६.१	तृतीया
तीन	८६.२, १०१.३	
+ तीर	२६४.२	
तीरवलं	६५.३	
तीरे	१६.३	
तुंग	२०.२, २६.४, ११६.२	
तुंज	७७.३	
तुंड	२४०.२	
तु	३५.२, ५३.२, २८२.४	
तुखार	२४.३, १५५.४	देश विशेष का अश्व
*तुच्छ	१४१.२	छोटा
तुछ	७०.२, १६३.४, २४८.३	छोटा
तुज्झ	१४५.४	तुझे, तुम्हें
तुट्टइ	३०४.१	टूटता है
तुटित्त	१३३.४	टूटना
तुट्टि	३१०.२, ३३३.२	टूटकर
तुट्टै	३११.१	टूटता है।
तुट्टियं	१५६.४	
तुम	४३.२, १८४.२	
तुम्ह	१४.१, ३०२.२,	
तुम्हइ	१४.१	तुम्हें
तुरक	२७५.५	तुर्क
तुरक्की	१५७.३	तुर्की
*तुरंग	१६.३, १४४.१, २८७.१- ३०६.२	

तुरयो १६६·५ तुरंग
तुरा १४१·२ त्वरा
तुरिग ३१३·६ तुरंग
तुरिय ३०६·१ तुरंग
तुरिया १६२·४ तुरंग
तुलंतु ७७·३ तुलना
तुलसाइ १४७·१
तुष्ट २०·२
तुसा ६५·१
ते ४६·१, ८६·१,
तेग १८६·२ तेग़
तेज ४६·३, ५५·२
१२७·१, ३३३·४
तेजि १५५·३, १७५·१
तेडिय २२८·२
तेय ६८·३
तेरह ३१८·६
तेसे २२४·३ तैसे
तैं २७७·१ ·२, ·३, ·४ तुमने
तैनु ६०·१
तोवर ३२५·२, ३३६·६ तोमर
तो ६३·२, १५१·२
तोरि १०१·४, १७१·४ तोड़कर
तोहि १२३·१ तुम्हें
त्राहु १५६·१
त्रिगामऊ १७८·२ त्रिपथगामी
त्रिण २२६·२ तोन
त्रिबल्ली ३१·४, ५२·१ त्रिथली
त्रिय ७·१, २१·१,
१२१·२, १२२·२
त्रियन ११२·३
त्रियाम २८६·३
त्रिविद्ध १३५·२
त्रिस ३०१·२
त्रीणि १४७·२
त्रीय ७·१
त्रैलोक्य २०·२

थ

थंभ ५४·१, ६४·३
थक्कि ३६·३, १७१·३
थक्की १५८·१
थट्ट ६४·१
थट्टी १८१·१, १८६·३
थड्ढे १६·१
थप्पियं १००·२
थल २६८·२, २७०·४
थलह २६२·२
थवाइस १४५·५
थाज १६६·१
थान २७६·१
थानए १७४·२
थानि ६६·२
थारि १७१·३
थिक्कति २१·१
थिर ११२·१, १४५·५
थुंग १३२·२
थेइ १३२·२
थै १३२·२

द

दंगे २६·४
दंडं ६८·४
दंत ३८·२, १६६·२,
२३२·१, २७४·३
३०६·४

दंता	२३२'४, २६०'१	
दंतिय	१८२'२	दंती, हाथी
*दंती	२३१'१, २७४'३, ३१५'४	
दंतीनु	२६०'१	हाथियों के
दंद	१२'२	द्वन्द्व
दंसन	२५'४ ४५'१	दर्शन
दई	१८४'४	दी
दक्खिण	४'२	दक्षिण
दक्खिन	१५०'२	दक्षिण
दक्खिनं	१३४'४	
दच्छिन	२०८'३	दक्षिण
दच्छिन्न	२२३'३	दक्षिण
दच्छिनी	६७'४	दक्षिणी
दच्छिनै	६०'३	दक्षिण को
दपत	११.२	दीप्त
दप्पनं	५३'१	दर्पण
दबरि	३३०'४	दबकर
दमके	२०६'४	
दये	७२'४	दिए
दर	८३'१, १६५'१	
दरदेव	१४३'१	
†दरबार	७६'४, ८५'२, १४२'२	
दरसन	२६'१	दर्शन
दरसाइ	२०'४	दरसा कर, दिखा कर
दरसाए	१६२'२	
दरसे	२०७.३	
दरसी	५०'२	
दरि	१०५'२	
दरिद्द	१७५'२	दरिद्र
†दरिया	१०३'२	

दरिस	५६.४, १४४.२	
*दल	१०८.१, १४६'४, २०७'१, ३१७'५, ३१८'४, ३२०'४, ३२२'६ ३३१'१,	
*दलबल	३०१'१	
दल्ली	२३५'४	दिल्ली
दलु	३०७'५	दल
दव्व	६२'४	द्रव्य
दस	१४४'१, २७०'५, २८२'२, ३२०'२,	
दसहि	२७६'१	
दह	७६.३; १६३.२. ३१३'२	दश
दहार	४'१	दहाड़
दहि	६६'३	
दाच्छिनी	१००'३	दाक्षिणी
*दाडिम्ब	८८'१	
ददुरं	११५'२	दर्दुर
*दान	१०'१, ११०'३, १७०'४, १७१'१, २३४'१	
*दानव	३२२'४	
दानिव्व	६२'२	
*दारु	१७७'१	
दारुन	१४६'२	दारुण
दालमी	३८'२	
दावंत	२८०'२	
दासि	४४'१, ६३'१, १७२'२, १७३'२, ३४४'३	
दासिया	१२०'१	दासी

ॐदासी	७२·४	
दाहिम्मो	२६६·२	दाहिम
दिखइ	११·४	देखता है
दिखत	८४·१	देखता है
दिखायो	२७५·१	दिखलाया
दिखिय	३२१·२	देखा
दिक्खति	१६५·?	
दिक्खन्त	१६१·२	
दिक्खन	१७२·१	देखना
दिक्खि	१४५·२, २३७·२	देखकर
दिक्खिय	३२·१, ७५·२, ११२·१, २२६·२	
दिक्खियहि	२३२·१	
दिक्खियो	२६२·४	
दिक्खियै	१६·२, १६०·४	
दिख्ख	५६·५	
दिक्खइ	२३१·२	
दिख्खण	१·२	
दिख्खत	७६·४	
दिख्खन	३·१, ६१·४	
दिख्खयो	२१·१	
दिख्खियं	५८·१	
दिक्खियज	१२·४	
दिख्खिये	६२·२	
दिख्खिहि	७३·३	
दिगंत	२४२·१	
दिच्छन	१७८·२	दक्खिण
दिजइ	२७६·१	दीजिए
दिट्ठ	६७·१	दृष्टि
दिट्ठउ	३२१·४	दीठा, देखा
ॐदिढ़	१४४·६	दृढ़
ॐदिड्ढ	१७७·२	दृढ़

दिनं	२०३·३
ॐदिन	८२·२, ६६·४, ३१५·२, ३४२·१
दिनयर	४५·१, ३०५·२
दिनयरु	३१५·२
दिने	७६·२
दिन्हो	६०·२
दियं	२२८·२
दिय	११६·१, १६६·३
दियो	१४५·४
दिख्यो	२६६·३
दिख्ख्यो	१६३·३
ॐदिव्य	५७·२, २५२·१
दिल्लीभर	१४५·४
दिव	२०४·४, ३३६·१, ३४६·२
दिवसि	२६६·६
दिव्व	२२·२
दिवान	३२०·५
दिवी	२२·२, ३१२ २
दिसं	१३४.४
दिसंग	१३४·१
दिस	८·१
दिसहि	११०·५
दिसा	१३५·१, २२३·२, २४०·२
दिसि	७६·३, ८५·३, १२०·२, १२४·२, १२७·१, १५३·१, २०६·१
दीउ	३३४·१
दीजइ	१५४·४

शब्द	संदर्भ	अर्थ	शब्द	संदर्भ	अर्थ
दीठी	४३·२		दुस्सह	३०८·२	
दीन	२७८·३		दुसेर	२०६·३	दो सेर वाला
दीनइ	२७८·३	देने से	दुहं	३२५·४	
दीन्हों	३११·२	दिया	दुह	२०३·२, २३८·४	दुख
दीप	१२६·१, ३४२·१		दुहत्थ	३२४·३	दो हाथो से
दीसं	४६·१, ५३·१,		दुहु	१०१·१	दोनों
	२४२·२	दिखाई पड़ा	दुहु	४५·२, २०४·१	दोनों
दीस	२५·१, १५७·२	दिखाई पड़ा	दूत	१६८·३	
दीसत	२७१ १	दिखाई पड़ता है	दूपा	६३·२	
दीसै	५८·४, २६१·३		दूरि	३१३·२	
दु	७८·३	से	दूव	१७७·१	दोनों
दुअण	१६१·२	दो जन	दे	६१·२, १६६·३,	देकर
दुइ	३१६·१	दो		३६६·५	
दुज	७३·४, १७०·४	द्विज	देइ	८०·१, १०८·२	
दुजन	११०·३, १४५·२	दुर्जन	देउ	१६५·६	
दुज्जन	११२·२	दुर्जन	देख	३०६·१	
दुति	६८·४	दुति	देखत	६०·३, १३०·४	
दुतिय	२१८·४	द्वितीय	देखते	१८·४	
दुत्त	२६१·२	द्वित्व	देखि	४८·३, ७६·३,	
दुधार	८२·२	दो धारवाली तलवार		१७६·१	
दुधारे	१५४·३		देखिन	७३·४	
दुमाइ	३६·२		देखिय	६८४·४	
दुम्मान	२४८·२		देंतु	१७४·४	देते हैं
दुर	५२·४		देय	१७७·१	
दुरदेव	१६६·१		देयानि	१४७·२	
दुराइ	३६·१	छिपाकर	देव	१६२·१, २०५·४,	
दुल्लभ	२४·१	दुर्लभ		२८६·४, ३०८·२,	
दुल्लह	४६·२	दुर्लभ		३०८·१, ३२२·५,	
दुल्लही	४५·१	दुर्लभा		३३१·२, ३४५·३	
दुवार	५७·२	द्वार	देवरउ	३२०·५	देवल
दुवाल	२०३·२	देवालय	देवाल	१८·२	देवालय
दुसह्न	१४६·३	दुस्सह	देवि	३११·२	

धाई	२२७·१, ३४०·२	दौड़ी
*धातु	७०·२, १७५·३	
*धार	३७·३, १३३·३, १७३·३, २०४·१, ३१५·५	
धारनि	३१५·१	
धारि	३३२·२	
धावत्त	३२०·२	दौड़ता है
धावंतहि	३१५·२	
धावतै	१५७·४	
धावै	२३३·२	
धावर	३१७·४	धवल
*धीर	३०७·४, ३१८·४	
धीरत्तनु	१८२·१	धीरता
धुंधरिय	२१८·४	धुँधला
धुंसनं	२००·१	
धुकंत	३३३·२	
धुंनं	२८२·२	ध्वनि
धुनि	१२८·१, १९५·१, ३१२·१	ध्वनि
धुनी	२२·२	ध्वनि
धुन्यो	३११·६, ३३३·५	धुना
धुप्पदं	१३६·३	ध्रुपद
धुम्मिलि	३१८·४	धूमिल
धुरंगा	२३६·३	
धुरक्की	१५६·४	
धुरि	१३·४	
*धुरी	१५७·४	
धुरे	२९४·३	
धुल्लिय	७१·२	
धुव	९७·२	ध्रुव
धुवंति	७३·२	
धूधरियं	२०६·२	
*धूम	३४३·१	
धूव	६८·१	ध्रव, ध्रुपद ?
*ध्यान	१८·३	
*ध्रुव	४·१	

न

नं	१३५·१	
नंखिय	१२०·२	नष्ट करना, रोकना √नश्
नंग	३१·४	नग्न
नंगा	६१·२	
नंदा	१०३·४	
*न	७३·२, ८७·४, २८६·३, २९०·२.३	
नखं	५३·१,	= नख
नखंनख	७९·१	= नखशिख, पूरा-पूरा
नखी	१६१·४, २४६·२, २६२·१	√नश्
नखो	३२८·२	
नख्खहि	७१·३	
*नग	४८·१	
नग्ग	७७·१	
*नग्न	७८·१	
*नगर	४४·२	
नच्चए	६८·४	नाचते हैं
नचै	२२४·४	
नछत्तनु	२५५·१	नक्षत्राणि
नट्ट	१३६·१	नट
नट्टी	१३४·२	नर्तकी
नट्ठै	१६·४	नष्ट होता है
नतम	२६·४	
नथुंग	१३२·२	

नदं ६६·१
*नदी ४४·१
ननारे २५८·३
नफेरी २२६·१ — नफीरी
*⁕नभो ३·५ — नभ
नमस्कारं ६०·३
नय ५६·२, २२६·२
नयनं १०५·१
*नयन ८५·३, ११२·१, २२७·३, २२६·२
नयन्न ११२·१ — नयन
नयर ३२·१, ६०·४, ७०·१, १५०·२ १८२·१ — नगर
नयरि ४३·२, ६०·४ — नगर में
नयो २६६·१ — नमन किया
नरं २४०·१
नर १८ २, ५६·२, ६३·३, ८६·४, १६६·२, ३००·५
नरघरनि ४४·२ — नरगृहिणी
नरसिंघ ४·१, २६६·२ — नृसिंह
नरिंद ६६·२, ११२·१, १२२·२, १३८·४, १४६ ४, १७३·३, २४६·१, २८६·२, ३०७·४, ३१७·५, ३१८·३ — नरेन्द्र
नरे १३८·४ — नराः
नरेस ६·१, ३०१·१ — नरेश
नरेसुर २७४·१ — नरेश्वर
*नलिनी २७३·१
*नव १४६·२, २७२·२

नवज्जलु २७२·२
नवतर ३१७·५
⁕नवरस ८७·२
नवमी ३२२·१
नवारंग २२६·१
*नहि १२३·१, १४६·२
नहिं ३३०·३
नहीं ३२७·३
नही २६६·५
नन्ह ३३२ २
नाखिया ३२५·२
नाग ११८·१
नागवर २५६·२
नागरी ८८·३
नागर ४४ २
नाव्य १४३·१
नाथो १००·१
नाना ३२५·२
नाम ३२३·२
नामिय २६७ १
नामे १५६·२
नायिका ६३·३
नायो ८६·२, २६८·१, ३०२·१, ३०४·२
नारं २५०·१
नारंग ५४·३
नार ७८·३
नारद्द २२३·४
नारयन ३२०·४
नारि ६७·३, ७३·३
नारि २५१·२
नांव १७०·१

नासं	२६३·३	नाश
नास	१०६·१	
नासिका	३६·१	
नासुराहं	६८·२	
नास्ति	१६४·१	
नाह	१७३·३	नाथ
नाहि	२२७·२	
नाइ	८५·२	नत्वा, नमन करके
नानु	३१५·१	
निंद	१३६·२	नींद
निंदग	१२२·१	
निंब	२३·१	
नि	७७·१	
निकट्टे	२६५·३	निकट
निकत्थ	११३·१	
निकस्सि	२८६·२	निकलकर
निघट	३१८·६	
निघट्टिया	२६६·६	वध किया
निट्ठुरं	२४४·१	निष्ठुर
निडर	३०४·६, ३३७·२	
निड्ढरहि	२६३·३	(नाम विशेष)
नितंब	५३·३, १२६·२	
*नितंबिनि	१३०·२	
नित्त	११०·६	नित्य
नित्ति	२२३·४	नृत्य में
नित्तु	१३०·२	नृत्य
निद्र	६२·१, ६३·२	निद्रा
निद्रा-दलं	१४१·२	
*निघि	३१०·२	
निनारा	१५७·१	
निनारे	२६४·१	
निवरंत	३३३·३	निबटना

निभान	१०·३	
निम्मयी	४५·२	निर्मित किया
निम्मलं	५३·१	
निय	२६·३, ४५·१, १३६·२	निज
निरखि	४८·१, ६४·४	निरीक्षय
निरक्खि	१३६·१, १७२·१	
निरक्खियं	१३२·३	
निरक्खिय	१३१·२	
निरख्खहि	७८·३	
निरत्त	१३६·२, ३४३·२	नृत्य, निरत
निराठ	३०५·१	
निरुप्पहि	३४५·२	निरूपित करता है
निबट्टि	२०८·१	निवृत्त
*निर्वात	४६·२	बिना वायु का
निर्वान	३१७·५	निर्वाण
निसंक	१८६·१, २०४·६, ३०६·६	निःशंक
निसंत	१६६·१	निशान्त
निस	१४३·१	निशि
निस-के	६४·१	
निसा	८·१, १२७·१, २०३·३	निशा
निसाचरे	२४२·२	निशाचर
निसाहर	२२३·१	निशिहर
निसान	१०·२, २२३·१, २७७·२, २६७·२	वाद्य विशेष
निसानह	२०२·१	
निसि	८१·१, ८२·१, २६७·१, २६८·१, २७०·३, ३२२·१, ३४६·३	

शब्द	संदर्भ	अर्थ
पंति	१३८·२	पंक्ति
*पंथ	२५६·३	
पक्ख	१७७·१	पक्ष
पक्खर	२२८·१	घोड़े का झोल
पक्खरउ	१४६·४	
पक्खरे	१५६·१	
पक्खरइ	३१६·१	
पखर	१५३·१	
पख्खि	६८·४	पक्षी
पख्खे	२३८·२	पक्षे
पखी	२५०·२	पक्षी
पग्ग	३२६·३	पग
पच्छमी	१५८·१	पश्चिमी
*पट	७०·२, १४४·१	
पटोर	७३·३	रेशम
पठावहि	१६८·३	भेजना
पट्टन	७०·१	पत्तन, नगर
पट्टने	६६·४	पत्तन में
पट्टु	२७७·६	पट्ट
पट्टे	२३४·३	
पट्ठिअ	३१८·६	भेजा
पट्ठिए	२४८·३	भेजे
पता	१४०·४	
पति	१६३·४, २९८·५, २८१·२	
पतिग	१४२·१	प्राप्त, पहुँचे
पतो	२७३·१	
पत्त	३३·१, ६८·४, ६४·१, १७·२	पत, प्रतिष्ठा
पत्ति	३३२·५	पति
पत्तिय	१६३·३	पति
पत्ते	२६३·१	
पत्तु	१३७·३	
पत्थं	२६४·१	
पत्थि	२८४·३	
पथ	१७१·२	
पथिक	२७१·२	
पनिहार	४३·३	
पनी	२८४·३	बनी
पपठो	२७६·१	
पमः	१५६·१	
पमुति	३३३·३	
पम्बर	२८३·३	
पयंपि	१७६·१	प्रजल्प्य
पयदल	२५४·२	पैदल
पयाणहि	२८७·२	प्रयाण
पयाल	२३२·१	पाताल
पयालह	२२·२	पाताल का
पयालपुरं		पातालपुर
*पर	३१४·३	
परइ	११२·३, १८०·२	
परगे	२६६·३	
परत्तए	६८·३	प्ररक्त
परणि	२७६·५	
परणोवा	२००·२	
परत	३००·१, ३०३·२, ३१०·१, ३११·३, ३१७·६, ३३१·१	पड़ते ही
परंउ	३०४·४	पड़ता है
परतंग	११७·३	
परनाम	८५·४	प्रमाण
परनि	५·२, २००·१, २१७·६	
परप	२२८·२	

परमं ३१६·१ पराया
परयो ३६६·१, ३१७·१, ३२४·३
परस ११२·३, १६०·१, ३३१·२ स्पर्श
परसंगे २६·३ प्रसंग
परस ३२०·२ पर (शत्रु) से
परवत्त ६१·३ पर्वत
परहि ३१५·३ पड़ता है
पराकृति ३४४·३ प्राकृत
परि २८२·१, २८३·३, ३१३·५
पारिग २६८·१, ३३३·१, ३१८·६ पड़ गए
परिगि २७४·६
परिहार ३१६·१
*परी २२६·३, २८६·३, २८६·२, ३०७·४
परे २५८·४, २६२·१, २६४·१, ३२३·२ पड़े
पसर १२८·२ प्रसार
पसरी ६४·१
पसंचनं १३५·२
*पश्चिम १२४·२
पल ७·१, ८१·१, ३२२·५
पलिछ १०५·२ पलायन करना
पलिति ३४०·३ पलायन
पलौ २६६·२ पलायित
पल्ल २४२·१
पल्लं २४६·१
पल्लये २४२·१
पल्लमि ३०७·३
पल्लनि ३३७·३
पल्लान्यो ३०६·१
पवंग २८३·३
*पट्ट १२·३, ३१४·२
पट्टा ५१७·१
पट्टन ७१·१, ३०६·१, ३०७·३, ३१४·२
पट्टनु ३०६·१
पहर ३१७·६
पहारं १००·४
पहार ३३५·२
पहारे २०४·४
पहि १३६·१
पहिचान्यो १४६·१
पहिलइ २६६६·६
पहिली ३१५·१
पहिल्ले २६६·१
पहु १३·१, ३०७·१, ३१५·१, ३३०·३
पहुक्कहि ३४३·४
पहुंचे २७६·५
पहुच ७२·१
पहुरण ३३६·१
*पत्र २७३·१
पांवार ३·४
पांवारु ३३२·२
पाइ १७५·२, २७६·१
पाई १०२·४
पाट २३५·२
पात ३३५·१
पाताल १६८·१
पाधरी ३२६·१

पान	३३·१, १४५·६	
पानि	५१·३, १७१·३, १६०·१, २६४·१, ३३२·४	
पानी	५५·४	
पानु	१२३·१	
पान	२५·५	
पाये	२७८·२	
पायक्क	१७·२	
पायसं	२४६·१	
पायो	८३·३ २६८·२	
पार	२६३·१	
पारंभतं	२६५·४	
पारवी	२५३·१	
पारक्की	२५३·१	
पारथ्थियै	२७४·५	
पारधी	२७०·६	
पारस	२८१·२, ३२०·४	
पारसी	२५३·१	
पारत्थि	२५६·३	
पारि	३२६·४	
पारियै	३२४·२	
पारी	६१·४	
पारे	२५५·१, २६५·२	
पालखी	२५३·१	
पाल्हंभ	२६६·५	
ॐपावन	३३३·४	
ॐपावस	१६१·४, २३६·२	
पावसे	५६·२	
पावार	३३४·१	
पावास	३१७·४	
पावै	२६१·४	

	पास	१३३·४, १८२·१	
	पासि	१०८·२, १७६·२	
	पिक्खउ	३०६ ५	देखा
पाणि	पिक्खियहि	४४ १	देखा गया
	पिक्ख्यो	१४६ २	देखा
	पिक्खि	१७·२, २७६·४	देखकर
	पिक्खिउ	३०७·२	देखा
	पिचारे	२६५·१	ललकारे
पायक	पिछान्यो	३०६·२	पीछा किया
	पिछोरिय	३०६·१	
	*पिंड	१०८·२, ३२६·२, ३३२·२	
	पिट्ठ	२४४·२	पीठ
	पिना	१४०·३	
	पींडी	५४·३	
पार्थ°	ॐपीत	१३३·४, २८४·३, २८६·३	
	पुच्छ	४७·३, १६६·४	पूछा
	पुच्छइ	१०७·२	पूछता है
	पुच्छन	८३·१, ८७·२, १६८·३	पूछना
	पुच्छे	१६८·२	पूछा
	पुज्जए	१७१·२	पूजा
	पुज्ज	१७१·४	
	पुट्ठि	१६४·२, २६३·४	पुष्ट
	पुट्ठिवै	२६७ १	
	पुंडीर	३०३	
	ॐपुण्य	१८१, १९१·२	
	पुत्त	१४७·२, २६१ १	पुत्र
	पुत्ति	१६६·१, १७३ ४	पुत्रों
	पुन	१६३ ३	पुनः
	पुनप्पि	१७१ ४	

बनाई	५०·४	
बर	१४७·१, २८४·१	
बरनै	१५६·३	वर्णन करना
ॐबलं	१०·२, १६१·२, १७·६, ३१३·२	सेना
बलनि	१६५·१	बल (बहुत)
ॐबलि	११०·५	बलि जाऊँ
ॐबहु	५७·१, ७४·१ १८७·३ १४४·२- २२४·१, २२८·१, ३१४·१ ३३८·२	
बहुत	३·२, १४५·३, १६३·२	
ॐबाजी	१६०·३	घोड़ा
बात	३७७·१	
बान	१०१·१, २५०·२, २६१·३	
बानै	१७·२	बान चलाने वाले
बारह	३३६·३	
बारी	६१·३	वाली
बारे	६४·४	द्वारे
ॐबाल	१६१·१	
ॐबाला	६५·२, १८८·२	
बालु	२४१·२	
बाहं	२५०·२	बाहु
बाहर	३१३·६	
ॐबाहु	१६६·२, २२८·२	
विचारि	१७०·१	
बिट्ठयह	६७·२	बैठते हैं
बिनु	११२·३, ३३०·१	बिना
बिंबह	७८·४	बिंब का
बिंबेन	३१६·२	बिंब से

बिसरी	२०६·२
बीच	८८·१
बीय	३८·३, ५०·४
बुज्झियइ	२७५·६
बुझ्यो	६·१
बुंद	३०४·४
बुधि	८७·२
बुलंति	१३३·२
बुल्लिय	१५१·१
बे	११२·३
बेलि	७२·३, ६४·१
बैकुंठ	३०३·१
बैन	६४·१
बैरख	२८४·१
बोझ	२७५·६
बोलं	५०·२
बोल	२७४·५
बोलते	२५२·२
बोलु	२७४·१
बोहित्थ	३१३·६

भ

भंग	४६·१, ११५·१
भंगहि	२७४·१
भंज्यो	६६·२
भंजिग्र	३१७·३
भंडि	८६·४
भंति	११५·२, ३१५·७
भइं	३३६·४
भइ	५०·१, ३१५·७, २६६·५
भइत	८·२
भई	३४६·४

भउ	१४६·५, ३१७·६	हुआ
भक्खी	१५०·२, ३२८·२	भक्षण किया
भख	७६·२	भक्ष्य
भखी	२४६·१	भक्षण किया
भखे	२४८·२	
भख्यो	२०६·१, ३२५·४	
भगंत	२४३·१	भागते हैं
भाग्यो	३३०·१	भागे
भग्ग	३३०·२	भग्न
भग्गयो	२४५·२	भागे
भग्गे	३२४·४	भागे
भग्गै	०१८·४	भागते हैं
भजि	४६·१	भागकर
भज्ज	५·२	भाग
भट	२७५·३, २८१·१	भट्ट
*भट्ट	१२१·२, १४४·२	
भट्टि	१४·२	भट्ट
भणणंकिय	२८५·१	नादानुकृति
भत्त	२४७·२	भ्राता
भद्दव	२०२·२	भाद्रपद
भनंति	१३८·२	भणन्ति
भमर	३१·३	भ्रमर
भमै	२६१·४	भ्रमता है
*भय	२६·१, १२१·१, १५३·१, २०६·१, २८८·३, ३७५·१	
भयउ	१६७·४	हुआ
भयत	१२७·१	हुआ
भयी	३२३·१	हुई
भयो	३०६·२, ३११·४, २६६·२, ३१८·५	हुआ
भरं	२४०·१	भट

भर	१२५·१, ३१८·५, ३२२·२ ३२२·४	भार
भरतं	२६५·१	भरत
भरति	३१३·२	भरती है
भरतार	४५·१	भर्त्ता
भरंति	३३·१	भरते हैं
भरन	२७०·२, ३३०·५, ३३४·२	भराव
भरयं	२०३·२	
भरयो	३३६·५	भर गया
भरहिं	१०·२, ३२·४	भरते हैं
भरि	१६६·१, १०१·३, १६६·१	भर कर
भरिउ	३१३·६	
भरियं	३१६	भरित
भरी	३४·१	
भरे	२६·१, १८१·१, २६०·४, ३३४·४	
भला	१४६·६	
भल्लि	१०३·१	
भल्ली	२३५·१	
भले	३२५·४	
भवं	२०३·४	हुआ
*भव	२१·४	
भवंति	१३२·४, १३३·३	भ्रमन्ति
भंवर	३०१·२	भ्रमर
भवइ	३१८·५	
भाइ	६६·३, ७४·१, ६७·२, १६७·४	भ्राइ
भाई	१४४·१	
भाख	८०·१, ८७·२	भाषा
भाखन	८०·१	भाषण से

मोहिनि	१४६·२	मोहिनी
*मोहिनी	१८८·२	
मोहियं	२२४·२	मोहितं
मोहिल्ल	३२०·३	
मोहए	३६·२	मोहित हुए
म्रित	३२६·१	मृत
म्रिग	११·२	मृग
म्रिदंग	६७·३, १३८·१, २२३·३	मृदंग
म्रिदु	५५·२	मृदु

य

य	१४१·३	यो
*यज्ञार्थे	१८८·१	यज्ञ के लिए
*यतो	२७३·१	जहाँ
यत्त	२६३·३	यत्र
यह	५७·२,	
*यामिनी	७·१	
युव	३४५·१	
युवति	२७१·३	युवतियाँ
यूं	३२·१, १८५·४	यों
*यूथ	३४५·१	
येह	६३·४	यह
*यो	१३७·४, ३३०·२	
*योग	३४०·१	
*योगिनां	१४७·१	
योगिनीपुरे	२४६·२	दिल्ली
*योजन	७·२	

र

*रंग	३१·४, १६४·१, १७१·२, १७६·१, २३२·२, २५८·४, ३१०·२, ३२०·१	
रंगा	२२४·१	
रंगि	१७३·१	
रंगिनी	२४१·२	
रंगी	२६२·१	
रंगीय	५४·३	
रंचउ	६३·१	रंचक, कुछ
रंजहु	८२·३	रंजन करो
रंजरि	२६·४	
रंतं	२६५·१	रक्त
रंभं	५४·२, १३४·३, १४०·३, १७१·२, २६५·१	रम्भा
रंभया	३४·२	रम्भा
रंभसु	२५·२	रभस, वेग
रक्खण	२३०·१	रक्षण, रखना
रक्खहु	१२३·२	रखो
रक्खहि	२७४·२	रखते हैं
रक्खूं	१२३·१	
रक्खै	२७६·१, ·२	
रक्ख्यो	५३·४, २७७·४, ३४०·२	
रखत	१२४·१, २७६·६	
रखन्ति	२०४·१	
रखी	१६१·३	
*रघुवंश-कुमारह	८३·२	
रचि	३०४·५	रचकर
रचीन	५५·४	अनुरक्त
रच्यो	२०८·३	रचा
रजपूत	३·६, १४६·६	राजपूत
रठि	३३५·१	
रठोर	३०५·१	राठौर
*रत	३२२·५	लीन

रतन	६०·१	रत्न
रतने	१५·१	रत्न
*रति	१३६·२, ३४६·३	
रत्त	५६·१, ८६·२, २६२·१, २६३·४, ३१८·५ ३२२·५	(अनु) रक्त
रत्तउ	६०·३, ३३८·४	अनुरक्त हुआ
रत्तए	३८·१	
रत्तिया	३५·२	
रत्ती	५६·१	
रत्तु	३३२·४	
रत्ते	८७·३	
रत्थि	३१६·२	रथ
रत्थे	१५४·२	रथ
*रथ	८०·२, ३०६·६	
*रद	३१६·२	
रनंकि	१६६·२	नादानुकृति
रन	१०७·२,	रण
रनह	३२०·१	रण में
रयणी	२६७·१	रजनी
रयणि	२७०·१	रजनी
रयन	३२०·१	रत्न
ररे	३३१·२	रटे
रव	१६७·३, ३३३·३	ध्वनि
रहइ	३२·२, १०६·२, १२०·२	रहता है
रहणो	२८०·२	रहना
रवि	३३२·६	
रवि-मंडल	६·२	
रविवार	१·१	
रहन्ति	४६·१	
रह्वो	२७०·४	

रहहि	४३·१, ८२·२
रहहिं	४५.२
रहि	४६·१, ७६·२
रहिउ	३२०·६
रहित्त	११६·१
रही	८६·४
रहु	३०६·४
रहे	१८०·२ २७६·१, ३२१·२
रहै	७४·४, १४५·५, २७४·५, २७६·५
रह्यो	६४·२, ३३०·४
*रस	८०·२, ८६·२, ११२·३, १२६·१,
रा	२५७·३, २७७·५
राइ	६७·२, ६८·२, १६१·१, १८४·१, २७४·६, २७७·४
राइन	१२५·१
राउ	१३·३, १७०·२, २७०·३, ३२५·१
राएसु	२८१·२
*राका	४६·४
*राग	३६·१, ६५·२, १५६·३, २२४·३
*राज	१४५·१, १४६·६ २५६·१, ३४५·४
राजन	३३३·१, ३३८·३
राजनु	१६२·२
राजपुत्ति	१६८·२
राजयो	१३६·३
*राजसं	२६२·३

ल

लगरी	६१·१	लगरी राव
लगी	२६२·१	
लंतु	१७४·४	लेते हैं
लंघिया	३१० ४	लाँघा
लक्ख	८२·२, १३८·३, २७४·६, २९९·२	लाख
लक्खन	३३३·१	लक्ष्मण वघेल
लक्खहि	२९२·४	लखता हैं
लक्खिनह	३३४·२	लक्ष्मण बघेल
लक्खियं	१३२·४	लखा, देखा
लक्ख्यौ	१४९·१	
लखिउ	१८३·२	
लखी	२४९·१, २५१·२	
लख्खे	२३८·१	
लख्खै	६२·१	
लग	२७६·५	तक
लगि	५७·२, १०८·२, ३०२·३	तक
लगे	२६३·४	
लगै	२७७·६	
लग्ग	२५६·२, २५६·४	लग्न
लग्गए	३९·२, १७१·१ २७९·२	
लग्गय	१७७·३	लगा
लग्गयो		लगा
लग्गहि	७३·४	लगता है
लग्गि	३३·२	
लग्गियइ	२७४·२	लगता है
लग्गी	४८·१, ४८·२, १३१·१	
लग्गे	६३·१, ६६·३, २२४·२, २३६ २ २४७·२, २५८·१ ३२७·४	
लग्गै	१८·३ ६४·२	
लग्यो	४८·४, ३३०·२, ३३३·३	
*लघु	२४७·२	
लच्छि	१६३·२	लक्ष्मी
लच्छिन	१०९·१	लक्षण
लच्छी	१६०·१	लक्ष्मी
लज्ज	११९·१	लज्जा
लज्जये	२४०·२	लजाता है
*लज्जा	४६·१	
लज्जि	५८·४	
लज्जी	१५४·१	
लटापट	१४१·४	
लता	४२·१	
लद्धी	२२३·२	ली
लपटाई	७४·४	
लब्भ	५२·३, २५५·१, ३२९·१	लब्ध
लयो	३०९·३	लियो
लरि	८८·१	
लरै	१६०·१	लड़ता है
लर्यो	२०९·२, २९९·२	
*ललनानि	२४०·१	
लवन्न	११७·१	लोने, सलोने
लहति	३७·२	√ लभ्
लह	१६३·३	
लहन्तु	१६३·२	
लहल्लक	७५·१	लकालक, चमकदार

लहि	१८६·२	
लहे	११६·२	
लाख	२३·२	
लाखु	६७·१	
लागत	२४०·२	लगता है
लागति	२६१·२	
लाज	१२१·२, १२२·२ १५२·१	
लाजनु	१६२·२	
लाजे	२५७·२	
लाट	४१·१	
लारा	१५५·१	
लाल	२८·२, ७७·१,	
लावहि	१६२·१	लगती हैं
लाहोर	१५७·३	
लिग्रउ	३३०·३	लिया
लिखियत	२८६·२	लिखत
लिय	१४४·२, १७०·१, २८४·४, ३१८·२, ३३०·२	लिया
लिय	२०३·१, २०८·१, २८५·२, २८८·१	
लिये	३·६	
लियो	३११·३	
लिलाट	४१·१	ललाट
लीजइ	२७८·४	लीजिए
लीज	३१८·२	
लीन	३४·२	
लीन्हसि	१५१·२	लिया
*लीला	३१·१	
लुब्द	२७१·४	लुब्ध
लुब्भवइ	६७·४	लुब्ध होता है

ले	२·१, ४७·२, ७४·२, १६६·२, २२३·४, २७१·४	
लेउ	१६६·४	
लेखयो	१३३·३	लिखा
लेहि	६·३, ७२·४, ३०७·१	लेते है
लो	८८·१, ३३७·४	
लोइ	३४६·४	
*लोक	३३७·२, ३४२·१	
✽लोचने	४०·१	
लोन	३४·२	लोल
*लोभ	७६·३, २७८·३	
लोयन	३११·६	लोचन
लोरी	५४·४	
✽लोल	४६·४	चंचल
लोलति	२६३·?	हिलने हैं
लोह	१५३·१, २५१·१, २८७·२, २६५·३, ३२७·२	, लोह, अस्त्र शस्त्र

व

वंकुरि	११२·२	बाँकुरे
वके	२३४·१	बाँके
वंचहि	७३·१	बेचते हैं
वंछहि	१०·३	वांछा करते हैं
वंदते	३१·२	वदन करना
वंदा	१०३·३	वदा
वंदिअ	१६८·१	वदित
✽वंदे	२७·२	
वध	८५·३, १०२·४, १८१·१	वन्ध

वस	६६'१, १०४'१,	
	२६३'२, ३०२'५	वश
वइ	१०६'२, ३१४ २	पति
वखानओ	६६'१	बखाना
वग	६३'२	वक
वग्ग	१५५'१, २६६'१	
वघेल	३३३'१	
ॐवचन	१८१'२	
वच्छ	१६१'२	वत्स
वच्छनिय	१६६'४	वचन, वांछा
वजाज	७३'१	बजाज
वजे	२६३'२	बजे
वजइ	१५७'३	बजता है
वज्जति	१५५'२	वजते हैं
वजए	१७६'४, २४०'२	बजते हैं
वज्जने	१६४'२	वाद्य
वज्जवै	१०८'२	
वटी	२२'३	वाटिका
वट्ट	१८१'२, २६२'४	वर्त्म, बाट
वड	३०३'१	बड़ा
वडगुज्जर	३३७'१	बड़ा गुर्जर
वडितनौ	२७६'५	बड़प्पन
वड्डी	२२७'२	बढ़ी
वड्ढे	१६'४, ६८'१	बढे
वढ़ं	२६५'१	बढा
वत्तरहि	६ २	वार्ता
बत्तिमा	१३७'२	वर्तिमा (वर्तिका)
वत्थ	१२५ २	बात
वत्थ	३२४'४	वस्तु (अस्त्रविशेष)
वत्थइ	२७६'४	अस्त्र विशेष

वद्दल	२०२ २, २०७'३,	
	२३६'२	बादल
वद्दे	५५'२	वाद्य
वध	२२४'१	बजं (?), बजे
ॐवधू	३७१'२, २७६'३	
वद्धए	३८'१	वत्तए, वार्ता करते हैं
ॐवन	८०'१, २७६'१	
	३००'२	
वनु	१२७'१	वन
वनराई	२३५ ४	वनराजि
वपति	११७ २	।
ॐवपु	२७ ३	
वय	३०६ ५	गति
वयण	१२८'१	वचन
वर	२२४'३	
वरखति	३२२'२	
ॐवर	६'३, १३ ३, ६३ १,	
	१६४ २, १६७'१,	
	१६१ २, २६६'१,	
	३०८ २, ३२२'३,	
	३४५ ३	
वरज	२६ २	बरजा, मना किया
वर्णंते	६६ ३	
वरणनु	३१५'१	
वरदायि	६१ ३	वरदायी
वरद्दिया	११०'६, २६६ ६,	
	३०२ ६	बलद्दिय, वरदायी
ॐवरदिहह	१४५ १	वरदाई को
वर्धंति	२०३ ४	बढती है
वर्न	११६ २	वर्ण

विञ्चि २२.४
॥विञ्चित्र २६.२
विञ्चे ४६.२ बीच मे
विजपाल १३४.४, २६१.१ विजयपाल
विजर १२०.३
विज्जु १४५.५ विद्युत
विटियं २५५.२ विखेरना
विट्टिय १२२.२
विंटयो २६८.२, २७०.४
विडरिय २६०.२ बिखर गई
विडरयउ ३३३.६ बिखर गया
विढे २६४.३
विण्णु ७५.२, २८७.२ विना
विचये १७१.३ वित्त
विदिसि १५३.१ विदिशि
विदेशी १६०.१ विदेशी
*विद्यमान ८८.४
*विद्या ३३७.४
विधिय २०४.४ विद्ध
विधत्त २०५.१ वृद्धि
*विधान १०.४
विधान १०.३
॥विधि ६६.१, १०५.३,
१७६.२, १४६.१
विधिवाल २८.३
*विद्रु १३.३, २६७.२,
३१४.२
विन ६४.२
विञ्झ ३३७.५ विन्ध्य
विन्द १२८.१ वृन्द
॥विदु ३३३.५
विन १६१.३

विनुद्ध १६३.१
विनान ३६.१
॥विनश्यति १६४.३
॥विपरीत ३४६.४
विप्फुरे २४६.२ विस्फुरित हुए
॥विप्र ३१.२, १४७.१
॥विभा ६१.२
॥वेभूति १४७.१
॥विभ्रम ३११.५
॥विमान २३६.२
विमाप २४.४
विम्भारखी २५१.१ विस्मित
विय ५०.४ द्वि
॥वियोग २४१.१
वियोगिनी २४१.२
विर ३१४.२ वीर ?
विरि ३३१.२ विटि ?
विरंचि ८१.२
विरदावली ३१७.४ विरुदावली
विरहिनि २७२.२ विरहिणी
विराज ६०.१, १२७.१,
विराजहि ३१३.३, ३४५.४
॥विराम १३२.२
विरुद्ध १३०.२
विलग्गी २२७.४ विलग्ना
विलसि ३४६.१ विलास करके
*विलास ३४६.१
विलग्गे २६.३ विलग्ने
विलसंदे २७.३ विलास करते हैं
*विवर्जित १६४.१
विवहर १६७.१
विविहारे १६७.१ व्यवहार

विसताल	२२४·१	
विसाजयो	१३६·४	
विसारि	१३६·२	विस्मृत करके
विसाल	२८·१, ७७·२	विशाल
विसेस	१३६·३	विशेष
ॐविहंग	११५·१	
विहना	८८·४	विधना, विधि
विहरित	२६·४	
विहरे	१०४·२	
विहि	४५·२	विधि
विहु	५६·३	रिधु
विंहु	३३६·५	दोनों
बीज	२३८·२	बिजली
वीन	६५·४, ६८·२	वीणा
ॐवीर	६८·४, २०५·१, २२४·३, २४६·२, २६१·१ २५७·३, २६४·३, ११३·६, ३२२·२	
वीरह	२०५·२	वीर (बहु०)
वीह	२७६·१	विन्ध्य
बुध	६७·३	
बुधु	२०·४	मुधु (?) मुग्धा
ॐवेगं	२६२·३	वेग
वेगि	२३२·४	वेग से
वेयन	८८·३	
वेठे	१५५·३	
ॐवेद	३३७·१	चार
बेश	१३३·४, २२४·१ २६१·१, २६३·४	वेश
वेस्या	६२·३	वेश्या
वै	४४·१	वे

वैन	१३८·३, १७२·१, १६१·१	वचन
वैरखल	३३५·२	
वैरि	२६०·३	
वैसे	२६३·२	
वोति	१६६·२	बात
ॐव्याकरण	८६·२	
व्रत	१६६·४	व्रत
व्रंद	३०३·२	वृंद

श

ॐशस्त्र	६५·३	
ॐश्याम	५७·४, ११६·२, २६५·२	
*शुक्र	११·१, ६७·१	
शुरु	६७·१	
ॐशोभितं	१८८·१	
ॐश्रृंग	३१७·६	

स

संउत्त	१०६·२	संयुक्त
संक	६४४	शंका
संकर	३११·६	शंकर
संकरि	२६·४	
सकरह	३१०·२	शंकर
सकि	१७२·२, ३३६·६	शंकित शंकर
संकुली	२४१·१	
संख ध्वनिश्र	६६·२	शंखध्वनी
ॐसंग	६८·३, १४४·२	
ॐसंगति	२१·४	
संगा	२३६·४	
संगि	१७३·१	
*संगीत	६४·२	
संग्रहे	११०·२	
ॐसंग्राम	१५४·३	

*संघ २५०·२
संघरऊ ३०७·४ संहार किया
संघरि ३२९·२ संहार करके
संघासन ६१·२ सिंहासन
संच १००·१ सत्य
संचउ ६२·१ संचित
संचरिग ७·२, ३१३·५ संचार किया
संचरिय १२८·१ संचरित
संचही १७४·३ संचार करते हैं
संजोग १६३·१, २६१·२ संयोग
संजोगि १६८·१, ३१६·१,
३३८·३, ३४६·२ संयोगिता
संजोर १४८·२
सझ ७१·२, ३२१·१ संध्या
संठी २६२·२
सठयो ३०६·६
*संत १६३·४
संत एक ५६·१
सथिग्र १४६·३
*संदेह ५७·२, ५८·१,
२३५·२
संडूखि २३४·२
संधन ८५·३
*संधि १७७·३, ३३२·३
संधे २५८·३, २६६·४
संधै १७·१

संप्परे २६२·१ सपरे
*संप्रापितं १४१·४
संभरधनि १०७·१ पृथ्वीराज
संभरे १६·२, २५६·१ स्मरण किया
संभरि १५·२, १५२·१,
२७०·६ शाकंभरि
संभारि ६२·१ सँभाल कर
संमुह १५२·२ सम्मुख
संमुही ११६·१ सम्मुखे
संमुहो २·१, १४३·२ सम्मुखे
*संवेग १६·३
*संसार १८·४, २५६·१
स १४१·३, २६६·४,
२०७·२ वह
सइ १·१; २६२·१ सै, सौ
सउ १४६, ६, ७८८·६ सौ
सउमइ २६२ ६
*सकल ८५·३, ६७ १,
सक्कर-पय ६०·२ शर्करा-पय
सक्कि ५४·१
सकोल ३४·२
सक्खी ३२८·१ सखी
सखं २४६·१
सख ३२३·४
*सखी १७६·४, १६१·२
सग्गी २२७·३ सगी

सज्जिगे	६६·१	सज गए
*सजीव	१६६·४	
सजुत्त	१०६·१	संयुक्त
सजूपं	२६४·४	
सज्जे	१६१·१, २३३·३	सज्जित हुए
सज्झि	२२६·४	सज कर
सत	२·१, ६६·२, १५१·६	शत
सत्त	१६८·१, ८०३·१, २२६·१, २६६·६, ३२२·३, ३३७·६	सत
सत्तये	२४३·२	शत
सत्ति	१३६·१	शक्ति
सत्तिहु	१३६·१	शक्ति भी
सत्थ	१२५·१, १५१·१, ३२५·४	साथ
सत्थह	१२१·२	साथ
सत्थि	१२२·१	साथ में
सत्थिहुअ	१८६·१	साथी होकर
सत्थै	२७८·५	साथ
सथ्थहि	१६६·२	साथ
सत्रु	२८१·१	शत्रु
सदा	८३·३	सदा
सदाहं	२६२·१	सदा
सद्द	१७७·१, २२२·३, २४०·२ ३११·५, ३३३·५	शब्द
सब्दे	३५·१, २६४·४	शब्दे
*सधन	६४·१, १५३·२	धन सहित
सधर	३०६·५	
सनम्मुख	२७८·६	सम्मुख
सनाह	२०७·१	सन्नाह, कवच
सनाहं	६८·१	
सनि	६७·१	शनि
सपत	१६७·४	
सपन	१२७·२, १४४·१	स्वप्न
सपत्तिय	३२१·१	सम्प्राप्त
सपहु	१६८·२	सौंपा
सपुतउ	६०·४	सम्प्राप्त
सब	१०६·१, ११०·५, २७६·४, ३·४·१	
सब्द	५·१, १०५·२	शब्द
सब्द	११६·१	शब्द
सब्द	३१·३	शब्द
सब्बासु	३३३·४	सभी
सब्बु	३३२·५	सब
सभे	२५०·१	सभी
*समं	२५८·३	साथ
*सम	१६७·२, २४५·१, ३६५·२	से
समग्गये	२४५·१	समग्रे
समप्पन	१४४·२, १४५·१	समर्पण
समझाउ	१०६·२	समझा कर
समज्झ	५२·१	समझ कर
*समस्त	६७·४, ६५·३	
समतेध	१६१·४	
समत्ते	८७·४	समस्त
समेत	२०८·४	सहित
समप्पति	१७०·४	समर्पित करती है
समप्पूं	१२३·२	समर्पित करूँ
समप्पे	२६५·५	समर्पित किया
*समर	१३६·२, ३०५·५, ३०७·४, ३३३·४	
समरत्थ	१५१·१	समर्थ
समरी	३११·२	समर में

समसेर	२०६·३	शमशेर
समानं	२३६·१	समान
*समान	६५·२, ११६·१	
*समादाय	१७६·२	लेकर
*समाधि	२४५·१	
समानु	१२३·१	समान
समाए	१६३·१	
समाह	२०६·३	
*सम्मान	१६·२	
समि	२६०·१	
*समीपं	५३·२, ५६·३	
समीप	२७२·३	
*समीर	७२·२	
समीवं	४३·२	समीप
समुज्झ	१४·१	समझ
समुझावहि	१६२·२	समझते हैं
समुद्द	२०३·१, २३०·२, २४३·१, २८३·४	समुद्र
समुह	६·१, २३१·१	सम्मुख
समुहउ	१४·१	सम्मुख
*समूह	२२६·२	
सम्मूह	२३३·२	समूह
समूहे	२८१·१	
समै	६५·४	समय
समोह	१४३·२	समूह
सय	२८६·४	शत
सयन	८·२	शयन
सयन्न	११६·२	संकेत
सयल	१४१·२, ६६८·२,	शैल
सच्चो	२७८·४	
सस्यो	६·१	सजे

सत्थिअनु	१५२·१	साथी (बहु०)
सत्य	१२७·२	
सरं	६३·१	शर
*सर	२२२·३, २८६·१, ३१६·१	शर
सरइ	३४१·२	
सरग्गि	१३२·३	स्वर्ग
सरण	२७५·५	शरण
सरणागत	२७५·५	शरणागत
सरणाइनि	२८५·२	
सरंद	२६५·३	
सरंत	१६३·३	
सरद	६६·१, १२६·२	शरद
सरद्द	४१·१, २८४·४	शरद
सरद्दहि	७६·४	शरद में
सरन	२४·४	शरण
सरन्नि	४६·१	शरण में
सरव	१७६·२	सर्व
सरसइ	४६·२, ८५·५, ८६·४, ६२·१	सरस्वती
सराल	१६७·१	
शरीर	४२·३	शरीर
*सरोजं	२६४·२	
*सरोज	१७६·१, ४३·२, ३०१·२	
सलख	३३२·६	
सलख्ख	३३७·५	
सलिता	२०३·१	सरिता
सव	१४७·१, २६८·२	सब
सव्व	२७४·१, ३००·१, १०२·२, १५०·१, १८०·२, १६६·३, ७४२·२	सर्व

सुनति	८४·१	सुना
सुनिय	३१८·२	सुन कर
सुनी	२२·१, २०९·४	
सुनै	४२·१	
सुनुद्धि	७३·१	
सुद्धि	३२·३	शुद्धि
सुद्धिमई	३३२·४	
सुपंग	९९·१, ८०·२	
सुपीतं	५६·१	
सुब्यवई	६७·३	
सुभ	२५·३	शुभ
सुभट	१२२·१, १९६·२	
सुभट्ट	२·१	
सुभट्टं	२६५·३	
सुभई	३२·१, ३९·२	स्वभाव
सुभार	३३५·१	
सुभो	४११·५	
सुभ्रीय	१४०·३	शुभ्र
सुम्भ	२७२·३	शुभ
सुम्यो	३३०·३	
सुमंगा	२१४·३	
सुमंडियं	१३२·१	सुमंडितं
*सुमन	१४६·२	
सुमनी	२०९·४	
सुमालय	७२·१	
सुमनु	१२१·२	
सुमेल	३३५·१	
सुरंग	२३·३, ७८·१, १९९·४, २६५·३, २८३·२	
*सुर	१२·१, २५·१, ८९·४, १२२·२, १३१·२, ३४५·३	

सुरचीन्ह	३४४·४	सुरत्ति
सुरत्त	१०५·१,	
सुरत्तउ	३३८·३	सुरति
*सुरति	५·१	
*सुरपति	५६·२	इन्द्र
सुरभंग	१६७·१	स्वरभंग
सुरलोक	९·१, ६३·४, १९८·१	
सुरूपा	६३·१	
* सुराज	१९५	
सुरिसान	११२·२	
सुलज्ज	१७६·४	
सुलच्छिनिय	१९९·३	सुलक्षण
सुवख	१२७·२	
सुवन	१०६·२	पुत्र
सुवये	२६५·१	
*सुवास	१२४·१	
सुवासिनं	१४०·२	
सुवित्तु	१३०·१	
सुह	३३८·४	सुख
सुहर	५७·१, ३२२·५	सुघर
सुहरु	८१·२	सुघर
सुहल्लय	३·४	शोभल
सुहाइ	१९२·४	शोभित होता है
सूँ	१४९·६	से
सू	६१·३	से
सूरवां	२६९·४	शूरमा
सून	२४३·१	शून्य
सूर	९·२, १०·१, १०·२, ९७·१, ९८·१, १२६·१, १४९·६, १५५·४, २५७·१, ३१५·१, ३१७·३, ३१८·१, ३२२·६	

शब्द	संदर्भ	अर्थ
सेखफं	१३४·३	
सेजु	७४·४	सेज
सेतं	२६५·२	श्वेत
सेद	१६७·४	स्वेद
सेन	१००·४, ८५·८, २६०·१, २६२·१, १०३·४	सेना
सेव	३०८·२	सेवा
सेवंतिय	७३·३	सेवा करना
सेस	६८·१, २३५·२, ३३६·४	शेष
†सिहरउ	३२०·६	सेहरा
सै	२७७·४	सो
सों	१६५·१	से
सो	३·६, ८३·४, २६५·४	सौ
सोई	२६४·१	वही
सोचि	१६६·१	सोचकर
सोड़सा	१६·१	षोडशी
सोनंकी	२६६·४	सोलंकी
सोंनि	१७५·४	सोना
सोब	११६·१	
सोभ	३४·१, ३५·१, ६६·१, ७६·१, ११५·१, १७१·१	शोभा
सोभा	३१·१, ६५·१	शोभा
सोभे	२६४·४	शोभित
‡सोम	१६३·२	
सोर	११५·२, २३६·१	
सोवन्न	५४·१, ५८·३	सुवर्ण
सोलह	३२२·६, ३२३·२	
सोह	७८·२, ९१·४	शोभित
सोहए	३६·२, ३६·२	सोहता है

शब्द	संदर्भ	अर्थ
सोहही	४०·२	सोहते हैं
सोहं	५१·१, ५८·१	शोभित
सोहंत	३८·२	शोभंत
सौ	२७६·३	
स्रु	१३४·१	सु
स्रवण	८६·४	श्रवण
स्रवन	४२·१, ४६·३, ३१८·२	श्रवण
स्रुव	२६·२	श्रुत
स्रोन	५५·३, ५६·१, २६३·१	श्रवण
स्रोनित	३०४·४	श्रोणित
स्यामि	१५४·३	श्याम
†स्याह	१३३·४, १७५·४	
*स्वर्ग	१३·४, १७·४	
‡स्वाति	५१·३	
स्वामि	३०७·२, ३२०·६, २७४·५, ३०२·२, २६५·४	
‡स्वामिना	२५३·२	
सामिहि	३०३·२	स्वामी से
‡स्वेद	१६७·१	
हरिसिंघ	२६६·१, ३३७·१	
हरिह	३२·३	
हरो	१४०·३	
हलं	२५·४	
हलि	२३६·२	हला
हल्लए	१७६·१, २३६·३, २४२,१	हिलता है
हल्लति	२८३·४	हिलती है
हल्ले	२५६·२	हिले
हसंत	१६५·२	हँसते हैं

हसि	६'१, १४९'६	हँसकर
हसे	३१७'४	हँसे
*हस्त	१७०'३	
*हस्तेषु	१४७'१	
हस्थ	१८३'२	
हस्यो	३३३'६	हँसे
*हाटक	७० २	सुवर्ण
हाथे	६५'४	
*हार	३१'३, ३०२'४, ३१५'५	
हारि	२५९'३	
हाल	२६३'३	
*हालाहलं	९५'३	हलाहल
*हास	९५'४	
हि	१९०'३	
हिता	२१'२	
हिंदुवाण	२७७'१	हिंदुजन
हिंदुवान	११०'४	हिंदुजन
हिंदू	२७५'५	
*हिम	२८'३	
हिमाउत	२८४'३	हिमवत
हिय	७२'२	हृदय
हिल्ले	२३७'३	
हिल्ले	२३४'३	
हिलोर	१७०'२	हिल्लोल
ही	३४'१, ३६'१, ४०'२, ३१'१	

हीरा	१०५'२	
हीसं	२४८'१	
हुअ	३०२'४	हुआ
हुइ	१५३'१, २७५'६, ३०२'२	
हुंकारो	३११'२	हुंकार किया
हुंति	८३'४, १८१'१	से
हुव	१६७'१, ३१४'१	हुआ
हुवो	४'१	
हूँ	९१'३	मैं
हूवं	२९६'१	हुआ
हेजम	८३'२, ८४'१, ८५'१	
हेत	८४'१	हेतु
हेम	१९'१, ७६'१, ९१'२, ९९'३, २५६'३, २७६'४, १०९'१	स्वर्ण
है	३२'२, ९४'५, १०९'१	
हों	८५'३	
होइ	६०'२, ६४'४, २७५'२, ३०७'२	होता है
होई	७१'४, २७७'६	होता है
होरी	३२७'२	होली

ह

हंकयो	१७५'१	हांका
हंक्क	३१०'१	हाँका

हंसि	३३०·२	
हंसो	३२३·३	
हकारे	१०४·१, २३३·३, २५८·१	ललकारे
हक्क	३२२·१	हाँक दो
हक्कारिउ	१२४ १	हाँक लगाई
‡हज्जारखी	२५४·१	हज़ार
‡हट्ट	७०·१	हटा
हट्टति	७१·१	
हती	२४७·२	मारी
हत्थ	३७·१, ११०·५, १४५·६, १४८·१, १७१·४, २५७·२, २६४·२, ३२४·४	हाथ
हत्थहि	३०३·१, ३३६·३	हाथ से
हत्थही	१७१·१	
हत्थि	१५५·२	हाथी
हत्थिय	१४४·१	हाथी
हत्थी	२६६·१	हाथी
हत्थे	२२७·४	हाथ से
हत्थेन	३१६·१	हाथ से
हत्थै	२२६·४, २७७·४	हाथ से
हथ	१०७·२	हत
हनंत	२०४·३	हनता है

‡हनि	२६८·२	मारकर
हने	३०७ ३	मारे
*हय	५७·१, ८१·१, ३४६·४, १६६·३, २३६·१, २४०·१, २६८·१, २६६ ५, २८०·२, ३०७·२, ३०८·१, ३१६·१	
हयग्गय	७६·३	हय गज
‡हयदल	२५४·२	
‡हयवर	३१३·३	
हरंत	३६·२	
*हर	२६·१, ८३·३, ३०२·४, ३३०·१	
हरखवंत	१८३·१	हर्षित
हरन	१२०·१	हरण
हर-नयन	३३७·२	
हरम्य	३४१·१	हर्म्य
‡हरि	३०·१, १४०·३, २५६·३, २८४·३, २६८·१, ३३६·३	
हरिग्र	१६७·२	हृत
हरिख	३००·१	हर्ष
हरिग	१२·१	हर गया, हर लिया

सहायक साहित्य

१. सम्पादित सस्करण

बीम्स — आदि पर्व (प्रथम १७३ छुद), बिब्लिओथेका इंडिका, न्यू सीरीज, संख्या २६६, भाग १, फैसीक्यूलस १, १८७३

होर्नले — देवगिरि सम्यो से कांगुरा जुद्ध प्रस्ताव तक (दस समय), बिब्लि० इडिका, न्यू सीरीज़, सख्या ३०४, भाग २, फैसीक्यूलस १, १८७४.

श्यामसुंदर दास, मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या इत्यादि — पृथ्वीराज रासो (सम्पूर्ण), काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १९०४–१९१२.

मथुरा प्रसाद दीक्षित — असली पृथ्वीराज रासो, (प्रथम समय), लाहौर, १९३८.

हजारीप्रसाद द्विवेदी नामवर सिह — संक्षिप्त पृथ्वीराज रासो, साहित्य भवन प्रयाग १९५२.

विपिन बिहारी त्रिवेदी — रेवातट, लखनऊ विश्वविद्यालय, १९५३

कविराव मोहन सिंह — पृथ्वीराज रासो, प्रथम भाग (१६ समय), उदयपुर, १९५४.

2. LINGUISTICS

Allen, W. S. *Phonetics in Ancient India,* London, *1953.*

Alsdorf, L. *Apabhramsu Studien, Liepzig, 1937.*

Beames, J. *A Comparative Grammar of the Modern Aryan languages of India,* London, 1875. *Studies in the Grammar of Chand Bardai, JASB, XLII, part 2, 1873*

Bhayani, H. V. *Grammar, Sandes Rasak, SJS 22,* Bombay *1945.*

Chatterji, S. K. *The Origin and Development of Bengali language.* Calcutta, *1942.* *Indo-Aryan and Hindi,* Ahmedabad, *1942.* Varna-Ratnakar, *Introduction, Bibliotheca Indica, 1940.* *A study of the New Indo-Aryan Speech treated in the* Ukti-vyakti Prakaran, *SJS 39, 1953.*

Hoernle, R. *A Comparative Grammar of the Gaudian languages,* London, *1880.*

Katre, S. M *Prakrit Languages* Bombay, *1945,*

Kellog, S. H. *A Grammar of Hindi Language,* London *1938.*

Saksena, Baburam *Evolution of Avadhi,* Allahabad, *1938.*

Sen, Sukumar *Historical Syntax of Middle Indo-Aryan,* Calcutta, *1954.*

Sharma, Dashrath & Ranga, Minaram *The Original Prithwiraj Raso: An Apabhramsa work,* Rajasthan Bharati, *April 1946.*

Tessitori, L. P. *Notes on the Grammar of the Old Western Rajasthani with special reference to Apabhramsa and to Gujrati and Marwari, Ind Ant., 1914-16.*

Ziauddin, M *Mirza Khan's Grammar of Braj Bhakha, Visva Bharati, 1935.*

धीरेन्द्र वर्मा हिंदी भाषा का इतिहास, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद तृतीय सस्करण, १६४६ ;

ब्रजभाषा, हिदुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, १६५४.

३. पृथ्वीराज रासो-सम्बन्धी साहित्य

अगरचंद नाहटा पृथ्वीराज रासो और उनकी हस्तलिखित प्रतियाँ, राजस्थानी, भाग ३, अङ्क २, जनवरी १६४०, राजस्थान में हस्तलिखित ग्रथो की खोज (द्वितीय भाग)

गौरीशंकर हरीचंद ओझा पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, कोषोत्सव स्मारक संग्रह, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १६२८; नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन सस्करण, भाग १, १६२०; वही, भाग ६.

ग्राउज़, एफ० एस० दि पोइम्स ऑव चद बरदाई, जे० ए० एस० बी०, जिल्द ६७, भाग १, १८७८; फ़र्दर नोट्स ऑन प्रिथिराज रायसा,, वही, भाग १, १८६६ ; ट्रांसलेशस फ्रॉम चद, वही ; रिज्वाइडर टु मिस्टर बीम्स, वही, भाग १, १८७६ ; ए मेट्रिकल वर्शन ऑव दि ओपिनिंग स्टैंजाज़ ऑव चद्स प्रिथिराज रासौ वही, जिल्द ४२, भाग १, १८७३; इण्डियन एँटिक्वेरी, जिल्द ३.

जिन विजय मुनि — पुरातन प्रबध सग्रह, सिंघी जैन ग्रंथमाला, १९३५.

टाड, कर्नल — ऐनल्स एण्ड ऐंटोक्विटीज़ ऑव राजस्थान, १८२९; द वाउ ऑव सगोहा; एशियाटिक जर्नल, न्यू सीरीज जिल्द ३५ कनउज खड, जे० ए० एस० बी०, १८३८.

दशरथ शर्मा — पृथ्वीराज रासो की एक प्राचीन प्रति और उसकी प्रामाणिकता, ना० प्र० पत्रिका, १९३९ ; पृथ्वीराज रासो की कथाओं का ऐतिहासिक आधार, राजस्थानी, भाग २, अक २, जनवरी १९४० ; दि एज एण्ड हिस्टारिसिटी ऑव पृथ्वीराज रासो, इण्डियन हिस्टारिकल क्वाटर्ली, जिल्द १६, दिसम्बर १९४० ; वही, जिल्द १८, १९४२, पृथ्वीराज सम्बन्धी कुछ विचार, वीणा, अप्रैल १९४४, संयोगिता, राजस्थान भारती, भाग १, अक २-३, १९४६ , पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता पर प्रो० महमूद खॉ शीरानी के आक्षेप, वही, भाग २, अक १, जुलाई १९४८ ; दिल्ली का अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज तृतीय, इण्डियन कल्चर, १९४४ ; सम्राट पृथ्वीराज चौहान का रानी पद्मावती, मरु भारती, भाग १, अक १, सितम्बर १९५१ ; पृथ्वीराज तृतीय और मुहम्मद बिन साम की मुद्रा, जर्नल ऑव न्यूमिस्मैटिक सोसाइटी ऑव इण्डिया, १९५४,

देवी प्रसाद, मुंशी — पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० पत्रिका, भाग ५, १९०१;

धीरेन्द्र वर्मा — पृथ्वीराज रासो, काशी विद्यापीठ रजत जयंती अभिनंदन ग्रंथ, १९४६

नरोत्तमदास स्वामी — पृथ्वीराज रासो, राजस्थान भारती, भाग १, अंक १, अप्रैल १९४६, पृथ्वीराज रासो की भाषा, वही भाग १, अंक २, १९४६

मथुराप्रसाद दीक्षित	पृथ्वीराज रासो और चद बरदाई, सरस्वती, नवबर १६३४; चद बरदाई और जयानक कवि, सरस्वती, जून १६३५,
माताप्रसाद गुप्त	पृथ्वीराज रासो के तीन पाठो का आकार-मबध, अनुशीलन, वर्ष ७, अक ४, अगस्त १६५५.
मूलराज जैन	पृथ्वीराज रासो की विविध वाचनाएँ, प्रेमी अभिनदन ग्रन्थ, अक्तूबर १६४६
मॉरिसन, हर्बर्ट	सम अकाउट आव दि जीनिओलार्जीज इन दि पृथ्वीराज विजय, वियना ओरिएण्टल जर्नल, भाग ७, १८६३
मोतीलाल मेनारिया	राजस्थानी भाषा और साहित्य, १६४० राजस्थान का पिगल साहित्य, १६५२ राजस्थान मे हस्तलिखित ग्रन्थो की खोज, (प्रथम भाग,
मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या	पृथ्वीराज रासो की प्रथम सरक्षा, १८८८
विपिन बिहारी त्रिवेदी	चद वरदायी और उनका काव्य, हिदुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, १६५२; रेवातट (पृथ्वीराज रासो), लखनऊ विश्वविद्यालय, १६५३
बीम्स, जान	दि नाइन्टीन्थ बुक आव दि जेस्टेस ऑव पिथीराय बाइ चंद वरदाई, एनटाइटिल्ड 'दि मैरेज विद पद्मावती' लिटरली ट्रांसलेटेड फ्रॉम ओल्ड हिंदी, जे. ए. एस बी, जिल्द ३८, भाग १, १८६६, रिप्लाइ टु मि० ग्राउज़, वही; ट्रांसलेसश ऑव सेलेक्टेड पोर्शंस ऑव बुक फ़र्स्ट ऑव चंद बरदाई' ज एपिक, वही, जिल्द ४१, १८७२; लिस्ट आव बुक्स कटेंड इन चदज़ पोएम, दि पृथ्वीराज रासो, जे० ए० एस०, १८७२.

बूलर — प्रोसीडिंग्ज़, जे ए. एस बी, दिसम्बर जनवरी १८६३,

रामनारायण दूगड़ — पृथ्वीराज चरित्र, १८६६.

श्यामलदास, कविराज — दि एन्टीक्विटी ऑथेंटीसिटी एंड जेनुइननेस ऑव दि एपिक काल्ड दि प्रिथीराज रासो, ऐज कामनली ऐस्क्राइब्ड टु चंद बरदाई, जे ए. एस बी., जिल्द ५५, भाग १, १८८६; पृथ्वीराज रहस्य की नवीनता।

श्यामसुंदर दास — पृथ्वीराज रासो, ना. प्र० पत्रिका, वर्ष ४५, अंक ४, १६४०

हजारी प्रसाद द्विवेदी — हिंदी साहित्य का आदि काल, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, १६५२,

होर्नले, रूडोल्फ — ट्रांसलेशन्स फ्राम चंद (रेवातट सम्यो २७, अनंगपाल सम्यो २८), बिब्लिओथेका इंडिका, संख्या ४५२, भाग २, फैसीक्यूलस १, १८८१.

४. विविध

गार्सां द तासी — हिंदुई साहित्य का इतिहास (अनुवाद), अनु० डा. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, हिंदुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, १६५३

ग्रियर्सन, जार्ज अब्राहम — माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑव हिंदुस्तान, कलकत्ता १८८०

चन्द्रधर शर्मा गुलेरी — पुरानी हिन्दी, नवीन संस्करण, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १६४८.

चन्द्रमोहन घोष — प्राकृत-पैंगलम्, बिब्लिओथेका इंडिका, १६०२

तेसितोरी, एल० पी० — पुरानी राजस्थानी (हिंदी अनुवाद), अनु० नामवर सिंह, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १६५५

नामवर सिंह	हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग, साहित्य भवन, प्रयाग, नवीन संस्करण, १९५२
परशुराम लक्ष्मण वैद्य	हेमचन्द्र-प्राकृत व्याकरण,पूना, १९३६
रामचन्द्र शुक्ल	हिन्दी साहित्य का इतिहास, पाँचवाँ संस्करण, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १९४८.
श्यामसुंदर दास	हिंदी साहित्य, इण्डियन प्रेस इलाहाबाद, १९३०
सरयू प्रसाद अग्रवाल	अकबरी दरबार के हिंदी कवि, लखनऊ विश्व-विद्यालय, १९५०.
सूर्यकरण पारीक, रामसिंह तथा नरोत्तम दास स्वामी	ढोला मारू रा दूहा, काशी नागरी प्रचारिणी सभा १९३४.
हरगोविंद दास सेठ	पाइय सद्द महण्णवो, कलकत्ता १९२३